विषाक्त प्रेम.

हिन्दी-पुस्तक-मालाका सातवां पुष्प

विषाक्त प्रेम

(सामाजिक उपन्यास)

लेखक—

श्रीचारुचन्द्र बन्दोपाध्याय।

अनुवादक—

पं० छबिनाथ पाण्डेय बी० ए०, एल० एल० बी०

प्रकाशक—

हिन्दी पुस्तक भवन,

नं० १८१, हरिसन रोड, कलकत्ता।

प्रथम बार २०००] आश्विन १९८० [मूल्य १।) रुपया

निवेदन.

हमारी हिन्दी-पुस्तक-मालामें अबतक राजनीतिक, धार्म्मिक और आलोचनात्मक ग्रन्थ निकल चुके हैं। आज हम अपने पाठकोंके मनोरञ्जनार्थ एक सामाजिक उपन्यास उनकी भेंट करते हैं। इस उपन्यासके मूल लेखक हैं—श्रीयुत चारुचन्द्र बन्दोपाध्याय और मूल पुस्तकका नाम है—"हेर फेर"। किन्तु "हेर फेर" नामसे पुस्तकका विषय स्पष्ट रूपसे व्यक्त नहीं होता था इसलिये अनुवादक महोदयने इसका नाम "विषाक्त प्रेम" रखना उचित समझा है। इस पुस्तकमें मनुष्यकी भली और बुरी दोनों ही तरहकी वृत्तियोंका चित्रण किया गया है। इसमें लेखकको कहांतक सफलता प्राप्त हुई है इसे पाठकवृन्द ही भली प्रकार जान सकेंगे। हम केवल इतना ही बतला देना चाहते हैं कि इस उपन्यासमें यह भली प्रकार दिखला दिया गया है कि मनुष्यकी डाह उसे कितना नीचे गिरा देती है। उसे भले बुरेका कुछ भी विचार नहीं रहता, वह अपने प्रतिद्वन्द्वीको नीचा दिखानेके लिये घृणितसे भी घृणित उपायोंके अवलम्बन करनेपर उतारू हो जाता है। उसे न मित्रोंकी बात अच्छी लगती है और न उसका अन्तःकरण ही उसे अपनी भूल स्वीकार करनेके लिये विवश कर सकता है। वह अपनी प्रतिहिंसा-

वृत्तिको चरितार्थ करनेके लिये पागल हो जाता है। यद्यपि उपन्यासका मुख्य उद्देश्य विषाक्त प्रेमका वर्णन करना ही है किन्तु इसमें मनुष्यकी अन्य वृत्तियोंका भी चित्रण कुछ कम सुन्दरतासे नहीं किया गया है। सुनयनी देवीका निष्पक्ष मातृ-प्रेम, सन्ध्याका अपनी पतिभक्तिको अन्ततक निबाहते हुए भी निष्कपट भगिनी-प्रेम और विद्युतका पवित्र और निष्कलंक सुहृद-प्रेम दिखलानेका ग्रन्थकारने अच्छा उद्योग किया है।

यद्यपि हमारा विचार था कि हमारी मालाका छठा पुष्प—"लाजपत-महिमा" अर्थात् देशपूज्य लाला लाजपतरायजीकी बृहत् जीवनी—इस पुस्तकके पहले ही प्रकाशित हो जाता किन्तु कुछ अनिवार्य कारणोंसे उसे बीचमें ही रोक देना पड़ा। किन्तु आशा है कि अब शीघ्र ही उसे पाठकोंके करकमलोंमें देनेका सौभाग्य प्राप्त होगा।

विनीत—
प्रकाशक

(एक)

परिचय ।

आज अर्थशास्त्रके प्रोफेसर नहीं आये थे। तृतीय वर्ष (बी० ए०) के छात्र छोटी छोटी टोली बनाकर दर्जेमें बैठे हंसी मजाक करते करते शोरगुल करने लगे। इसी समय एक अन्य अध्यापक सहसा क्लासमें आ पड़े। उन्हें देखकर शोरगुल एक दम बन्द हो गया और लड़के अपनी अपनी जगहपर आकर बैठ गये। उन लोगोंने समझा कि शायद इस घण्टेमें आज येही पढ़ावेंगे। पर अध्यापक महाशय दरवाजेपरसे ही बोले, बराय मिहरबानी आप लोग शोरगुल कम करिये। बगलके कमरेमें दूसरा दर्जा है, पढ़ानेमें गोलमाल होता है।

इतना कहकर अध्यापक महाशय चले गये। फिर वही रफ्तार शुरू हो गई।

कक्षामें रजत नामका एक धनीका लड़का पढ़ता था। उसका रहन सहन और वेषभूषा देखकर ही उसकी समृद्धिका

परिचय मिल जाता था। रजत इस तरह सजधजकर कालेज आता था मानों कोई ससुरार जाता हो। इसकी चमक दमकके कारण क्लासके लड़कोंने इसे "बाबू" की उपाधि दी थी। इसके अतिरिक्त रजतमें और भी कई गुण थे जिनके कारण वह अपने साथियोंमें विशेष आदर पाता था। रजत छल कपटसे परे था, उसका मधुर भाषण सबको मोह लेता था, गर्वका उसमें लेश तक नहीं था, पढ़ने लिखनेमें भी वह तेज था। एक कारण और था जिसने रजतको अपने सहपाठियोंमें और भी प्रिय बना दिया था। रजत कविता करना और गल्प लिखना जानता था। प्रतिदिन वह कुछ न कुछ लिखकर कालेजमें लाता और छात्रोंकी उत्सुक मण्डलीमें अपनी रचना पढ़कर सुनाता। कभी किसी अध्यापककी लिथाड है तो कभी किसी छात्रपर बौछार है। विवाह शादीके अवसरोंपर* भी मित्र मण्डलीके उपहार-कवितामें रजतकी ही कवित्व शक्ति काम करती थी। और जिस दिनसे रजतकी कवितायें बंगलाके प्रसिद्ध पत्र "संग्रह" में प्रतिमास निकलने लगीं, रजतका सम्मान और भी बढ़ गया।

क्लासमें अध्यापक नहीं थे। लड़कोंको पूरी स्वतन्त्रता थी। पहले तो रजतकी गल्प सुनी गयी। एक क्षण शान्ति रही।

---

* बंगालमें यह प्रथा प्रचलित है कि शादीके अवसरोंपर 'वर'के मित्र अनेक तरहकी हास्यरस प्रधान कविता लिख लिख-कर 'वर' के पास भेजते हैं तथा उनके मित्रोंमें वितरण करते हैं। यह प्रथा केवल बंगालमें प्रचलित है।

रजत किसी अन्य आमोदकी तलाशमें लगा। इधर उधर दृष्टि दौड़ाकर उसने देखा कि पीछेकी बेंचपर कोई छात्र आरामसे सो रहा है। उसे यों पड़ा देखकर रजतने हंसकर कहा, "कौन इतने आनन्दसे निद्रादेवीकी उपासना कर रहा है।"

खगेनने उत्तर दिया—पूर्ण।

रजतने हंसकर कहा—आज सोमवार है न? तभी। शनिवारको ससुरालकी सैर की है। ज़रा सूंघनी दो तो भाई।

इस मजाकमें सबको आनन्द मिलने लगा। धीरेसे किसीने शीशी निकालकर † रजतके हाथमें दे दी। रजत शीशी लेकर दबे पांव पूर्णके पास गया और कागजके टुकड़ेपर शीशीमेंसे थोड़ी सूंघनी निकालकर पूर्णके नाकके पास रखकर अन्यत्र जा बैठा और एकाग्र चित्त होकर पुस्तक पढ़ने लगा मानों कुछ जानता ही नहीं। पूर्णने जो सांस खींचा तो सूंघनीका कुछ हिस्सा भी नाकमें घुस गया। छींकता वह उठ पड़ा और छींकते छींकते व्याकुल हो उठा। कक्षाके सभी लड़के इसपर ठट्ठा मारकर हंसने लगे।

इस विजयके गर्वसे प्रफुल्ल रजतकी दृष्टि कक्षाके दूसरे कोनेमें पड़ी। उसने देखा कि क्लासके सभी लड़के तो उसके मजाकमें योग देकर मजा लूट रहे हैं पर एक छात्र एक कोनेमें बैठा एक चित्त कुछ लिख रहा है और उसे इस शोरगुलका कुछ ध्यान

---

† बंगालमें सूंघनीकी भी बहुत अधिक चाल है। अधिकांश छात्र सूंघनी सूंघते पाये जायंगे।

नहीं । रजतके ही समान यह छात्र भी किसीसे अपरिचित नहीं था। लड़के खूब जानते थे। वह प्रतिदिन नङ्गे पांव स्कूल आता था, उसके वदनपर एक भी सबूत कपड़ा नहीं था, पर जो कुछ था साफ सुथरा था, वर्षा या धूपसे शरीरकी रक्षाके लिये उसके पास छाता तक नहीं था। उसके रहनसहनमें यौवनको चंचलता नहीं थी। उसका तेजपूर्ण शरीर दुःखकी कठिन यातनासे विवर्ण हो गया था। उसका कृश गात्र देखनेसे ही प्रतीत होता था कि यह अतिशय दरिद्र है। पर उसके मुखपर श्री थी, नेत्र ज्योतिपूर्ण थे, उसका आचरण अति पुनीत था। वह बहुत कम बोलता था पर उसकी बातोंमें दीनता नहीं थी। दीनतामें भी उसने दरिद्रताका साम्राज्य नहीं होने दिया था। किसीने कभी भी उसे मैला कपड़ा पहने नहीं देखा। पढ़ने लिखनेमें भी वह बड़ा ही तेज था। एफ० ए० परीक्षामें प्रथम उत्तीर्ण होकर उसे पारितोषिक मिलता था। इस लड़केका नाम शिशिर था।

शिशिर कक्षाके लड़कोंसे बहुत मिलता जुलता नहीं था। बात-चीत भी कम करता था। वह रजतसे सदा अपनेको बचाकर रहता था। रजत एकदम शिशिरके विपरीत था। यदि रजत समृद्धिका मूर्त्तिमान स्वरूप था तो शिशिर दरिद्रताकी शुभ्र प्रतिमा।

कक्षाके सभी लड़के रजतका आदर सम्मान करते थे, रजत सबके प्रिय थे। यदि कोई निरपेक्ष था तो केवल शिशिर, रजत भी शिशिरका विशेष ख्याल नहीं रखता था।

: .·.

इस हंसी मजाकमें प्रायः क्लासके सभी लड़के शामिल थे। रजतके चुलबुलेपनसे सभी आनन्दित हो रहे थे, पर शिशिरको इसकी खबर तक न थी, उसने इसकी परवा भी न की। यह रजतको असह्य हो गया। उसने अब शिशिरपर आक्रमण किया। "उधर देखिये, इन्होंको तो इस साल प्रथम पारितोषिक लेना है।" इतनी बौछार छोड़ना था कि रजतके सभी साथियोंका ध्यान शिशिरकी ओर गया और शिशिरकी तरफ लक्ष्य करके सभी ठहाका मारकर हंस पड़े।

बीचमें ही सबको रोककर कालिदास गम्भीर होकर बोला—देखो, उसे कोई तंग मत करो। उसके पास किताबें नहीं हैं। न ही वह खरीद सकता है। दूसरेकी किताबोंसे नकल करके पढ़ता है।

दरिद्रताके इस प्रेमीपर कालिदासको बड़ी तर्स थी। उसकी बातें सुनकर सब चुप हो गये। रजतको बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने शिशिरकी ओर देखकर कालिदाससे पूछा—क्या सभी पुस्तकोंकी वह इसी तरह नकल कर लेंगे।

कालिदासने मन्दस्वरमें उत्तर दिया—हां।

रजत—आओ, हम सब चन्दा करके उसके लिये किताबें खरीद दें।

कालिदास—वह शिक्षा दान क्योंकर लेने लगा। हम लोगोंके साथ रहता है। हम लोग उससे मकान भाड़ा नहीं लेना चाहते। जिस घरमें वह रहता है उसमें घोर अन्धकार है। रसोई

और पखानेके बीचमें वह कमरा है, उसको कोई केरायेपर लेना पसन्द नहीं करता। तिसपर भी भाड़ा दिये विना रहना नहीं चाहता।

कालिदासकी बात सुनकर खगेन्द्र बोल उठा—बछियाके ताऊको अकिल ही कितनी होगी। भाड़ा ही देना है तो अच्छासा कमरा क्यों नहीं ले लेता।

कालिदास—आप तो बुद्धिके अवतार ही ठहरे। अच्छा कमरा लेनेपर अधिक भाड़ा देना होगा! बिचारा गरीब कहां पावेगा। पन्द्रह रुपया मासिक वृत्ति पाता है। शामको ट्यूशन कर आठ रुपया कमा लेता है। उसमेंसे दस रुपया महीना किसी बनमाली नामके आदमीके पास मनी आर्डरसे भेज देता है। जो तेरह रुपये बच जाते हैं उसीसे गुजर करता है।

खगेन—क्या उसे और कोई आत्मीय नहीं है?

कालिदास—यह तो मालूम नहीं। न तो वह किसीसे मिलने जुलने जाता है न कोई उसके पास आता है। कभी चिट्ठी पत्री भी नहीं आती। बस मासमें एक बार वही बनमालीदासकी दस्तखती मनी आर्डरकी रसीद आती है। शिशिर ब्राह्मण है। इससे बनमालीदास उसका आत्मीय भी नहीं हो सकता।

एक बारगी कक्षामें सन्नाटा छा गया। इस दुःखमयी कथासे सबका हृदय द्रवित हो गया। एक तो बिचारा नितान्त दरिद्र दूसरे बन्धुहीन।

कक्षामें हठात् सन्नाटा छा गया। शिशिरने किताबसे दृष्टि

हटाकर सामनेकी तरफ देखा। उसने समझा कि शायद कोई अध्यापक आये हैं। उसे कोई अध्यापक दिखाई न दिये बल्कि सभी लड़के विस्मयके साथ उसीकी तरफ देख रहे थे। शिशिरने इसपर कुछ भी ध्यान नहीं दिया और फिर सिर नीचा कर अपने काममें लग गया।

रजत धीरे धीरे शिशिरकी ओर बढ़ा यह देखकर कालिदासने उसके मार्गमें खड़े होकर कहा—"रजत, इसके साथ हंसी मजाक ठीक नहीं।"

रजतने कालिदासके कन्धेपर हाथ रखकर कहा—मैं इतना विचारहीन नहीं हूं। रजत आगे बढ़ा। सब कोई चकित नेत्रसे उसकी तरफ देख रहे थे। लोग इसी बातकी चिन्तामें पड़े थे कि रजत शिशिरके पास जाकर क्या करेगा।

रजत शिशिरके सामने जाकर खड़ा हो गया। शिशिरने सिर ऊपर उठाया, उसे देखा, हंसकर पूछा,—क्या देख रहे हो, भाई।

रजत शिशिरके कन्धेपर हाथ रखकर बोला—हम लोग सहपाठी हैं, हम लोग भाई भाई हैं, तुम हमारे भाई, हम तुम्हारे.... .

इतना कहते कहते रजतका गला भर गया। वह अनिमेष दृष्टिसे शिशिरके मुखकी ओर देखने लगा।

शिशिरने कलम रख दी, उठ खड़ा हुआ। रजतके सुकोमल करोंको अपने कर्कश करोंमें लेता हुआ बोला—रजत मेरे बन्धु।

यद्यपि रजत सदृश धनीके लिये शिशिर समान गरीबका बन्धु अधिक दिन तक रहना कठिन है।

रजत विना उत्तर दिये ही शिशिरके पास बैठ गया और टेबुलसे कलम उठाकर बोला—तुम बहुत देरसे लिख रहे हो तुम्हारे हाथ थक गये होंगे, अब मैं थोड़ी नकल कर दूंगा। मैं बहुत खराब नहीं लिखता। तुम्हें पढ़नेमें कष्ट नहीं होगा।

शिशिर व्यस्त होकर बोला—आपको तकलीफ उठानेकी कोई जरूरत नहीं है। मैं .....

रजत शिशिरको बीचमें ही रोककर बोला—क्या यही भाई भाईका व्यवहार है।

शिशिर कुछ शर्मा गया, बोला—तुम क्यों व्यर्थ प्रयास करोगे। मुझे तो तमाम लिखना है।

रजतने जोर देकर कहा—इसीसे तो मैं भी तुम्हारा हाथ बटाना चाहता हूं।

शिशिर व्यस्त होकर बोला—नहीं भाई सबको कष्ट देनेसे क्या लाभ ?

रजत बात टालनेके अभिप्रायसे बोला—देखो मेरा लिखा पढ़ सकते हो कि नहीं।

शिशिर—तुम्हारे हरफ तो बड़े सुन्दर बनते हैं।

रजत कुछ उत्तर न देकर लिखने लगा। शिशिर अजीब द्विविधामें पड़ गया। न रोकही सकाता था न लिखनेको ही कह सकता था। लाचार उसीके पास चुपचाप बैठ गया।

: .:

हठात् रजत लिखना बन्द कर बोल उठा—मैं भी कैसा बेवकूफ । व्यर्थके लिये इतना प्रयास उठाया जा रहा है। भाई शिशिर मेरे पास सभी पुस्तकोंकी दो प्रतियां हैं। एक तो मैं खरीद कर लेगया था दूसरी मुनीबजी खरीद लाये थे। दूकानदारने उन्हें फेरा नहीं। अतः वे पड़ी हैं। क्या तुम उनका उपयोग नहीं कर सकते ?

रजतकी बातें सुनकर शिशिरका चेहरा लाल हो गया। उसने रूखे स्वरसे कहा—नहीं भाई मैं तुम्हारी किताबोंका प्रयोग नहीं कर सकता।

रजत हंसकर बोला—मैं तुम्हें लेनेके लिये तो कहता नहीं हूं। जिस तरह तुम दूसरोंकी पुस्तकें लेकर नकल करते हो उसी तरह मेरी पुस्तक लेकर पढ़ना। काम हो जानेपर मेरी पुस्तकें लौटा देना।

शिशिर उदास मन बोल उठा—नहीं भाई मेरे लिये दूसरी प्रतियां खरीदना......

शिशिरको समाप्त करते न करते उसकी बातको काटकर रजत बीचमें ही बोल उठा—खरीदनेकी बात कहां हैं। खरीदी तो गई हैं। कालेज बन्द होनेपर मेरे साथ घर चलो। यदि आलमारीमें पुस्तकोंकी दो प्रतियां न मिले तो मत लेना।

रजतकी इस निःस्वार्थ उदारतापर शिशिर मुग्ध हो गया। उससे "नहीं" करते नहीं बना। वह चुप हो गया।

उठते उठते रजतने कहा—पक्का रहा कि छुट्टीके बाद मेरे

साथ घर चलोगे। शिशिर मन्त्रमुग्धकी तरह रजतकी तरफ ताकता रह गया।

कालिदास, हेम, पूर्ण और खगेन रजतकी इस तेजस्विताको देखकर मनही मन उसकी प्रशंसा करने लगे। जिसने इस दरिद्र तेजस्वीके मनको इतनी सरलतासे अपने वशमें कर लिया उसे साधारण आदमी नहीं कहना चाहिये।

शिशिरके पाससे उठकर रजत अपने अन्य मित्रोंके पास न आकर सीधा बाहर चला गया, कालेजके पास ही एक किताबकी दूकान थी। रजत उसी दूकानपर गया, कोर्सकी पुस्तकोंकी एक एक प्रति खरीदकर घर भेज दिया और अपने मुनीबको पुरजा लिखा दिया कि इन पुस्तकोंको मेरी आलमारीमें सजाकर रख देना।

इस कामको समाप्त कर रजत जिस समय कक्षामें लौटा दूसरा घण्टा बज चुका था। अध्यापक महोदय पढ़ा रहे थे। इससे किसीको उससे पूछनेका अवसर न रहा कि किस मोहनी मन्त्रसे उसने शिशिरको अपने वशमें कर लिया और इतनी देर क्या करता रहा।

(दो)

मिलन ।

कहीं छुट्टी होते ही शिशिर भाग न जाय, इससे रजत पहलेसे ही उसके पास जा डटा। फाटकपर रजतकी गाड़ी खड़ी थी। पास जाकर रजतने शिशिरका हाथ पकड़कर कहा—चलो गाड़ीमें बैठो।

शिशिर उदास मन बोला—आज नहीं भाई, और कभी चलेंगे।

रजत हंसकर बोला—अच्छा, चलो आज तुम्हारे घर चलें। वहां तो ले चलोगे?

शिशिर शर्माकर बोला—वह तो तुम्हारा ही घर है।

रजत—गाड़ीके भीतर तो चलो। नहीं तो हम चलेंगे कैसे?

लाचार शिशिर गाड़ीमें जाकर सामनेकी गद्दीपर बैठ गया। रजतने जबर्दस्ती उसे उठाकर अपनी बगलमें बैठाया और उसके बायें आप बैठकर बोला हममेंसे कोई भी इतना मोटा नहीं है कि दोनों एकही तरफ आरामसे न बैठ सकें।

शिशिर—(हंसकर) हमलोग हरिहर मूर्त्ति हो गये।

रजत—(हंसकर) धीरे धीरे हम लोगोंकी आत्मा भी हरिहरवत हो जायगी।

गाड़ी चोरबगानमें आकर एक पुराने मकानके सामने रु गई। दोनों मित्र उतरकर मकानके भीतर गये। यही शिशिरका निवासस्थान था। नीचेके तल्लेमें घोर अन्धकार था। सीड़के मारे नोने लग गये थे। बद्बूसे नाक फटा जाता था। ज्यों त्यों करके कमरेमें प्रविष्ट हुए। कमरेकी दशा देखकर रजत स्तम्भित हो गया। हे भगवान, क्या विद्याका इतना अधिक मूल्य है! क्या इतनी यातना सहकर भी मनुष्य पढ़ना चाहता है! क्या यह कोठरी मनुष्यके रहने लायक है! एक ओर पखानेकी बद्बू और दूसरी ओर रसोई घरका धूंआ, यह तो नरकसा हो रहा है। इसमें कैसे मनुष्य जीता रहता है!

रजत कमरेमें खड़ा इसी तहरकी कल्पना कर रहा था। उसकी बुद्धि चकरा गई थी। इतनेमें शिशिरने कहा—भाई रजत, तुम इस कमरेमें देरतक न रहो, चलो कालिदासके कमरेमें चलें।

रजत—मैं कालिदासके यहां तो आया नहीं हूं फिर उसके कमरेमें क्यों जाऊं।

शिशिर—यहां बैठनेमें तुम्हें कष्ट होगा। इसीसे मैंने कहा था।

रजत—(हंसकर) किसीके आनेका समय है क्या कि मुझे निकाल बाहर करनेका बहाना ढूंढ रहे हो।

शिशिर—(हंसकर) भला इस नरककुण्डमें कौन अप्सरा आवेगी।

रजत—शिशिर, जिस घरमें तुम प्रतिदिन रहते हो क्या उसमें मैं घड़ी दो घड़ी भी नहीं रह सकता । यह सब बात जाने दो । मुझे जोरोंकी भूख लगी है, पेट कां कां कर रहा है, कुछ खानेको दो ।

रजतकी इस बेतकल्लुफीसे शिशिरका चेहरा मारे खुशीके दमक उठा । उसने प्रसन्न होकर पूछा क्या मंगावें ।

रजत—कुछ भी मंगावो ।

शिशिर मारे खुशीके फूला न समाया, नौकरको बुलाया, चार आना पैसा दिया, जलपान लानेको कहा । रजतसे बोला, भाई रजत थोड़ी देर तुम अकेले बैठो मैं कालिदासके यहांसे एक प्याला चाय बना लाऊं । मेरे पास तो चाय बनानेका कोई सरंजाम नहीं है ।

रजत—कोई जरूरत नहीं, मुझे चाय पीनेकी बहुत आदत नहीं । इतनेमें नौकर जलपान लाया, रजत खाने लगा । देखा कि शिशिर ढक ढक एक ग्लास खाली मुंह पानी पी गया । रजत सोचने लगा—हे ईश्वर ! दरिद्रता भी क्या बुरी चीज है । मनुष्य खाली पानी पीकर पेटकी ज्वाला बुझाता है । सामनेका खाना जहर हो गया, इच्छा हुई कि शिशिरको भी साथ ले लें पर शायद इसमें वह अपना अपमान समझे इसीसे साहस न कर सका ।

जलपान कर रुमालसे मुंह पोंछते पोंछते रजतने कहा—खस्ता बड़ा ही मुलायम और दानेदार था । अब आने दो फिर कभी आकर खाऊंगा ।

शिशिर—तुम्हारा ही घर है।

इतना कहकर रजत घरसे बाहर होने लगा। हठात् उसकी दृष्टि शिशिरकी चारपाईपर पड़ी। उसपर "काम्रेड" नामकी एक पुस्तक पड़ी थी। रजतने उस पुस्तकको उठाकर कहा—मैं कई दिनसे इस पुस्तककी तलाशमें हूं। किसी दूकानदारके पास नहीं है पढ़ लेनेपर इसे मुझे देना।

शिशिर—मैं इसे पढ़ चुका हूं। लो, आजकी मैत्रीकी यादमें यही उपहार रूपमें तुम्हें समर्पित करता हूं।

इतना कहकर शिशिरने वह पुस्तक रजतको दे दी। रजत पुस्तक लेकर हंसता घरसे बाहर हुआ। शिशिर भी पहुंचानेके लिये गाड़ी तक गया।

पादानपर एक पांव रखकर रजतने कहा—चलो शिशिर तुम भी मेरे घर चलो।

शिशिरने उदास होकर कहा—सन्ध्याके बाद मुझे पढ़ाने जाना पड़ता है।

रजत—अभी सन्ध्या होनेमें बहुत देरी है। मैं तुम्हें पहुंचा दूंगा।

इतना कहकर रजतने हाथ पकड़कर शिशिरको गाड़ीमें खींच लिया। शिशिर कुछ बोल न सका। इस गरीबके घर जाकर जलपान कर पुस्तकका उपहार ग्रहण कर रजतने उसके हृदयपर विजय पा ली थी।

———

(तीन)

घनिष्ठता

रजतके घरमें पैर रखते ही शिशिरको अपनी दरिद्रताका सच्चा चित्र प्रगट होने लगा। रजतका मकान आनन्द-भवन था। विलासिता देवीने मानों उसे अपने रहनेके लिये बनाया था। बारह बीघेका बाग हरेभरे फूलपत्तोंसे ढका था। कहीं मनोहर क्यारियां कटी हैं, कहीं बेल बूटे कटे हैं, कहीं जानवरोंकी शकलकी बनावट हैं, कहीं स्वागतका मनोहर शब्द कटा है। दूबका फर्श मखमलको मात कर रहा है। रङ्ग विरङ्गे देशी तथा विलायती फूल खिल खिलकर अपनी सुन्दरताको दिखलाकर दर्शकोंको फंसानेकी फिक्रमें पड़े हैं। बीचमें बङ्गलेकी कोठी है। नीचेसे ऊपरतक तिमजिला मकान बिजलीसे सजा है। सङ्गमर्मरके फर्श अलग बहार दे रहे हैं।

रजत शिशिरको लिये कमरेमें पहुंचा। नौकर चट्टी सामने रखकर जूता खोलनेके लिये हाथ बढ़ाना ही चाहता था कि आंखके इशारेसे रजतने उसे मना कर दिया। शिशिर इसे न ताड़ सका। जूता खोलते खोलते रजतने कहा —देखो आलमारीमें प्रत्येक किताबकी दो दो प्रतियां हैं कि नहीं।

शिशिरने देखा कि वास्तवमें प्रत्येक पुस्तककी दो दो प्रतियां मौजूद हैं।

रजत—आखिर यहां पड़ी पड़ी सड़ ही न रही हैं। तुम ले जावोगे तो सार्थक हो जायंगी।

शिशिर चुप रहा।

रजत—चलो, ऊपर चलें।

शिशिर—आज छोड़ दो। हमें पढ़ाने जाना है।

रजत—अभी तो सन्ध्या होनेमें बड़ी देर है। चलो जरा ऊपर चलकर गप्प शप्प लडावें। इतना कहकर रजत उठ खड़ा हुआ और शिशिरका हाथ पकड़कर आगे बढ़ा।

शिशिरने देखा रजत नङ्गे पैर जा रहा है। उसने सोचा कि शायद मुझे नङ्गे पैर देखकर रजत मारे सङ्कोचके जूता नहीं पहन रहा है। उसने कहा—भाई रजत चट्टी तो पहन लो।

रजतने बहाना करके कहा—घरमें प्रायः नङ्गे पैर ही रहता हूं।

शिशिरने समझा रजत ठीक कह रहा है। सङ्गमर्मरपर जूता पहनकर चलना अपनी हंसी कराना है।

शिशिरको लिये रजत जनानखानेमें पहुंचा। शिशिरको स्वप्नमें भी इस बातकी संभावना न थी कि रजत उसे जनानखानेमें ले जायगा। इससे उसे नाहीं नुकर करनेका भी अवसर न मिला। घरके अन्दर पहुंचकर शिशिरने देखा कि सामने पीढ़ेपर बैठी एक सौम्य मूर्त्ति विधवा स्त्री स्टोवपर पूरी काढ़ रही है और उसीके पास अनतिवयस्का, अति लावण्यमयी

एक चन्द्रवदनी बेल रही है। रजतको नङ्गे पैर देखकर तरुणीको इतना आश्चर्य हुआ कि वह घूंघट काढ़ना भी भूल गई। शिशिरने देखा कि तरुणीके ललाटपर एक विचित्र ज्योति देदीप्यमान है। स्त्रियोंको देखकर शिशिर ठिठक गया। उसका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचते खींचते रजतने हंसकर कहा—यहां मेरी माता और पत्नीके अतिरिक्त और कोई नहीं है, इससे आनेमें कोई सङ्कोच न करो।

रजतकी बोली सुनकर युवतीने ऊपर सिर उठाया, देखा कि पतिदेवके साथ एक अपरिचित व्यक्ति खड़ा है, लज्जाके मारे सिर नीचा कर लिया, लांबा घूंघट काढ़ लिया। रजतकी माताने भी सिरका कपड़ा सम्हाल लिया।

रजतने अपनी मासे कहा—ये मेरे मित्र हैं। हम दोनों साथ पढ़ते हैं। इनका नाम शिशिर है।

रजतकी माता सुनयनीने शिशिरको आंख भरकर देखा। शिशिरकी दीन दशापर सुनयनीका कोमल हृदय करुणासे भर गया। उसने पुत्र-वात्सल्यसे कहा—आओ बेटा, यहां बैठो, बहु, शिशिरके बैठनेके लिये पीढ़ा दो।

बहू उठकर आसन लाने चली गई। शिशिर सुनयनीको प्रणाम कर उसीके पास फर्शपर बैठते बैठते बोला—मा, इतनी साफ फर्शपर भी आसनकी जरूरत!

रजतने हंसते हंसते कहा—पर सन्ध्या (यही युवतीका नाम था) को तो शिशिरकी खातिरदारी करना है। बिचारी आसन लिये जगह ढूंढ़ रही है।

संध्या शर्माकर दालानमें चली गई, आसनको किनारे रख दिया और पतिदेवको लक्ष्य कर भीषण भ्रूकुटि कटाक्ष किया।

सुनयनी—(शिशिरके प्रति) रजत बहूपर सदा बोली बोला करता है और उसे चिढ़ाया करता है।

रजत—(हंसकर) देखा न शिशिर माका पक्षपात। बहूपर इतना स्नेह कि पुत्रका ख्याल ही नहीं।

सुनयनी--(हंसकर शिशिरके प्रति) इसको मैं स्वीकार करती हूं कि बहूपर मेरी विशेष ममता है।

सन्ध्याका चेहरा खुशीसे खिल उठा। धीमी आवाजसे कहा—खूब हुआ कैसा उत्तर मिला।

शिशिरके रग रगसे सुनयनीके प्रति भक्तिका स्रोत बह निकला। उसका हृदय मातृ भक्तिसे आल्पावित हो गया। उसने अपने मनमें कहा—इसीको माताकी ममता कहते हैं, इसीको सासका प्रेम कहते हैं। यह गृह धन्य है। इनमें शान्ति देवीका अटल निवास है। प्रसन्नता हाथ जोड़े खड़ी है। एक मैं अभागा हूं। जन्मसे ही इस तरहके सुखोंसे वञ्चित हूं।

सहसा शिशिरका चेहरा म्लान हो गया। सुनयनीने इसे देखा। उसका हृदय दहल उठा। उसने मनमें कहा—लड़का स्नेहका भूखा है। इस आनन्दसे सदा वञ्चित रहा है। मन भुलानेके लिये बोली—बहू, दो थार परोसके ले आओ। शिशिरको खिलाओ।

रजतने हंसकर कहा—आज इस घरमें रजतकी पूछ नहीं है। आज मा शिशिरकी खातिरदारीमें व्यस्त है।

शिशिर चुपचाप सुनयनीकी ओर देखता रहा।

सुनयनीने उत्तर दिया—बेटा, इसमें राग करनेकी कौन बात है। छोटा पुत्र माताको सदा सबसे प्यारा होता है।

शिशिर आनन्दामृतसे नहा उठा। उसका अङ्ग प्रत्यङ्ग आनन्दसे सराबोर हो गया, उसको प्रतीत होने लगा मानों अभी माताकी कोखमें जन्म लेकर उसने अपने जन्मजन्मान्तरकी आस मिटा ली है।

रजत—(हंसकर) फिर अकेले शिशिरको ही खानेको दो। मैं तो शिशिरके ही घरसे डटकर खा आया हूं। मुझे परवा क्या है।

शिशिरने देखा कि सुनयनी दो थालियोंमें अनेक प्रकारके सुस्वादु व्यञ्जन सजाकर ले आयी। शिशिर उदास-मन बोला—भैया, मैंने तुम्हें क्या माल चभाया जो तुम्हारा पेट फूला है।

सुनयनीने शिशिरकी तरफ देखा, उसका मुंह उदास था, उसने रजतसे कहा—तुम्हें फिर खाना होगा। शिशिर अकेला कैसे खायगा!

शिशिरने नम्र होकर कहा—मुझे इस वक्त खानेकी आदत नहीं है मा! इससे मैं कुछ नहीं खाऊंगा।

सुनयनीने सामने भोज्य पदार्थ रखते रखते कहा—बेटा, एक दिन असमयपर खालेनेसे बीमार नहीं पड़ जावोगे।

शिशिर—अभी भोजन कर लेंगे तो रातको फिर कुछ न खाया जायगा।

रजत-(हंसकर) रातको क्या खाना मिलेगा गदहेकी झूल। मैंने कालिदासको पहले ही मना कर दिया है।

अब तो बहानेबाजीका कोई मौका न रह गया। लाचार होकर शिशिरको खाना पड़ा।

संध्या शिशिरके पीछे खड़ी होकर पङ्खा झलने लगी। शिशिरने व्यस्त होकर कहा—पङ्खा झलनेकी तो कोई जरूरत नहीं प्रतीत होती।

सुनयनी—सेवा करना ही स्त्रियोंका धर्म है।

शिशिरने गम्भीर स्वरमें कहा-पर इसको लेनेका अधिकारी भी होना चाहिये मा!

सुनयनी--तुम्हें तो इसका पूरा अधिकार है बेटा! तुम तो बहूके देवर ठहरे।

इसी तरहकी हंसी भरी सारगर्भित बातें उन लोगोंके बीच होती रहीं। कभी सुनयनी कुछ बोल देती, कभी रजत और कभी कभी सन्ध्या भी बीचमें बोल उठती। शिशिर इस आनन्द-प्रलापसे मुग्ध था। वह भोजन करता जाता था और मनमें इस बातकी आलोचना करता जाता था कि ये गृहस्थ कैसे सुखी हैं। माताकी वत्सलता, पुत्रका स्नेह, पत्नीकी सहृदयता शिशिरको मुग्ध कर रही थी। शिशिर सौ मुखसे भी इनकी प्रशंसा नहीं कर सकता था।

इतनेमें रजतने कहा—मा! यदि आप अपनी बहुको जरा सहूर सिखा दें तो ठीक है। उसे बोलनेका भी सहूर नहीं। बीच बीचमें कैसी बेतुकी बोल उठती है।

सुनयनी-बेटा, तो तुम उसके पढ़ानेका प्रयत्न क्यों नहीं करते।

रजत—मुझे समय कहां है। जितना समय इसके पढ़ानेमें बिताऊंगा उतनेमें यदि एकाध गल्प या दो एक कविता लिख लूंगा तो अधिक उपकार होगा।

सुनयनी—यदि तुम्हें फुरसत नहीं मिलती तो कोई शिक्षक रख दो।

रजत—किसी बाहरी आदमीको न रखकर यदि भाभीकी शिक्षाका भार शिशिरपर ही सौंप दिया जाय तो कैसा हो ?

सुनयनीने मतलबभरी दृष्टि रजतके ऊपर फेंकी। रजतके चेहरेसे साफ झलक गया कि इसमें कोई रहस्य है। सुनयनी समझ गई कि रजत इसी बहाने शिशिरकी सहायता करना चाहता है। बोली, इससे उत्तम और क्या हो सकता है।

सुनयनीकी बात बीचमें ही काटकर शिशिर बोल उठा—भाभीको पढ़ानेके लिये कोई सुयोग्य अध्यापिका या सुधीर वयःप्राप्त अध्यापक रखना उचित होगा।

रजत—(हंसकर) इसके कहनेकी कोई आवश्यकता नहीं। क्या करना चाहिये यह हमलोग अच्छी तरह जानते हैं। तुम्हें यह भार लेना ही पड़ेगा। इसमें किसी तरहकी बहानेबाजी नहीं चल सकती।

भोजन समाप्त हुआ। एक नौकर हाथमें कमण्डलमें जल और तौलिया लिये आ उपस्थित हुआ। रजतने शिशिरसे हाथ

धोनेके लिये कहा। शिशिरने उत्तर दिया—हमकलपर जाकर जरा मजेमें हाथमुंह धोना चाहते हैं।

सुनयनी—सामने ही जलका घर है, उसीमें चले जाओ बेटा !

शिशिर उठकर नंगे पांव चला। सुनयनीने देखकर कहा—नंगे पैर मत जाओ, पैर भीग जायगा,जूता कहां उतार आये हो ?

शिशिर लौट पड़ा और विना किसी संकोचके बोला—मेरे पास जूता नहीं है मा !

सुनयनीको बड़ी ग्लानि हुई। उसे इस बातका हार्दिक खेद हुआ कि उसने यह सवाल कर उसकी दरिद्रताको प्रकाश कर दिया। बात उडानेके लिये बोली—हमारे देशका यही प्राचीन नियम भी है। स्त्रियां तो अबतक ,जूता नहीं पहनतीं और कुछ पुरुष भी नहीं पहनते।

सुनयनीकी इस चतुरतापर शिशिर मुग्ध हो गया। उसके अंग अंगसे भक्तिका स्रोत फूट फूटकर बहने लगा। वह अपने मनमें सोचने लगा—ये लोग कितने स्नेही हैं। अभी मैं आज ही आया हूं और इन लोगोंका व्यवहार तो इस तरहका हो रहा है मानों मैं इस घरमें सालोंसे आता हूं। रजतकी माका व्यवहार अपनी मातासे भी बढ़कर है।

शिशिर कलपर गया। विधिपूर्वक हाथ मुंह धोया। पीछे घूमा तो देखता है कि चांदीकी तश्तरीमें खुशबूदार पान लिये सन्ध्या खड़ी है। बोला "भाभी मैं तो पान नहीं खाता।"

संध्या—(धीरेसे) तो मैं लायची सुपारी ला देती हूं।

शिशिर विस्मित हो गया। इतना स्नेह, इतना बन्धुत्व, इस घरकी यह युवती रमणीतक निःसंकोच मेरे सामने आती है, मुझसे बातें करती है। तो क्या येलोग ब्रह्मसमाजी या ईसाई हैं। सुनयनी देवी विधवा हैं। पर उनके शरीरपर सेमीज शोभा दे रही है। संध्या भी सेमीज पहने है। पर ऐसा तो प्रतीत नहीं होता। कमरोंमें अनेक देवी देवताओंके चित्र लटक रहे हैं। इससे प्रत्यक्ष है कि सनातनधर्मी हैं। पर इनका हृदय कितना विशाल है, इनकी सौजन्यता हृदयको मुग्ध कर रही है।

शिशिर इसी प्रकारके विचार तरंगोंमें डूबते उतराते थे। इतनेमें संध्याने लायची सुपारी लाकर उनके सामने रख दी। शिशिरने लायची सुपारी लेकर मुंहमें डाल लिया। एक बार नेत्र उठाकर संध्याके मुंहकी ओर देखा। सरलता, ममता और स्नेहका स्रोत छल छल बह रहा था।

जन्म ग्रहण करनेके बाद यह पहला अवसर था कि शिशिर इस प्रकारके स्नेहका भाजन हो सका था। उसके प्रत्येक अंगसे कृतज्ञता टपक रही थी। सुनयनीको प्रणाम कर शिशिरने विदा चाही।

सुनयनी—बेटा, यह कहना तो उचित न होगा कि कभी कभी आते रहना क्योंकि माको छोड़कर पुत्र जा कहां सकता है। इसके अलावा अपनी भाभीका ख्याल रखना।

इतना कहकर सुनयनीने शिशिरका चुम्बन किया। शिशिरका

शरीर आनन्दसे पुलकित हो उठा। आंखसे आंसुओंकी धारा शतधा, सहस्रधा होकर बह निकली।

जननी और भाभीसे विदा होकर शिशिर बाहर आया। रजतके हाथमें हाथ देकर बोला—अब तो आज्ञा होती है न ?

रजत शिशिरके साथ साथ सदर फाटक तक गया। उसने कहा—जानेको कैसे कहूं। पर आज ही जाकर वहांसे हिसाब ले आओ। कलसे संध्याको तुम्हारे हवाले किया जायगा।

शिशिरने गम्भीर होकर उत्तर दिया—रजत ! मैं फिर भी कह रहा हूं कि यह बात उचित नहीं है। भाभीके लिये दूसरा शिक्षक नियुक्त करो। किसी अविवाहित नवयुवकको किसी युवती रमणीका शिक्षक नियुक्त करना अदूरदर्शिता है। केवल एक दिनकी जान पहचान है। मेरे चालचलनकी भी पूरी जानकारी तुम लोगोंको नहीं।

रजत—(मुस्कुराकर) तुम्हारे बारेमें मैं इतना जानता हूं-तुम भले आदमी हो, शिक्षित नवयुवक हो, मेरी माके कनिष्ठ पुत्र और मेरे छोटे भाई हो। कालिदास कहता था कि तुम बड़ेही कट्टर और धर्मभीरु हो। संध्या मेरी पत्नी है। हम दोनोंका परस्पर स्नेह है। यदि वह किसी अन्यसे स्नेह करने लगे तो मैं उसे रोक नहीं सकता। उसे तालेके भीतर तो रख नहीं सकता। स्त्रीपर कड़ा पहरा रखना सर्वथा अनुचित है। इसलिये मेरी समझमें इसमें कोई अनुचित बात नहीं है। देवरके देवर और गुरुके गुरु। तुम्हें किसी बातकी चिन्ता न होनी चाहिये।

संकोचकी भी अधिक गुञ्जायश नहीं है। संध्या अंग्रेजी स्कूलमें इन्ट्रेंस तक पढ़ चुकी है।

शिशिर विस्मित मुख रजतकी सारी बातें सुन रहा था। रजतने कहा—रात हो रही है। आज जाओ। कल कालेजमें मुलाकात होगी। गाड़ीमें पुस्तकें रखी हैं। ले लेना।

रजतसे विदा हो कर शिशिर गाड़ीमें बैठा और अपने डेरेके लिये रवाना हुआ।

(चार)

सुनयनी और रजत।

शिशिरको पहुंचाकर रजत लौट आया। तब सुनयनी देवीने पूछा—शिशिर बड़ा गरीब मालूम होता है, बेटा!

रजत—बिचारा बड़ा गरीब है मा!

क्या उसके कोई अपना नहीं है?

यह तो मालूम नहीं कालिदासको तो आप जानती हैं। उनके ही बासामें शिशिर रहता है। कालिदाससे मालूम हुआ कि प्रतिमास वह बनमालीदासके नाम दस रुपया भेजता है। मनी आर्डर कूपनके सिवा उसके पास कोई खत नहीं आता, और न वह स्वयं किसीके पास खत लिखता है।

सुनयनी—उसके चेहरेको देखनेसे साफ मालूम होता है कि उसके हृदयमें कोई भीषण मानसिक वेदना है। उसकी वेदनाके कारणका पता लगाना होगा, नहीं तो वह उसे खा डालेगी।

रजत—इसीलिये तो मैं उसे आपके पास लाया हूं। आप ही उसकी रक्षा कर सकती हैं। आप उसके संतप्त हृदयको शान्ति प्रदान कर सकती हैं।

सुनयनी—कलसे वह बहूको पढ़ाने आवेगा तो?

रजत—आनेको तो कह दिया है। यदि यों न आवेगा तो

जबर्दस्ती पकड़ लाऊँगा। वह एक जगह पढ़ाता है। वहांसे उसे आठ रुपया मासिक मिलता है। हमलोगोंको क्या देना चाहिये।

सुनयनी—क्या बीस रुपये महीनेसे उसका काम सुभीतेसे चल जायगा? तीज तेहवारपर कपड़ा धोती भी दिया जाया करेगा। वह तो हमारे हृदयमें बस गया है। न जाने उसका भाव क्या है।

सन्ध्या—(धीरेसे) जिस समय आप इनके सामने स्निग्ध बातें कर रही थीं मैंने देखा उनकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा बह रही थी।

उस दिन शिशिरके लिये यह जड़ जगत चेतनामय हो गया था। इस नीरस भूतलमें भी प्रेम-स्रोत बहने लगा था। आज उसे गली कूचा सब जगह प्रेमका स्रोत बहता दिखाई देता था। आज उसके आनन्दका ठिकाना न था। उसको उसी क्षण ध्यान आया। मैं कैसा संकुचित हृदय था, मैं कैसा क्षुद्रबुद्धि था, मैंने कितना गुरुतर अपराध किया है। आजतक मैं प्रेम और सहृदयताके असली रूपपर लाञ्छन लगा रहा था। अपने मित्रवर्गके अनुरागको सन्देहकी दृष्टिसे देखता था। समझता था कि यह अनुराग नहीं है बल्कि मेरे गरीबपर अनुकम्पा और दया है। मैं कलसे ही उस ट्यु शनको छोड़ दूंगा और रजतकी बहूको पढ़ाना आरम्भ कर दूंगा। पर इसके लिये उनलोगोंसे कुछ लूंगा नहीं। उसने इस बातकी कोई परवा न की कि इस आठ रुपयेकी आमदनीके कम हो जानेसे उसे खर्चवर्चमें

कितनी कठिनाई पड़ेगी। पर आज शिशिरकी अवस्था विचित्र थी। जो सुख शिशिरके जीवनमें आज प्राप्त हुआ था उसके लिये वह कठिनसे कठिन यातना सहनेके लिये तैयार था। इस आनन्दके लिये वह सब कुछ त्याग करनेको तैयार था।

शिशिर डेरेपर लौट आया। कपड़े उतारकर कालिदासके पास गया। उसका हृदय आनन्दसे पुलकित था। अङ्ग अङ्गसे कृतज्ञता टपक रही थी। कालिदासका हाथ पकड़कर उसने हंसते हंसते कहा—मित्र, रजत और तुमसा बन्धु पाकर मैं कितना धन्य । रजत है तो धनीका लड़का पर स्वभाव बड़ा ही सरल है। उसकी माता सुनयनी देवी तो दयाकी मूर्ति हैं। रजतकी पत्नी साक्षात् देवी है। रजत मेरे गले पड़ा है कि मैं उसकी पत्नीको पढ़ाऊं। माका भी यही अनुरोध है। रजतकी पत्नीकी भी प्रगाढ़ इच्छा है। क्या करूं घोर संकटमें पड़ा हूं। लाचार होकर करना ही पड़ा है। इस ट्यूशनको कल छोड़ दूंगा। आज तो रजतके घर स्वर्गके भोग खानेको मिले हैं। अब खानेकी इच्छा नहीं है। क्या क्या पदार्थ खाया है नहीं बतला सकता। कालिदास! आजन्म मैं माताके स्नेहसे वञ्चित रहा। आज मातृस्नेहके स्रोतमें मज्जन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। ऐसा मालूम होता है कि मेरा बाल्यकाल माकी गोदमें आजसे ही आरम्भ हुआ है।

आज कालिदासका हृदय आनन्दसे उछल रहा था। इस तपस्वीको इतना प्रसन्नचित्त आजके पहले उसने कभी नहीं देखा।

था। उसके चेहरेपर यह उल्लास कभी भी दिखाई नहीं दिया था, प्रेमभरी बातें उसके मुंहसे कभी नहीं निकली थी। आज हृदयमें आनन्दका स्रोत पूर्ण वेगसे उमड़ आया था। कालिदास उसके प्रवाहको रोकना नहीं चाहता था। उसने हंसकर कहा—भाई शिशिर जैसा तुम्हारा स्वभाव है उसीके अनुकूल तुम्हें लोग भी मिल जाते हैं।

उस रात्रिको शिशिरने उस नरककुण्डमें भी जो सुख अनुभव किया शायद स्वर्गमें भी उसे न मिलता। बाल्यकालमें ही विचारा माताके स्नेहसे वञ्चित कर दिया गया था और दूसरी स्त्रीको माता करके मानना पड़ा था। पर बनावटी स्नेहसे प्राकृतिक स्नेहकी पूर्ति नहीं हो सकती। इस मातासे उसे मातृस्नेहका आभास भी नहीं मिल सकता था। पर आज रजतकी माताने एक निमेषमें उस अभावको दूर कर इस शुष्क जीवनमें नयी आशाका प्रदान किया। इस प्रेममें क्या जादू था, क्या टोना था। विना किसी भेदभावके; विना किसी संकोचके इस प्रकार प्रेमका दान अभूतपूर्व था।

मुझसे किसी प्रकारकी आत्मीयता नहीं, जान पहचान नहीं, पर मेरे ऊपर तीनों प्राणीका इतना अटल विश्वास! निःसङ्कोच तरुणी युवतीको मेरे हाथ सिपुर्द कर दिया, मुझे उसका शिक्षक नियुक्त कर दिया। हा! मानव प्रकृतिकी विषमता!

इसके पहले शिशिर रजतके साथ किसी तरहका सम्पर्क नहीं रखता था। उससे सदा दूर रहता था। पर आज क्लासमें पहुं-

चते ही वह रजतके पास जा बैठा। क्लासके लड़कोंको बड़ा विस्मय हुआ। आज उन्होंने शिशिरमें विचित्र परिवर्त्तन पाया। शिशिरके पास कोर्सकी सभी किताबें थीं। अब उसे समय बचा-कर नकल करनेकी आवश्यकता न थी। आज वह समकक्षियोंसे स्नेहके साथ मिलता जुलता और बातें करता था।

छुट्टी हुई। लड़के अपने अपने घर चले। शिशिरने रजतसे कहा—मैं संध्याके बाद आ जाऊंगा।

रजत (मुस्कुराकर)—संध्याकी इतनी प्रतीक्षा क्यों? संध्याके दर्शन तो वहीं हो जायंगे।

शिशिर—(कुण्ठित होकर) मैं अभीसे चलकर क्या करूंगा। तुम चलकर जलपान आदिसे तबतक निवृत्त हो।

रजत—(हंसकर) जो कुछ मैं खाऊंगा वह तो तुम्हारे और तुम्हारी भाभीके सामने भी खा सकता हूं। मेरी समझमें इसमें दोमेंसे किसीको भी आपत्ति न होगी। यह सब नखरे रहने दो। आओ साथ ही चलो।

शिशिरका चेहरा लाल हो गया। रजतने शिशिरका हाथ पकड़-कर गाड़ीमें बैठा लिया।

गाड़ी घर पहुंची। रजत और शिशिर दोनों गाड़ीसे उतरकर कमरेमें गये। रजतने पुस्तकोंको टेबुलपर रख दिया और कपड़ा उतारकर शिशिरसे बोला—चलो अन्दर चलें।

शिशिर (कुर्सीपर बैठे बैठे) अभी चलकर क्या करोगे? भाभीके पढ़नेका समय होगा तब बुलवा लेना।
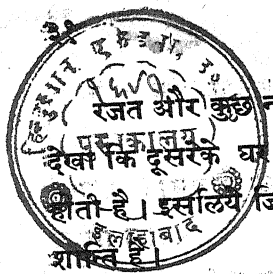
रजत और कुछ न कह सका। चुपचाप चला गया। उसने देखा कि दूसरके घर रोज रोज खानेमें शिशिरको शर्म मालूम होती है। इसलिये जिद्द करना उचित नहीं। शिशिरको इसीमें शान्ति है।

शिशिर अकेला चुपचाप बैठा पुस्तक देखने लगा। क्षणभर भी न बीता होगा कि रजतकी मा सुनयनी देवीने कमरेमें प्रवेश किया।

शिशिर विस्मयके मारे किंकर्त्तव्य विमूढ़की भांति उठ खड़ा हुआ और सुनयनीको प्रणाम कर एक ओर खड़ा हो गया।

सुनयनी—बेटा, बेगानेकी तरह बाहर क्यों बैठे हो। क्या माके पास जाते भी कभी पुत्रको लाज लगती है? ऐसा लज्जा-तुर लड़का तो मैंने देखा ही नहीं। चलो अन्दर चलो।

इतना कहकर सुनयनीने शिशिरका हाथ पकड़कर उठाया। शिशिर बगलें झांकने लगा। बहाना करनेका कोई उपाय न सूझा। लाचार सुनयनीके साथ साथ चला गया।

चौकेमें दो आसन तैयार थे। एकपर रजत बैठा किसीके आनेकी प्रतीक्षा कर रहा था। सन्ध्या भोजन परोस रही थी।

अन्दर पहुंचकर सुनयनीने शिशिरसे कहा—चौकेपर बैठ जावो बेटा! बहू पाठपूजा करेगी, इससे उसने सारा सामान अपने ही हाथों तैयार किया है। मुझे हाथतक नहीं लगाने दिया है।

सुनयनी देवीकी सरलता, स्नेह-गम्भीरता और शालीनतासे शिशिर मुग्ध हो गया। वह बोल न सका। चुपचाप चौकेमें

जा बैठा। आसनपर बैठा ही चाहता था कि संध्याने रोककर कहा- जरा ठहर जाइये।

शिशिर विस्मित होकर संध्याकी ओर देखने लगा। संध्या विना कुछ कहे मुस्कुराती वहांसे चली गई। शिशिर कुछ भी न समझ सका कि क्या मामला है। वह सतर्क नेत्रोंसे सुनयनी और रजतकी ओर देखने लगा। पर वहांसे भी उसको सन्तोष न हुआ।

इतनेमें संध्याने एक सुन्दर सन्दूक लाकर शिशिरके सामने रख दी। उसमें पहननेके अनेक सामान और रुपया रखा था। शिशिर समझ न सका कि इसका क्या अभिप्राय है? आश्चर्य-विस्फारितनेत्र उसने सबकी ओर देखकर पूछा—यह क्या मामला है?

संध्या—(हंसकर) "पाठपूजा।"

शिशिर इसे स्वीकार करनेमें आपत्ति करने लगा। रजतने कहा—शिशिर संध्याका हाथ कांप रहा है। सन्दूक उसके हाथसे ले लो नहीं तो गिरकर टूट जायगा।

शिशिरने लाचार होकर जल्दी जल्दी संध्याके हाथसे सन्दूक ले लिया। रजतने ठहाका मारकर कहा—कहो, अब तो लेना पड़ा न?

शिशिर शर्मा गया और सूखी हंसी उसके होठपर आ गई। सुनयनी और संध्या भी हंस पड़ीं।

सुनयनी—संदूक रखकर भोजन कर लो बेटा!

(पांच)

शिशिर और सुनयनी।

शिशिर संध्याके शिक्षक नियुक्त हो गये। मासिक हुआ पन्द्रह रुपया, एक शाम भोजन। शिशिर इस भारके मारे गड़ा पड़ता था। वह अपने मनमें सोचता—रोज रोज खाना उचित नहीं। फिर उसे यह धारणा होती। मैंने वेतन न लेना निश्चय कर लिया है। पर इससे भी उसे सन्तोष न होता। वह अपने मनमें सोचता, एक घन्टेके लिये अधिकसे अधिक आठ या दस रुपये मिल सकते हैं। यहां तो पन्द्रह या बीस रुपयेका भोजन ही हो जायगा। ये बातें शिशिरके हृदयको भीषण सन्ताप पहुंचातीं। पर जिस समय संध्या या सुनयनी आकर भोजनके लिये पुकारतीं, शिशिर पालतू हिरनकी भांति निरुत्तर उनके साथ चला जाता। उसे इनकार करनेका साहस ही न होता। पर उसके चित्तमें शान्ति नहीं थी।

रजतसे यह छिपा न रहा कि इस बातका शिशिरको आन्तरिक दुःख है। उसकी हृदयकी वेदनाको कम करनेके अभिप्रायसे रजत कभी कभी शिशिरके मेसमें जाया करता और जलपान आदि किया करता और यदि कोई नई पुस्तक देखता तो उसे उठा लाता। इससे शिशिरको कुछ शान्ति मिलती।

कई दिन रजत कालिदासके कमरेमें जाकर न जाने क्या गुप्त परामर्श भी करता रहा।

इसी बीचमें कालिदासने एक दिन शिशिरसे कहा—"मकान-मालिकने कहला भेजा है कि बिचारे विद्यार्थी दूर दूरसे आकर अनेक प्रकारका कष्ट उठाकर विद्या सीखते हैं। यह काम बड़े पुण्यका है। इसलिये इस महीनेसे हम इस मकानका भाड़ा दस रुपया कम लेंगे। इसके बाद कालिदासने शिशिरसे कहा—अब तो कमरोंका भाड़ा कम देना पड़ेगा और जितना भाड़ा देकर तुम नीचे रहते हो उतने ही भाड़ेपर ऊपर भी रह सकते हो।

मकान-मालिकके उदार त्यागसे शिशिरका हृदय पुलकित हो गया। उसके रोम रोमसे कृतज्ञता और प्रशंसा टपक रही थी। उसकी बातोंको जितना ही अधिक वह सोचता उतना ही अधिक उसका हृदय उच्छ्वसित हो उठता। कालेज पहुंचते ही शिशिरने इस महान त्यागकी बात रजतसे कही। रजत अन्यमनस्क और उदासीन हो वहांसे अन्यत्र चला गया। इससे शिशिरके कोमल हृदयमें ठेस लगा। उसने अपने मनमें कहा—रजत धनीका लड़का है। समृद्धि इन बातोंसे उन्हें सदा दूर रखती है। इस महान त्यागकी बात सुनकर रजतके मुंहसे एक भी बात न निकली।

शिशिरको इससे वेदना हुई। हृदयका भार हलका करनेके अभिप्रायसे उसने रजतकी अवज्ञाका वृत्तान्त कालिदाससे कहा। कालिदासने हंसकर कहा—इसमें क्या सन्देह। जो दूसरेकी

असहायावस्थासे अभिभूत हो जाता है उसकी जितनी अधिक प्रशंसा की जाय थोड़ी है। पर तुम इस बातपर कृतज्ञता प्रकाश करनेके लिये मकान-मालिकके पास मत चले जाना, क्योंकि उसने विशेष प्रकारसे कहा है कि इसकी चर्चा कहीं न हो।

शिशिरको सन्तोष न हुआ। उसने देखा कि कालिदासकी उक्तिमें भी उन बातोंका लेश नहीं है। पर विचारा करता क्या। सरल प्रकृतिका था, उन्हीं बातोंको सच मानकर चुप हो रहा।

पर शिशिरकी प्रत्येक धमनीमें मकान-मालिककी प्रशंसाका स्रोत बह रहा था। उसके अतिरिक्त उसकी जबानपर कोई दूसरी बात ही नहीं थी। जिस किसी आत्मीयसे मिलता वह उसकी प्रशंसाका पुल बांध देता। शामको पढ़ाते समय वह सुनयनी और सन्ध्यासे भी उसीका गुणानुवाद करने लगा। पर उसे यह देखकर दुःख हुआ कि उन लोगोंने भी इस बातमें किसी तरहकी असाधारणता न बतलाई। सुनयनी तो यहांतक कह उठी—बेटा, तुम बासामें पड़े पड़े क्यों सड़ रहे हो। क्या तुम्हारी माके पास दो लालोंके रहनेके लिये भी पर्याप्त घर नहीं है!

शिशिर—मा, बासामें किसी तरहकी तकलीफ तो है नहीं। मैं तो यह कह रहा था कि मकान-मालिक कितना उदार और त्यागी है।

शिशिर बात समाप्त भी न करने पाया कि सुनयनीने बीचमें ही पूछा—तुम्हारा घर कहां है, बेटा !

इस अन्तिम बातको सुनकर शिशिरका चेहरा उदास हो गया। मुख म्लान हो गया। प्रसन्नता और आनन्दकी क्षीण आभा एक दम लुप्त हो गई। हृदयकी मार्मिक वेदनाको छिपानेके लिये उसने क्षणभरके लिये अपना सिर नीचा कर लिया। फिर सुनयनीकी ओर देखकर उसने हंसते हंसते कहा—मैं भी तो बङ्गालका ही रहने वाला हूं मा !

शिशिरका मुंह देखते ही सुनयनी समझ गई कि किस चिन्ता और सन्तापसे वह अपना दिन काटता है। वह अपने स्थानपरसे उठी और शिशिरकी पीठपर हाथ फेरती हुई बोली—क्या तुम्हारे अपना कोई नहीं है? सुनती हूं कि किसी बनमालीदासको प्रतिमास दस रुपया मनिआर्डरसे भेजते हो। उससे तुम्हारा क्या सम्बन्ध है ?

हृदयके दबे भाव एक बार पुनः उमड़ आये। शिशिर शोकसे विह्वल हो गया। उसके नेत्र श्रीविहीन हो गये। वह कुछ उत्तर न दे सका। सिर झुकाकर चुप हो बैठा।

सुनयनी कहती गई—तुमको देखते ही मेरे मनमें यह भाव उत्पन्न हुआ था कि तुम्हारे हृदयमें कोई महान दुःख आसन मारे बैठा है। आकृतिको देखनेसे मालूम होता है कि तुमने किसी राज-परिवारका सुख भोगा है। पर भाग्यचक्रमें पड़कर यह यातना झेल रहे हो।

शिशिरका हृदय करुणासे द्रवीभूत हो गया। उसकी आंखोंसे झरझर आंसू बहने लगे। इस प्राकृतिक स्नेह और करुणाकी मूर्तिने उसे जीत लिया। वह सोचने लगा—क्या यही मातृस्नेह है। पर माता तो मुझे दो दो मिल चुकी हैं। इस प्रकारका स्नेह तो मुझे कहीं देखनेमें नहीं आया।......

शिशिरको चुपचाप चिन्तामें मग्न देख सुनयनी पुनः बोली—यदि अपनी आत्मगाथा कहनेमें किसी प्रकारका कष्ट या आपत्ति हो तो, बेटा, कोई जरूरत नहीं, रहने दो, मत कहो। माताकी ममता बराबर रहती है चाहे वह अपने पुत्रके पूर्वजन्मकी कथा जाने या न जाने ।

शिशिरने अपना सिर उठाया। आंखोंसे अविरल अश्रुधारा निकलकर उसके कपोल युगलको सींचती नीचेको बहती जा रही थी। उसने कहा—मा, तुमसे छिपानेकी कोई बात नहीं है। मेरे जीवनकी घटनायें दुःखमय और अतिदीर्घ हैं। तब भी मैं आपको सुनाऊंगा। आज भाभीको न पढ़ा सका।

शिशिरने सिर उठाकर रजत और सन्ध्याकी ओर देखा। रजत गम्भीर मूर्ति धारण किये बैठा था। शिशिरके दुःखसे सन्ध्याका सुन्दर मुख भी मलीन हो रहा था। शिशिरने अपनी राम-कहानी आरम्भ की।
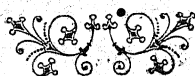
(छ)

शिशिरकी आत्मकहानी।

(१)

मैं अति निर्धनकी सन्तान हूं। मेरे माता पिताकी अवस्था बड़ी खराब थी। सब मिलाकर उन्हें आठ सन्तानें थीं। मेरे दो बड़ी बहनें थीं जिनकी अवस्था विवाह योग्य हो गई थी। हम चार भाई थें। उसपर दो बहिनें और थीं। हम छहोंकी अवस्था छोटी थी। गरीबीकी मार, व्ययकी अधिकता, आमदनीका कोई जरिया नहीं, इन बातोंसे पिताजी एक दमसे उद्विग्न हो उठे थे। इसीको लेकर माके साथ दो चोट भी हो जाया करती थी। जब कोई उपाय न सूझता तो उनका क्रोध हमीं लोगोंकी पीठपर उतरता। इस प्रकार दिनमें दो एक बार पीठकी पूजा हो जाती और कभी गालकी। बालकालके आमोद प्रमोदसे हम लोग सदा वञ्चित रहे और उसी अवस्थासे गम्भीर हो गये।

धीरे धीरे मेरी अवस्था दस वर्षकी हो गई। इसी समय समाचार-पत्रोंमें संवाद निकला कि नन्दनपुरके जमीदार शिव-शंकर चक्रवर्ती गोद लेनेके लिये एक लड़का चाहते हैं। यह समाचार ग्राम ग्राममें फैल गया। जहां देखिये इसीकी चर्चा थी। मेरे गांवके प्रह्लाद बाबू शिवशंकर चक्रवर्तीके यहां नौकर थे। उन्होंने मेरे पिताके पास पत्र लिखा—"यदि आप अपने एक पुत्रको गोद देना चाहें तो मैं कोशिश करूं।"

एक तो संवाद पढ़कर ही पिताजीकी इच्छा हो गई थी। दूसरे प्रहलाद बाबूका पत्र पाकर उनकी उत्कण्ठा और भी प्रबल हो उठी। उन्होंने माको सब बातें समझाकर पूछा—"तुम्हारी क्या इच्छा है?"

पिताजीकी बातें सुनकर माने कहा—इसमें पूछनेकी कौनसी बात है। आठ आठ बच्चे हैं। न इनको पेटभर अन्न दे सकती हूं न इनकी देखरेख कर सकती हूं। इनकी चिन्तामें सूखकर तुम भी काठ होते जा रहे हो। अच्छा होगा यदि एकको दे दो। भला वह तो सुखसे रहेगा। पर मैं गाबला (सबसे छोटा पुत्र) को नहीं दे सकूंगी।

इसपर पिताजीने कहा—शिशिरको दे दिया जाय। यह है भी सबमें शैतान।

मा—अच्छा तो है, उसीको दे दो। एक तो वह सुखी रहेगा, धन पाकर मा, बाप, भाई, बहिनोंका भी ख्याल करेगा और यदि इस समय कुछ नकद रकम मिल जायगी तो दोनों कन्याओंकी शादी कर दी जायगी। इतना कहकर माने मुझसे पूछा—क्यारे तू गोद जायगा?

इतनी छोटी अवस्थामें ही मुझे मान अधिक था। माके मुखसे यह बात सुनकर मुझे बड़ा दुःख हुआ। मैंने अपने मनमें सोचा—"ये लोग कैसे नीच हैं। मुझे बेचकर धन कमाना चाहते हैं। मैं ही इनकी कोखमें ऐसा अभागा पैदा हुआ हूं, नहीं तो क्या दूसरे लड़के नहीं हैं। पर दूसरोंको देनेकी बातसे तो ये सहम उठते हैं।

इसके थोड़े ही दिन पहले मैंने सुना था कि मेरे ही गांवके राज-कृष्णराय नरमेध करने वाले हैं। मुझे शङ्का हुई कि गोदके बहाने पिताजी मुझे "बलिपशु" करके बेंचना चाहते हैं। मुझे बड़ी ग्लानि आई। मैंने आवेशमें कहा—हां, मुझे स्वीकार है।

मेरी बात समाप्त होते न होते पिताजी बोल उठे—मैं तो पहले ही से जानता था कि यह कितना भारी खुदगर्ज होगा। इसे अपने पेट भरनेसे काम। दूसरोंकी इसे थोड़े ही कुछ परवा है। कैसी जल्दी राजी हो गया। इतना कहकर पिताजीने मेरा कान गर्मकर एक चपत धीरेसे गालपर जड़ दिया।

मेरे क्रोधका ठिकाना न रहा। उलटा चोर कोतवालको डांटे। आप स्वयं मुझे खाईमें ढकेल रहे थे, उलटे मुझे ही दोष देने लगे। मारे ग्लानिके मेरी आंखोंमें आंसू आ गये। मैं उठकर वहांसे चला गया।

तदनन्तर पिताजीने प्रहलाद बाबूको पत्र लिख दिया—मैं एक पुत्रको गोद देनेके लिये तैयार हूं।

प्रहलाद बाबूने उत्तरमें लिख भेजा कि यथाशीघ्र चारों लड़कोंको लेकर मदनपुर चले आइये। चारोंमें जो एक पसन्द होगा रख लिया जायगा।

पहले तो माने बड़ी आपत्ति की। वह किसी भी तरहसे गाबलाको अलग करना नहीं चाहती थीं। वे बार बार यही कहती—गाबला बिना मैं एक दिन भी नहीं जी सकूंगी और उसे देखते ही वे लोग उसे पसन्द कर रख लेंगे। पर पिताजी

उसे भी ले जानेके लिये कटिबद्ध थे। बातों ही बातोंमें दोनोंमें झगड़ा छिड़ गया।

पिताजी बिगड़ गये, बोले—अच्छा, यदि तुम्हारे लड़के हैं और मेरा इनपर कुछ जोर नहीं है तो करो इनकी देखभाल और रखवाली। मैं घर द्वार छोड़कर जाता हूं। इतना कहकर पिताजी अपना कपड़ा लत्ता सम्हालने लगे।

अब माका होश ठिकाने हुआ। लड़ाई बन्द हो गई और वे रोने लगीं। इसी अवसरपर पिताजी हम चारोंको लेकर घरसे बाहर हो गये।

(२)

मदनपुरमें हमलोग एक विशाल भवनमें ठहराये गये। उत्तम उत्तम पदार्थ प्रतिदिन भोजनके लिये मिलते थे। उस तरहके पदार्थोंके दर्शन कभी घरमें नहीं हुए थे। दरिद्रताने इस भीषणतासे ग्रस रखा था कि गांवमें कभी निमन्त्रण या ब्राह्मण भोजन होनेपर ही पेटभर अन्न मयस्सर होता रहा। पर वहां भी मेरा चित्त प्रसन्न न था। पर मेरे इतर भाई बड़े ही प्रसन्न थे। कभी कभी वे लोग आपसमें लड़ भी बैठते थे। एक कहता मैं गोद बैठूंगा, दूसरा कहता मैं। गाबला रोता और कहता—मा तो मुझे देना ही नहीं चाहती, नहीं तो मैं ही गोद बैठता और आनन्दसे यह जीवन बिताता।

गाबलाकी निरीह दशापर मुझे बड़ी दया आती। मैं बहुधा

एकान्तमें बैठकर उसीकी बातें सोचा करता और कभी कभी तो सोचते सोचते रो देता।

शिवशङ्कर बाबूका चपरासी आकर प्रतिदिन हम चारोंको जनानेमें ले जाता। शिवशङ्कर बाबू हम लोगोंसे तरह तरहके प्रश्न करते, कभी पढ़नेकी चर्चा करते, कभी हमलोगोंके साथ खेलने लगते। उनकी स्त्रीका नाम मातङ्गिनी था। मातङ्गिनी देवी सच-मुच मातङ्गिनी थीं। शरीर मोटा, आवाज भारी, उनकी प्रेमभरी पुकार सुनकर तो बिचारा गावला पहले ही दिन डर गया और कहने लगा "दादा, तो गोद न बैठंगा।" गावलाकी बातसे गृहिणी महाशया चिढ़ गयीं। वक्र दृष्टिसे जो गावलाकी तरफ देखा तो वह मारे भयके थर थर कांपने लगा और मुझे दोनों हाथोंसे बलपूर्वक पकड़कर रोने लगा। उसकी चिल्लाहटसे मातङ्गिनी देवीका रुख बदला। स्नेहसे उसके बदनपर हाथ फेरती उसे चुप कराने लगीं। गावलाका चुप होना तो दूर रहा वह और भी भीम रव करने लगा। अब तो मातङ्गिनी देवीका पारा ऊपर चढ़ने लगा। उन्होंने मजदूरनीको आज्ञा दी कि इसे उठाकर यहांसे बाहर ले जाओ। पर वह मुझे छोड़ता ही नहीं था बल्कि और जकड़कर धर लिया। मैंने उसे चुप कराते कहा—जाओ, बाबाके पास ले जायगी। बाबाने तुम्हारे लिये हाथी और घोड़ा लाकर रखा है। इस प्रकार किसी किसी तरह उसे भेजा।

मातङ्गिनी देवी बड़ी प्रसन्न हुई। बोलीं—तू बड़ा बुद्धिमान

है, तेरे हृदयमें दया और ममता है, और सब तो गोबर-गणेश हैं।

मातङ्गिनी देवीकी बातें सुनकर मुझे हंसी आने लगी। पर मैंने देखा कि दोनों बड़े भाइयोंके मुंह उदास हो गये।

प्रथम दिन ही मालिक और मालकिन दोनोंकी आंखें मुझ-पर पड़ गईं। वे रह रहकर कहते—यह तीक्ष्णबुद्धि है। इसमें राजाके लक्षण हैं। चतुर और शान्त है। यही गोद लेने लायक है।

उसी दिनसे जमींदार महाशयके घर ज्योतिषी और गणित-ज्ञोंका जमघट लगने लगा। कोई गणित करता, कोई जन्म-कुण्डलीका मिलान करता, कोई हाथकी रेखा देखता, कोई लला-टके चिह्न देखता। इसी तरह कई दिन तक बरावर विचार होता रहा। अन्तमें सबने एक होकर कहा कि मुझे राजयोग पड़ा है, मेरे भाग्यकी कोई सीमा नहीं है।

शिवशंकर बाबूकी प्रसन्नताका ठिकाना नहीं था। वे मारे खुशीके नाचने लगे। बोले—वाह मैं भी कैसा आदमी पहचानता हूं।

यह स्थिर हो गया कि मैं ही गोद बैठाया जाऊंगा। माका गावला भी बच गया और उन लोगोंकी आन्तरिक इच्छा भी पूरी हुई। पिताजी बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने तुरन्त इस शुभ समाचारका तार माके पास भेज दिया।

पुत्रेष्टि यज्ञ समाप्त हुआ। मैं गोद बैठाया गया। पिता-जीने मुझे बेंचकर कई हजार रुपये पाये। वे इस आमदनीपर

फूले न समाते थे। वे मेरे तीनों भाइयोंको साथ लिवाकर घर चले गये।

पिताजीका मुख उदास था। डबडबायी आंखोंसे उन्होंने कहा—शिशिर तू भाग्यवान है। ईश्वरकी तेरे ऊपर दया है। गरीबके घर जन्म लेकर भी तू राजा हो गया। देख, इस नयी सम्पत्तिके प्रमादमें हम लोगोंको भूल न जाना।

पिताजीका सारा जीवन गरीबीमें बीता था। दरिद्रताकी उनपर इतनी अधिक कृपा थी कि वह हर वक्त उनके साथ छायाकी भांति रहती थी। इधर आठ आठ सन्ततिके भरण पोषण-का भार और भी गुरुतर हो गया था। कितने कष्टसे दिन कटते थे नहीं कह सकता। ऐसी दशामें हजारों रुपयोंका मिल जाना कितने भाग्यकी बात थी। पिताजी मुझे बेंचकर परम सन्तुष्ट थे। एक तो हजारोंकी रकम घरमें गई,अभागिनी दरिद्रताने पिण्ड छोड़ा, दूसरे वे मेरी ओरसे भी निश्चिन्त हो गये। मैं अतुल सम्पत्तिका उतराधिकारी बन गया। इससे बढ़कर और खुशीकी बात क्या हो सकती थी। पर उन्हें यह ख्याल कहां कि दस बरसके इस अबोध बालकको लक्ष्मीकी इतनी स्पृहा नहीं है। मैं इसे खूब समझता था पर इतनी शक्ति कहां जो उन्हें यह समझा सकता। माताका स्नेह भी मेरे प्रति गाढ़ न था। मैं एक वर्षका भी न हुआ था कि गाबला पैदा हुआ और एक एक वर्षपर दो लड़कियां पैदा हुईं। मा इन्हीं तीनोंमें व्यस्त रहती थीं। मेरी फिक्र कौन करता। पिताजीसे हम लोग थर थर कांपते थे।

मैं आज लौं भी स्थिर न कर सका कि क्या उनके हृदयमें तनिक भी पुत्र-वत्सलता थी ? कभी कभी एक दो चांटे रसीद कर देनेके अतिरिक्त स्नेह करते हुए तो उन्हें देखा ही नहीं गया। मेरे बड़े भाईने भी देखादेखी यह आदत सीख ली थी और उठते बैठते मुझे ठोंका करते थे। चाहे मुझसे कोई कसूर हो या न हो, केवल अपना बड़प्पन प्रगट करनेके लिये ही वे लोग मुझे दो चार धौंस जमा दिया करते थे। इससे बाल्य कालमें ही मेरा मन इन लोगोंसे हट गया था, स्नेहशून्य हो गया था। पर उस दिन उस अनन्त वियोगका स्मरण कर मेरा हृदय इन लोगोंके लिये भी कातर हो उठा। मैं अधीर होकर रोने लगा। पर विदा होते समय मेरे पिता प्रसन्नमुख थे। इस लीलाको देखकर मेरे हृदयको बड़ी चोट पहुंची। उस अबोध अवस्थामें भी मुझे इतनी अधिक मार्मिक वेदना हुई कि मैं वहांसे हटकर एकान्तमें जा बैठा। इसके बाद बड़े भाई मेरे पास आकर मेरे कानमें कह गये, शिशिर! भाग्यने तुझे राजा बना दिया। देख, हम लोगोंको भूलना नहीं। कालीपूजापर हम लोगोंके लिये उत्तम उत्तम कपड़े बनवाकर भेजना। चिट्ठी पत्री लिखते रहना। मझिले दादा एक तरफ खड़े होकर तृषित नेत्रोंसे मेरी ओर देख रहे थे। केवल गाबला एक दम गाड़ीमें बैठ गया और पूछा, छोटे दादा नहीं चलेंगे क्या ?

इसपर पिताजी ने उत्तर दिया—नहीं। यह उत्तर सुनकर वह रो उठा।

उस दिन, उस घड़ी वही एक गाबलाने मेरे लिये दो बून्द आंसू गिराये थे। वही एक था जिसके कच्चे हृदयमें मेरे वियोगकी पीडा थी, नहीं तो किसीके चेहरेपर उदासी तक नहीं थी, किसी की आंखोंमें आंसू नहीं थे। उस दृश्यको आज भी स्मरण कर मेरा हृदय फटने लगता है। उस अबोध बालकके भ्रातृस्नेहकी स्मृति आज भी मुझे विकल कर देती है।

गाबलाको रोते देख मैं भी अपनेको किसी तरह सम्हाल न सका। मैं भी रो पड़ा। मुझे रोते देखकर शिवशंकर बाबूने मुझे गोदमें उठा लिया और मेरे आंसू पोंछते हुए कहा--चलो बेटा, अपनी माके पास चलो।

"मा" शब्दको सुनकर मेरा हृदय गद्‌गद्‌ हो उठा। उस निराशाके अन्धकारमें भी क्षीण प्रकाश दृष्टिगोचर हुआ। मैंने अन्तिम बार पिताजीकी ओर देखा और शिवशङ्कर बाबूके साथ जनानेमें चला गया।

आशाभरे नेत्रोंसे मैं इधर उधर देखता जाता था, पर माके दर्शन न हुए। उल्लासके मारे मेरा हृदय उछलता था, पर माका कहीं पता न था शिवशङ्कर बाबू मातङ्गिनी देबीके पलंगपर जाकर बैठ गये और मैं दरवाजेपर खड़ा चारों ओर दृष्टि दौड़ाकर माको खोजने लगा। इतनेमें शिवशंकर बाबू बोल उठे--आओ बेटा! अपनी माके पास।

मातङ्गिनी देवीने गर्जनकर कहा आओ बेटा भीतर दरवाजे पर क्यों खड़े हो?

• •

मातङ्गिनी देवीका कर्कश स्वर सुनकर मैं डर गया। पर तुरत हो होश सम्हालकर मैंने देखा तो मुझे विदित हुआ कि ये ही मेरी माता हैं। उस समय मुझे स्मरण आया कि इसीलिये पिताजी कई दिनसे तोतेको भांति मुझे रटाते रहे कि मेरे पिता शिवशंकर बाबू हैं और मेरी माता मातङ्गिनी देवी हैं। बाल्य-कालसे तो मारकण्डेय मजूमदारको पिता और सुरसुन्दरी देवीको माता समझता आया था। पर उसे अब भूल जाना होगा। अब उन लोगोंसे मेरा कोई सम्बन्ध न रहा।

मैंने कहा है कि मातृ-स्नेहसे मैं वञ्चित था तो भी एक तरह-की स्निग्धता थी और वह स्वाभाविक थी। पर उसे भी आज भुलाना पड़ेगा। एक अपरिचित व्यक्तिके साथ नया स्नेह उत्पन्न करना होगा, मातृभक्तिका और स्नेहका स्रोत बहाना होगा। क्या ही अप्राकृतिक और असङ्गत बात थी!

(३)

मातङ्गिनी देवीका शरीर चर्बीसे लदा था। इससे वह अधिक चल फिर नहीं सकती थीं। शिवशंकर बाबूको अफीमकी लत थी। एक गोली अफीम जमाकर वे पड़ रहते और दिनको दो बजे उठते। दो बजे दिन तक उनकी रात रहती थी, क्रमात् दो बजे रात तक उनका दिन रहता था। इसलिये मेरी देखरेखका भार पड़ा एक नौकरपर जिसका नाम था नवीन। घरपर माबापके स्नेहसे सदा वञ्चित रहा। पोष्यपुत्र होकर दूसरेके घर आया तो वहां भी माबापका स्नेह-सुख न मिला!

नवीन मुझे "कुमार" कहता था। मेरा वह बड़ा आदर करता था, पर मुझे एक भी न भाता था। बाल्यकालमें स्नेहका लोभ अधिक रहता है। सम्मानकी चाह एक दम नहीं रहती। मेरी कभी कभी इच्छा मातङ्गिनी देवीके पास जानेकी होती थी पर उनकी आकृति और करुष रवका स्मरण कर मेरी हिम्मत पश्त हो जाती थी। मैं लाख चेष्टा करता था पर मातङ्गिनी देवीके लिये मेरे मुंहसे "मा" शब्द कभी नहीं निकलता था। मातङ्गिनी देवी कभी कभी मुझे अपनी गोदमें बैठाकर खाना खिलाती पर वह मुझे न रुचता। मैं थोड़ा खाना खाकर भाग जाता। इसपर मातङ्गिनी देवी विषम गर्जन कर मुझे चार बातें सुनातीं।

इसी तरह मेरा समय बीतने लगा। धनपतिके घरमें जाकर भी मैं सुखी न हो सका। मैं जमीदारका मुत्पन्ना था इसलिये हमउम्रके लड़के भी सदा मेरा सत्कार करते। यदि मैं कभी बालस्वभावजनित चञ्चलता प्रगट करता तो नौकर, चाकर, जमादार, खानसामा सभी मुझे समझाते कि मैं जमीदारका लड़का हूं इसलिये मुझे उसी तरहसे रहना चाहिये। घरमें बाहरके लड़के आने नहीं पाते थे। निदान मुझे किसीके सहवा-सका अवसर नहीं मिलता था। इस तरह संगी साथीके अभाव-में मेरा जीवन और भी नीरस होता गया। अपनी गरीबीकी कुटियामें माता पिता, बहिन भाईके हाथसे दो चार चपत खाकर भी मैं सुखी था। खेलने, घूमनेकी मुझे पूरी स्वतन्त्रता थी। मैं इसीमें परम सुख मानता था। पर यहां कुछ भी नहीं। सुख

नहीं, शान्ति नहीं, आनन्द नहीं, आदर नहीं, था केवल रूटीन बंधा काम, मर्यादा-पालन, आत्म-गौरव-स्थापन, प्रतिष्ठा निबाहनेके लिये रोब दाब दिखानेकी चेष्टा।

मुझे रहनेके लिये एक कमरा मिला था। मैं उसी कमरेमें अकेला सोता था। पासके घरमें नवीन सोता था। उसीके पास दूसरे कमरेमें मालिक और मालकिन सोते थे। प्रातःकाल मेरी आंख खुलते न खुलते नवीन मेरे पलङ्गके सामने आ उपस्थित होता और मुझे उठाकर नित्यकर्म करानेमें लग जाता। पायखानेमें पानी रख आता, झारीमें जल, हाथमें मिट्टी, कंधेपर तौलिया, हाथमें दातून लेकर खड़ा रहता। हाथ मुंह धो लेनेपर बदनमें तेल लगाता, स्नान कराता, देह पोंछता, कपड़े पहनाता, शीशा कंघी करता। सब बातमें उसकी यही चेष्टा रहती कि मुझे जहांतक हाथ पांव कम हिलाने पड़ें अच्छा। स्नानादिसे निवृत्त होकर मैं मन्दिरमें दर्शन करने जाता। वहांसे लौटकर मातङ्गिनी देवीके पास जाकर जलपान करता और फिर पढ़ने चला जाता।

मेरी शिक्षाके लिये दो शिक्षक नियुक्त थे। वे मुझे सुबह घरपर पढ़ाने आया करते थे। उनके सहवाससे मुझे किसी तरहका सुख नहीं था। मैं जमीदारका लड़का हूं। इसलिये मेरा सम्मान करना उनका धर्म था। यही सोचकर वे लोग सदा मेरा सम्मान करते, क्योंकि उन्हें भय था कि इससे विपरीत चलनेसे नौकरी चली जायगी। दस बजे खा पीकर मैं स्कूल जाता।

स्कूलका समय मुझे स्वर्गसा प्रतीत होता था। उस यातनामय जीवनसे मुक्त होकर मैं स्वर्गका सुख पाता था। पर मन भी न भरने पाता था कि स्कूलमें छुट्टी हो जाती थी और मैं पुनः उसी बन्धन जालमें जाकर फंस जाता था। और पुनः उसी मान मर्यादाकी चक्की पीसने लगता था। इन सब कारणोंसे उसी बाल्यकालमें ही मैं गम्भीर होगया। बस, एकमात्र पुस्तकें मेरी संगिन थीं। मैं रातदिन पढ़नेमें लगा रहता। यह नीरस जीवन मेरे लिये नितान्त दुःखदायी था पर अन्य सब लोग उसमें प्रसन्न और संतुष्ट थे। मैं हर बार परीक्षामें प्रथम होता। इसलिये मालिक, मालिकिन, मास्टर और शिक्षक सभी बड़े प्रसन्न रहते। पर स्कूलके अन्य लड़के सदा यही कहा करते कि मुझे जमीदारका लड़का समझकर मास्टर लोग जान बूझकर प्रथम कर देते हैं। मेरी शान्ति-प्रियता, शिष्टता, गम्भीरता, उदारता, तत्परतासे मालिक,मालकिन बड़े खुश थे। मैं बहुधा उन लोगोंको बातें करते सुना करता था कि इतनी ही छोटी अवस्थामें जो गुण इसमें आये हैं उससे वह जमीदार होनेके सर्वथा उपयुक्त है।

इस प्रकार मेरा जीवन-स्रोत प्रायः एक स्थिर मार्गसे बह चला था। उसी समय एक आकस्मिक व्यतिरेकने उस मार्गको सहसा रोक दिया और उसे दूसरे स्रोतमें बहा दिया।

(४)

मैं अपने मा बापके स्नेहसे वञ्चित होकर दूसरेके ठिकाने लगा। धीरे धीरे मैंने उनका स्नेह अर्जन किया। उसी समय एक आक-

स्मिक घटना हुई। पचास वर्षीया मातङ्गिनी देवीको पुत्र उत्पन्न हुआ। घर बाहर आनन्द छा गया। तरह तरहके उछाह होने लगे। जिस वस्तुके अभावमें दूसरेका मुंह ताकना पड़ा था उसीके पा जानेसे कितना हर्ष होगा, इसका सहजमें ही अनुमान कर लिया जा सकता है। दिन प्रतिदिन उत्सव मनाया जाने लगा। बड़े समारोहसे छठी, बरही मनाई गई। मालिक मालकिनका तो कहना ही क्या था। मानों चांदका टुकड़ा हाथ लग गया। वे हर्षके मारे फूले नहीं समाते थे। विविध प्रकारसे देवार्चन, पूजन होने लगे, ब्राह्मणोंको भोजन और दान दिया गया। यह अलभ्य रत्न कहीं फिर खो न जाय, इस भयसे अनेक तरहकी मान मनौती होती थी, देवी देवताओंकी पूजा होती थी। अब शिवशंकर बाबूका दो बजे दिनतकका सोना भी नहीं होता था। नव बजते बजते निद्रा देवी उनका दामन छोड़ देती थीं और वे पुनः प्राकृत जगतमें आजाते थे। आंखें खोलते ही वे मालकिनके घरमें जाते और नवजात शिशुका कुशल समाचार पूछकर तब कहीं नित्य कृत्यमें प्रवृत्त होते। मालकिन तो बच्चेको क्षण कालके लिये भी अपनी गोदसे न उतारतीं। मारे दुलारके मालकिनने उसका नाम रखा दुलाल और मालिकने रखा कुलचन्द्र।

प्रकृतिका नियम है कि चन्द्रदेव अपने प्रकाशसे एक ओर तो उजाला फैलाते जाते हैं पर साथ ही दूसरी ओर अन्धकारका राज्य भी स्थापित होता जाता है। ठीक यही घटना यहां घटी। कुलचन्द्रने अपने प्रकाशसे उस वंशको उज्ज्वल किया पर मेरे भाग्यपर

विपत्तिका घोर अन्धकार फैला दिया। शिवशंकर और मातङ्गिनी दोनों मुझे भूल गये। उन्हें अब एक मिनिटकी भी फुरसत नहीं मिलती थी कि वे मेरी खोज खबर लेते। दुलालने एक बारगी मुझे उनके हृदय सिंहासनसे ढकेलकर अपना अटल आसन जमा लिया। मेरी देखरेख करनेवाला रह गया केवल नवीन।

मैं कभी भी अपने मनसे शिवशंकर बाबू या मातङ्गिनीके पास नहीं जाता था। जब कभी वे बुलाते तो मैं जाता। इधर उन्होंने बुलाना भी छोड़ दिया। एक दिन मैं स्कूलसे लौटकर जलपान करने जा रहा था कि मैंने देखा कि शिवशंकर बाबू और मातङ्गिनी देवी दुलालके खेलानेमें तन्मय हो रहे हैं। इससे पहले मैं लोगोंके मुंहसे बराबर सुनता आता था कि मातङ्गिनी देवी और शिवशंकर बाबू आपसमें बहुधा इस बातकी चर्चा करते हैं कि यदि चार पांच वर्ष पहले ही लड़का हो गया होता तो इतना टण्टा न उठाना पड़ता। गोद न लेना पड़ता और बांट बखराका भी झमेला न उठाना पड़ता। इन बातोंको सुन सुनकर मुझे बड़ी मार्मिक वेदना होती थी। मुझे इस बातका सदा दुःख रहने लागा कि मैं ही उनकी इस चिन्ताका कारण हूं। मेरा हृदय कहने लगा कि तू चोर है, तस्कर है, डाकू है, तू दूसरोंकी सम्पत्तिपर हावी होकर बैठा है। अब मुझे लोगोंसे मुंह छिपाना पड़ता था। किसीके सामने जाते हुए मुझे शर्म मालूम होती थी। मातङ्गिनी और शिवशंकर बाबूका सामना भी मुझे असह्य था। इसीलिये उन्हें इस तरह बैठा देख मैं जल्दी जल्दी चुपकेसे भाग गया।

पर शिवशंकर बाबूने मुझे देख लिया। उन्होंने मातङ्गिनी देवीसे पूछा—शिशिर इस तरह भाग क्यों गया ?

मातङ्गिनी देवीने उत्तर दिया—जिस दिनसे दुलाल पैदा हुआ है उसने मेरे पास आना जाना छोड़ दिया। दुलालको देखकर उसके कलेजेपर सांप लोटने लगता है। उसे डंक मार जाता है। आखिर तो वह पराया ठहरा !

शिवशंकर—मैंने तो सोचा था कि अब मैं बुड्ढा होचला आज हूं, कल नहीं। मेरे मरनेपर शिशिर अपने छोटे भाईकी तरह दुलालका भरणपोषण करेगा।

मालिक मालकिनकी बातें सुनकर मैं रास्तेमें ही ठिठक गया। शिवशंकर बाबूकोइस बातका प्रतिवाद करते मातङ्गिनी देवीने घोर गर्जन कर कहा—आपने भी खूब सोच रखा है। अपना सगा तो साथी होता ही नहीं, वह तो दूसरेका ठहरा। यदि चार पांच वर्ष पहले दुलाल जन्म गया होता तो यह झंझट क्यों उठाना पड़ता। अब तो बुद्धि ही काम नहीं करती कि जो कांटा स्वयं बोया उसे किस तरह समेटा जाय। अब तो आधी सम्पत्ति निकल ही जायगी। हतभाग्य दुलाल ! निजी सम्पत्तिका भी पूर्णतः उपभोग नहीं कर सकता !

शिवशंकर बाबू कुछ गम्भीर प्रकृतिके मनुष्य थे। अधिक बोलना उन्हें अभिप्रेत न था, इससे मातङ्गिनी देवीकी बातें सुनकर वे चुपचाप रह गये या दूर होनेके कारण मैं ही उनकी बातें नहीं सुन सका।

उस दिनसे मेरी चिन्ता, भय और लज्जा और बढ़ गई। दूसरे दिन स्कूलसे आनेपर मुझे मालूम हुआ कि शिवशंकर बाबूने अपनी सारी सम्पत्तिका वसीयतनामा लिख दिया है। चौदह आनेका मालिक दुलालको और दो आनेका मुझे बनाया है। मातंगिनी देवीकी बातें उनके दिलमें इस प्रकार जम गईं कि फिर वे एक क्षणके लिये भी न रुक सके। एक तरहसे उन्होंने अच्छा ही किया, क्योंकि इसके एक मास बाद ही शिवशंकर बाबू परलोकवासी हुए।

वसीयतनामेकी बात सुनकर न मुझे खेद हुआ न विस्मय, क्योंकि तबतक मेरी अवस्था केवल पन्द्रह वर्षकी थी और बाल्य-कालमें धनका विशेष प्रलोभन नहीं होता। दूसरे, जिस दिनसे मैं यहां आया था उसी दिनसे मेरे हृदयमें यह भाव जम गया था कि यह सम्पत्ति परायी है, मैं इसका सच्चा अधिकारी नहीं। इस समय भी वही बात मेरे ध्यानमें आ गई कि जो कुछ उन्होंने दिया, बहुत दिया। दुलाल तो सोलहों आनाका मालिक है। यदि मुझे एक पैसा भी न देते तोभी अनुचित न कहा जाता, क्योंकि मेरे पढ़ने लिखनेमें प्रचुर धन व्यय किया जाता था।

लेकिन आपलोग जानते ही हैं कि अमीरोंके घर हर तरहके लोग होते हैं। सबोंने देखा कि शिवशंकर बाबू तो गिने गिनाये दिनोंके मेहमान रह गये। दुलाल अभी अबोध बालक है, गृहस्ती-का भार सम्भाल नहीं सकता। शिवशंकर बाबूके बाद मैं ही कर्त्ता-धर्त्ता होनेवाला था, इससे सब नौकर चाकर मेरी चापलूसी

करने लगे। हर तरहसे मेरा कान भरने लगे। "जमीदार बाबूने आपके साथ घोर अन्याय किया है। यह सर्वथा अनुचित है। आपको सोलह आनेका मालिक बनानेके लिये गोद लिया था और दिया आपको केवल दो आना। यह सरासर धोखा है। उचित तो यही था कि दुलाल और आपमें सारी सम्पत्ति बराबर बराबर बांट दी जाती"। इन सबोंकी इस तरहकी बातें सुनकर कभी कभी मेरा भी माथा फिर जाता। मैं भी आठ आनेका सुख स्वप्न देखने लगता, पर तुरन्तही मेरे मनमें यह भाव उदय होता "यहां मेरा तो एक पैसा भी नहीं है फिर जो कुछ मिल गया वही बहुत है।" आपलोग पूछेंगे कि इतनी छोटी अवस्थामें ही ये भाव मेरे हृदयमें कैसे समा गये। मैंने ऊपर कहा है कि मुझे घरपर पढ़ानेके लिये दो शिक्षक नियुक्त थे। उनमेंसे एकका नाम देवीबाबू था। देवीबाबू बड़ेही न्यायप्रिय मनुष्य थे। वे मुझे चाहते थे। छोटेपनसे ही वे मुझे सम्पत्तिकी विषमताका दिग्दर्शन कराकर बतलाया करते थे कि यह विभाजन सर्वथा अन्यायपूर्ण है पर यही चला आता है। इससे बुद्धिमानको इसकी परवा नहीं करनी चाहिये। वसीयतनामेकी बात सुनकर और मुझे जरा कुण्ठित देखकर उन्होंने मुझसे पूछा—शिशिर क्या वसीयतनामेसे तुम्हें कुछ वेदना हुई है?

देवीबाबूकी जितनी मैं श्रद्धा भक्ति करता था, उतना ही उनसे डरता भी था। उनके मुंहसे ऐसी बातें सुनकर मुझे बड़ी लज्जा आई। मैं कुछ भी उत्तर न दे सका।

उन्होंने मेरे कन्धेपर हाथ रखकर कहा—देखो शिशिर, दूसरेकी सम्पत्तिसे धनी कहलानेकी अपेक्षा अपने बाहुबलसे उपार्जन कर धनी बनना कहीं श्रेष्ठ है। हम मानते हैं कि शिव-शंकर बाबूने तुम्हें गोद लिया था, पर उन्होंने यह कभी नहीं कहा था कि हम तुम्हें अपनी अखिल सम्पत्तिका स्वामी बना-वेंगे। सम्भव था कि दुलाल न होता तोभी वे तुम्हें दोही आना देते। शेष चौदह आना दान कर देते। ऐसी दशामें दो आना तुम्हें और चौदह आना दुलालको देकर उन्होंने कोई अन्याय नहीं किया। तुम गरीबके लड़के हो। जो कुछ तुम्हें मिल गया उसीसे तुम्हें सन्तोष करना चाहिये। मानव संसारकी गतिको देखकर तुम्हें प्रसन्नचित्त रहना चाहिये। इस बातका सदा ध्यान रखो कि इस जीवनमें सुखकी अपेक्षा दुःख बहुत है। फिर तुम्हें संकट नहीं सता सकते।

देवीबाबूके इसी उपदेशने मुझे बचाया। वह उपदेश आज भी छायाकी भांति मेरे साथ है। चापलूसोंकी चापलूसी और कुवासनाओंका मायाजाल मुझपर असर न कर सका।

दूसरे इन सब बातोंपर विचार करनेका मुझे अवसर भी कम मिलता था। उस वर्ष मुझे इन्ट्रेंसकी परीक्षामें बैठना था। मैं पठन पाठनमें अधिकतर व्यस्त रहता था।

परीक्षाका दिन आया। मैं परीक्षा देने शहर चला गया। वहीं संवाद मिला कि शिवशंकर बाबूका देहान्त हो गया। अशौचमें ही मुझे परीक्षा देनी पड़ी।

(५)

अनेक तरहकी विघ्न बाधाओंके बीचमें परीक्षामें सम्मिलित हुआ था, इससे जैसा परिणाम मैंने सोचा था न हुआ अर्थात् मेरा नम्बर १६वां रहा। फिर भी मेरे शिक्षकोंको सन्तोष रहा। उन्होंने आशीर्वाद दिया—एफ० ए० में ईश्वर तुम्हें इससे भी अच्छी सफलता दे। इन्ट्रेन्स पास होनेसे मुझे जो खुशी हुई उसे मैं किसी तरह छिपा न सका। मारे खुशीके दिल भर आया। मेरी आंखोंसे छल छल आंसू बहने लगे। इतनी उमरमें मेरी प्रसन्नताका यह दूसरा अवसर था। पहली बार विदाईके समय प्यारे छोटे भाई गाबलाको रोते देख इस बातसे प्रसन्न हुआ था कि मेरा भी संसारमें कोई है। मैं एक दम निःसहाय नहीं हूं।

कालेज खुलते ही मैं पढ़नेके लिये कलकत्ता चला आया। मातङ्गिनी देवीके साथ रहा सहा सम्बन्ध भी टूट गया। मेरे पिता जबसे मुझे छोड़कर गये कभी मेरी खोज खबर नहीं ली और न मुझे ही उनके हाल जाननेका अवसर मिला। जमीदार महाशयके कारिन्दा प्रहलाद बाबू मेरे ही गांवके थे पर कई वर्ष हुए वे भी मर चुके थे। इससे घरवालोंका इधर कुछ हाल नहीं मिलता था। मेरा नौकर नवीन मेरे साथ कलकत्ता आया। पर अभाग्यवश सहसा हैजेके प्रकोपसे वह भी मेरा साथ छोड़कर चल बसा। मरते समय उसने अपने एकमात्र पुत्र बनमालीका हाथ मुझे पकड़ाकर कहा—सरकार मैं तो अब चला।

यही मेरा सब कुछ है। इसको आपके हवाले कर जाता हूं। बस, मेरी यही अभिलाषा है कि इसके पठन पाठनमें आप पूरा योग दें।" नवीनकी वह अन्तिम प्रार्थना मैंने स्वीकार कर ली थी और उसीका पालन अबतक करता आ रहा हूं और यथासाध्य बनमालीदासकी सहायता करता जाता हूं।

इस प्रकार स्नेह, ममता शून्य, भाई बन्धु, इष्ट मित्र, सङ्गी साथी और हितेच्छुओंसे विच्छिन्न, देशसे निर्वासित मैंने दो वर्ष कलकत्तेमें बिताये। छुट्टियोंमें एक बार दो चार दिनके लिये मदनपुर गया। उसके बाद फिर कभी नहीं गया और न किसीने खोज खबर ही ली। मताङ्गिनी देवीके हृदयमें यह बात समा गई थी कि दुलालको मेरी नजर लग जायगी, इसलिये वह सदा मुझसे उसे छिपाकर रखतीं।

एक दिन मैं अपने कमरेमें बैठा था। उसी समय एक नौकर दुलालको लेकर घुमानेके लिये बाहर निकला। मैंने दुलालको अपनी गोदमें ले लिया। यह देखते ही मातङ्गिनी देवीने गरजकर नौकरसे कहा—पाजी कहींका, ले आ दुलालको यहां!

विचारा नौकर डरके मारे कांपने लगा। वह दुलालको मेरी गोदसे छीनकर चला गया।

मैं कमरेमें बैठा सुन रहा था। मातङ्गिनी देवी उस नौकरसे कह रही थीं—दुलालको शिशिरके पास कभी मत ले जाना। शिशिर सदा दुलालकी अशुभ कामना किया करता है। दुलालके मर जानेपर वह सोलहों आनेका मालिक हो जायगा।

इस बातसे मुझे मार्मिक वेदना हुई। मैं और वहां न ठहर सका। दूसरे ही दिन कलकत्ता चला आया।

एफ़० ए० की परीक्षा देकर मैंने ज्यों ही छुटकारा पाया, मेरे मैनेजरका एक पत्र मुझे मिला जिसमें लिखा था—मातङ्गिनी देवीने बटवारा और दाखिल खारिजका दरखास्त दिया है, कमिश्नर और मजिस्ट्रेट साहब मदनपुर आ रहे हैं। आपकी उपस्थिति आवश्यक है।

पत्र पढ़कर मुझे अत्यन्त दुःख हुआ, पर मैंने बनावटी हंसी हंसकर उसे फेंक दिया। मैंने अपने मनमें कहा—बचा बचाया सम्बन्ध भी अब टूटना चाहता है। ईश्वरको यही अभीष्ट है तो मैं क्या करूं।

यथासमय मैं मदनपुर पहुंचा। देखा कमिश्नर और मजिस्ट्रेट साहबका खेमा पहलेसे ही पड़ा है। मैं कमिश्नर साहबसे मिलने जा रहा था। देखा कि ढाई वर्षका दुलाल भी मैनेजरके साथ वहीं जा रहा है। उसका झूमकर चलना देखकर मेरा हृदय खिल उठा। मैंने उसका हाथ पकड़कर कहा—आओ बच्चा, मैं तुम्हें अपनी गोदमें ले चलूं।

उसने जबर्दस्ती अपना हाथ छुड़ाकर कहा—तुम मुझे मत छूओ, एकाएक मुझे मातङ्गिनी देवीकी बात याद आ गई। उदास मन मैंने अपना हाथ खींच लिया।

मैनेजरने कहा—राजाबाबू दादाके पास जाते क्यों नहीं, वे बुला न रहे हैं!

दुलाल बोल उठा—वह हमाला दादा नहीं, वह हमाला कोई नहीं, वह चोल है। हमाली जमींदारी हलप लेनेके लिये आया है।

यह सुनकर मैं काठ हो गया। मुझे बिजली मार गई। मैं आगे न बढ़ सका। वहीं रुक गया। उस समय मेरे चित्तकी क्या अवस्था थी मैं नहीं कह सकता। मेरी ओर देखकर दुलाल चिल्लाकर रो उठा। मैनेजर नौकर चाकर सभी घबरा गये और उसे चुप कराने लगे। मैं जल्दी जल्दी आगे बढ़ गया।

मैं सोचने लगा—घरमें मेरी चर्चा नित्यप्रति होती रहती है। दुलाल सुन सुनकर अभ्यस्त होगया है। जबतक मैं इस सम्पत्तिका उपभोग करता रहूंगा दुलाल मुझे चोर व अनधिकारी समझता रहेगा। मुझे हर तरहसे ताना देगा। उसके कृपा-प्रार्थी चापलूस नौकर चाकर भी उन्हीं बातोंको दोहराते रहेंगे। पर यह मेरे लिये असह्य है।

मैं चट लौट पड़ा और अपने पुराने शिक्षक देवीबाबूके घर गया। देवीबाबूके भाई मेरे सहपाठी थे इससे मैं देवीबाबूकी पत्नीको भाभी कहा करता था। मैं जाकर बैठकमें बैठ गया। मुझे देखते ही देवीबाबूकी पत्नीने मेरे पास आकर मेरी पीठपर हाथ फेरकर कातर स्वरसे पूछा—शिशिर। तुम उदास क्यों हो?

मेरा चेहरा पीला पड़ गया था। देवीबाबूकी स्त्रीके करस्पर्शसे मुझे कुछ शान्ति मिली। मैंने बनावटी हंसी हंसकर कहा—कोई कारण तो नहीं है, भाभी! मास्टर साहब कहां हैं? कुछ आवश्यक बातें करनी हैं।

"बागमें लकड़ी चीर रहे हैं।"

देवीबाबू यथासाध्य घरका सारा काम अपने ही हाथों करते। अपने हाथसे जल भरते, लकड़ी चीरते, बागकी सफाई करते, यहां तक कि बरतन भी अपने हाथसे मांजते और साफ करते। वे सदा यही कहा करते थे, अपना काम अपने हाथों करना चाहिये। नौकर जो कुछ कर दे उसकी कृपा समझनी चाहिये। वह उपकार केवल तनखाह देनेसे नहीं पूरा हो सकता।

मैं उनकी इन्हीं सब बातोंको सोचता विचारता उनके सामने जा उपस्थित हुआ। मुझे देखकर उन्होंने टंगारी जमीनपर रख दी और पूछा—कब आये शिशिर? परीक्षा कैसी हुई?

मैंने उत्तर दिया—परीक्षा सन्तोषजनक हुई। मैं इस समय आपके पास एक आवश्यक कार्यके लिये आया हूं।

देवीबाबू उसी लकडीपर बैठ गये और मुझे भी उसीपर बैठनेके लिये हाथसे इशारा कर बोले—कहो क्या काम है?

मैंने कहा—जमींदारीका बटवारा करनेके लिये कमिश्नर और मजिस्ट्रेट आये हुए हैं। मैं उनके पास जारहा हूं। आपको भी मेरे साथ चलना होगा।

उन्होंने उत्तर दिया—चलनेके लिये तो मैं तैयार हूं पर मेरे चलनेसे तुम्हें कोई विशेष लाभ नहीं हो सकता, क्योंकि बांट बटवारेके काममें मेरी जरा भी जानकारी नहीं।

उनकी बातोंसे मुझे बड़ी लज्जा आई। मैंने आंखें नीची करके कहा—मुझे भाग नहीं लेना है। मैं बखशिस-नामा लिखकर

अपना हिस्सा दुलालको दे देना चाहता हूं। मैं दूसरेकी सम्पत्ति-का अपहरण कर चोर और डाकू नहीं बनना चाहता।

इस अन्तिम बातको सुनकर देवीबाबूका चेहरा खिल उठा। मारे प्रसन्नताके उनकी आंखोंमें आंसू भर आये। वे अपनी जग-हसे उठे और मुझे छातीसे लगाते हुए बोले—धन्य! शिशिर धन्य!! यही मनुष्यके अनुरूप है।

एक क्षणके बाद ही उन्होंने पूछा—पर सहसा तुम्हारे हृदयमें ऐसी भावना क्योंकर उठी?

मैंने उत्तर दिया—यह सहसा नहीं हुआ। मैं कई दिनके सोच विचारके बाद इस निर्णयपर पहुंच सका हूं। इसके बाद मैंने मातङ्गिनी देवी दुलाल आदिकी सभी बातें कह सुनाईं। उन्हें सुनकर उन्होंने कहा—आवेशमें आकर कोई ऐसी बात मत कर डालो जिसके लिये पीछे पछताना पड़े। समझ लो! इसके बाद ही दरिद्रताके साथ घोर संग्राम करना पड़ेगा।

मैंने दृढ़ होकर कहा—मुझे इसका जरा भी भय नहीं है। मैंने अपना आगा पीछा सब सोच समझ लिया है।

मैं जबर्दस्ती देवीबाबूको साहबके पास पकड़ ले गया। साहब मेरे निश्चयको सुनकर सन्नाटेमें आ गये। उन्होंने कहा—ये युवावस्थाके आवेश हैं। मुझे अनेक तरहसे ऊंचा नीचा सम-झाया। अपने निश्चयपर पुनः विचार करनेके लिये मुझे दो दिनका समय दिया।

इन दो दिनोंमें मैंने तार देकर जिलासे अपने वकील और

अन्य दो वकीलोंको बुलाकर बखशिसनामा तैयार कराया। देवीबाबूकी गवाही कराई और उसकी रजिस्टरी कराकर तीसरे दिन कमिश्नर साहबको दे आया। इस तरह सारा बोझ मैंने एक बारगी उतार दिया।

घरपर लौटकर मैं सीधा मातङ्गिनी देवीके कमरेमें चला गया। उस समय मातङ्गिनी देवी दुलालको कपड़ा पहना रही थीं। मुझे कमरेमें प्रवेश करते देखकर मातङ्गिनी देवीने कपड़ा ज्योंका त्यों छोडकर दुलालको एक तरफ कर दिया और मजदूरनीसे कहा—दुलालको यहांसे ले जावो।

मजदूरनी दुलालको गोदमें उठाने लगी। दुलाल छैला गया रोते रोते बोला—मैं कपड़ा पहने विना नहीं जाऊंगा।

मातङ्गिनी देवी दुलालके इस व्यापारको वरदास्त नहीं कर सकीं, गरजकर बोल उठीं—अभागा! यहांसे चला जा।

मैं समझ गया कि यह मेरे ही कारण था। मैंने कहा—अब कोई डरकी बात नहीं मा! मैं ही चला जारहा हूं। आपको अन्तिम बार प्रणाम करने आया हूं।

मातङ्गिनी देवीने मुंह बनाकर कहा—जो दूसरेकी सम्पत्तिसे बाबू बना है उसके लिये इतना अभिमान नहीं शोभा देता। दुलाल अभी अबोध बालक है। उसकी बातोंका क्या ख्याल!

मैंने कहा—वे बातें दूलालके पेटसे नहीं निकली थी मा! वे सब बातें आपकी थीं। मैंने स्थिर कर लिया है कि दूसरेकी सम्पत्ति लेकर बाबूगीरी नहीं करूंगा। शिवशंकर बाबूने जो कुछ

मुझे दिया था मैंने बखशिसनामा लिख कर दुलाल को लौटा दिया। एक जोडा पुराना कपड़ा छोड़कर मैं और कुछ लेकर यहांसे नहीं जाऊंगा। इतने दिनतक आपके घरमें मेरे ऊपर जो कुछ धन व्यय किया गया है उससे कहीं अधिक नुकसान आपलोगोंने मेरा किया है। मेरे मावापसे मुझे वञ्चित कर...

बात समाप्त भी नहीं होने पाई थी कि बीचमें ही मातङ्गिनी देवी गरजकर बोल उठीं—नमकहराम बेईमान कहींका! बापके घरमें अमृतका घड़ा भरा था कि वहांसे हटाकर हमने बड़ा अपकार किया। क्या तेरे बापने मुफ्तमें तुझे दिया था। पांच हजार सिक्का नगद् गिनवा लिया था। तू तो खरीदा गुलाम है।

उनके साथ बातचीत करना व्यर्थ समझा। जिसे लक्ष्मीका इतना बड़ा अभिमान हो भला वह दूसरोंके हृदयकी बातोंको कहांतक समझ सकता है। उन्हें प्रणाम कर मैं चुपचाप वहांसे चला आया।

निदान एक पुराना कपड़ा पहनकर मैं घरसे निकल पड़ा। पांवमें जूतातक न डाला। यज्ञोपवीतके समय कुछ भिक्षा मिली थी। पारितोषिकसे भी कुछ रुपया मिला था। यह सब मिलाकर मेरे पास निजका पचास रुपया, दो मोहर, और चार गिन्नी थीं। वह मेरी निजी कमाई थी, इससे मैंने उसे अपने साथ ले लिया।

यह खबर चारों ओर फैल गई कि मैं सर्वस्व त्यागकर एक फटा पुराना कपड़ा पहनकर घरसे चला जारहा हूं। बाहर निकल-

कर मैंने देखा कि नौकर चाकर, अमला अर्दली तथा गांवके इतर जन कतार बांधे दोनों तरफ खड़े हैं। कोई मेरी इस अवस्थापर दुःख प्रगट कर रहा है, कोई रो रहा है, कोई कुछ कह रहा है, कोई मुझे पागल समझकर मेरी निन्दा कर रहा है। मैं हंसता हंसता सबको प्रणाम कर आगे बढ़ा।

एक दिन वह था कि यदि मुझे कहीं दो चार कदम भी पैदल चलना पड़े तो अनेक दास दासियां पैर दबानेको उद्यत रहती थीं, हर कदमपर घोड़ागाड़ी व पालकी तैयार रहती थी। आज वही मैं नङ्गे पांव सात मील स्टेशन जानेको उद्यत था। समय-की बलिहारी!

मुझे इस तरह पैदल चलते देख, न जाने किसीकी आज्ञासे वा अपने मनसे, कहार लोग एक पालकी लेकर सामने खड़े हो गये और चढ़नेके लिये आग्रह करने लगे। पर मैंने चढ़ना स्वीकार नहीं किया। यह कहकर लौटा दिया कि अब मैं उसका अधिकारी न रहा।

मेरी बातको सुनकर मैनेजरने कहा—तब एक बैलगाड़ी ही किरायेपर ले ली जाय।

मैंने उत्तर दिया—मेरे पास पूंजी बहुत कम है। इससे विलास नहीं हो सकता।

इसी वक्त घरके अन्दरसे एक मजदूरिन दौड़ी हुई आई और बोली—सरकार, आपको मालकिन बुला रही हैं।

'सरकार' शब्दके सम्बोधनसे मुझे हंसी आगई। इस समय

मैं निःसहाय, निराश्रय, पथका भिखारी हो रहा था, पर 'सरकार' की पूंछ अभीतक लगी हुई है। मैंने हंसकर उत्तर दिया—मालकिनसे मैं बिदा हो चुका। अब तो मिलनेकी कोई जरूरत नहीं प्रतीत होती।

मजदूरिनने कहा—मालकिन कहती हैं कि आप अपना विस्तरा वगैरह सब लेते जाइये।

मैं—वह सब मेरा नहीं है।

इतनेमें दुखिया नौकर दुलालको गोदमें लिये आया और कहने लगा—सरकार, छोटे सरकार आपको बुलाने आये हैं।

दुलालने उसीका अनुकरण करके तुतलाते हुए कहा—दादा चल चलो।

दुलालकी बोली सुनकर मैं कुछ ठण्ढा हुआ। मेरी नजर लग जानेके भयसे मालकिन जिस लड़केको सदा मुझसे छिपाये रखनेकी चेष्टा करती रहीं उसीको बुलानेके लिये भेजा है! मैं सदासे स्नेहवञ्चित था। दुलालकी स्नेहभरी बातें सुनकर मेरा दिल पिघल गया। मेरा चित्त डावांडोल हो चला। मैं सोच रहा था कि फिर चलूं। इसी समय देवीबाबू भीड़ चीरते मेरे पास आये और मेरी पीठ ठोंककर कहने लगे—शाबाश! यही उचित था। इसीको मनुष्यत्व कहते हैं।

मेरी सारी दुर्बलता दूर हो गई। मैंने दृढ़ होकर कहा—मैं तुम्हारी माका स्नेह चुरानेके लिये नहीं ठहर सकता।

देवीबाबू मुझे अपने घर ले गये। उनकी पत्नीने पूछा—रास्तेके लिये कुछ पासमें है कि नहीं और मुझे कुछ रुपया देना चाहा।

मैंने उत्तर दिया—मेरे पास काफी सामान है। इतना कह उनसे बिदा हो मैं स्टेशनकी तरफ चलने लगा। पर देवीबाबूकी पत्नीने जिद् कर कुछ खानेका सामान मेरे साथ कर दिया।

मेरे घर छोड़नेकी खबर चारों ओर फैल गई। मदनपुरसे स्टेशन तक प्रायः मनुष्योंकी भीड़ लगी रही। कितने ही लोग अपनी अपनी गाड़ियां लेकर आते और उसपर चढ़कर चलनेकी प्रार्थना करते। पर मैंने स्वीकार करना उचित नहीं समझा। रास्तेके ग्रामोंकी बहूटियां आ आकर मुझे आग्रहपूर्वक प्रणाम करतीं और मेरी अवस्थापर चार आंसू बहातीं। यह सब देखकर मुझे अकथनीय आनन्द मिलता। मैंने अपने मनमें सोचा--यह मानवजीवन कितना उन्नत और उदार है। जिससे कभीकी जान-पहचान नहीं, जिससे अपना किसी तरहका स्वार्थ नहीं, उसके साथ इस तरहकी सहानुभूति, उदारता नहीं तो और क्या है। वह दृश्य मुझे कभी नहीं भूलता। मैं सदा उसको स्मरण रखता हूं और वही मेरे जीवनका पथ-प्रदर्शक है।

जिन्हें लोग साधारण जन कहते हैं, जिनकी गणना मनुष्योंमें नहीं करते, उन्हींने मुझे महान् शिक्षा दी। जिस मानव प्रकृतिके प्रति मेरे हृदयमें भीषण घृणाके भाव उत्पन्न हो गये थे, उसीके प्रति इनसे मैंने अनुकम्पा सीखी। मैं इनका कितना ऋणी हूं नहीं कह सकता।

मार्गमें घनघोर वर्षा आई। मैं भीगता आगे बढ़ा जा रहा था और मेरे साथ अन्य अनेक लोग भी। लोग कहने लगे—

आपका यह दुःख देवता भी नहीं देख सकते। शोकसे अधीर होकर वे रो रहे हैं और आंसू गिरा रहे हैं।

मार्गमें भीगा कपड़ा बदलकर विश्राम करनेके लिये लोगोंने अनेक तरहसे अनुरोध किया। दुलालके जमींदारीके तहसीलदार लोगोंने भी कम आग्रह नहीं किया, पर मैंने स्वीकार नहीं किया और उसी अवस्थामें सीधे स्टेशन पहुंचा।

स्टेशन पहुंचनेपर भी निस्तार नहीं था। सैकड़ों आदमी मेरे साथ स्टेशन तक गये थे। मेरे साथ इतनी बड़ी भीड़ देखकर यात्री भी आकर मेरे चारों ओर खड़े होगये। उसी समय स्टेशन-मास्टरने आकर मुझसे कहा "मदनपुरके मैनेजरका तार आया है और आपके लिये फर्स्ट क्लासकी एक सीट रिजर्व हो गई है।" मैंने उन्हें धन्यवाद दिया और उस टिकटसे जाना अस्वीकार किया। निदान थर्ड क्लासका टिकट खरीदकर मैं कलकत्ताके लिये रवाना हुआ।

कलकत्ता पहुंचकर भी मेरा पिण्ड न छूटा। गाड़ीसे उतरा ही था कि सामने दुलालके कलकत्तेके घरके मुनीब साहब सामने आ खड़े हुए और घर चलनेके लिये आग्रह करने लगे। मदनपुरसे मैनेजर साहबने तार दे दिया था। मैंने उन्हें भी बिदा किया। पर इस व्यवहारसे मातङ्गिनी देवीकी तरफसे जो मेरे हृदयमें विकार उत्पन्न हो गया था वह कई अंशोंमें दूर होगया।

कलकत्ता पहुंचकर बड़े बाजारकी एक धर्मशालामें मैंने डेरा दिया। भोजनका कोई ठीक बन्दोबस्त नहीं था। एक बेला होटलमें

खा लेता था और शामको चना चबैनापर दिन काटता था। दिनभर मैं घूम घूमकर नौकरीकी तलाश करने लगा। पर कोई भी काम न मिला।

मेरी आकृति और मेरी दशा देखकर लोग आश्चर्य करते और सहसा मेरी बातोंपर विश्वास भी न करते। इसी तरह मैं मारा मारा फिरता रहा कि एक मारवाड़ी सज्जनने ५) रु० मासिकपर लड़का पढ़ानेके लिये मुझे नियुक्त कर लिया। बेकार रहनेके बनिस्वत मैंने उसे स्वीकार कर लेना ही उत्तम समझा।

इसीके बाद एफ० ए० परीक्षाका परिणाम निकला। मुझे १५) रु० मासिक वजीफा मिलने लगा। मेरा हृदय आशान्वित हो उठा। किसी न किसी तरह पढ़ाई जारी रख सकनेकी सम्भावनाने मेरा चित्त प्रफुल्लित कर दिया। एफ० ए० मैंने प्रेसिडेन्सी कालेजसे पास किया था। पर अब उस कालेजमें पढ़ना सम्भव नहीं था, क्योंकि फीस इत्यादि उसमें बहुत अधिक थी। इससे मैं उस कालेजको छोड़कर यहां चला आया। अब मैं कोई सस्ता बासा खोजने लगा और भाग्यवश कालिदासने सहायता की। इसके बाद मुझे ट्यूशन भी अच्छा मिल गया। अब तो भाग्यदेवीकी चारों ओरसे कृपा होने लगी।

मेरे भाग्यसे कालिदासकी विशेष कृपा रहती थी। उनसे प्रेम दिन दिन बढ़ता गया। उन्हींके द्वारा रजतसे मैत्री हुई। मातृस्नेहका वञ्चित आज पुनः मातृलाभ किया। स्नेहकी मूर्ति भौजाई मिली। मेरी सारी विपत्ति एक बार ही भाग गई।

भाग्यदेवीने अपना प्रकाश पूर्णतया फैला दिया। मेरे चित्तमें क्लेश नहीं था पर आनन्द भी नहीं था। पर इस समय मा, भाई, भौजाई पाकर मेरा मन आनन्द-सागरकी तरङ्गोंमें डूब उतरा रहा है।

(सात)

गोष्ठी ।

अपने जीवनकी विचित्र कहानी समाप्त कर शिशिर चुप हो गया। कमरेमें निस्तब्धता छा गई। श्रोतागण विस्मयसे चित्र-वत् हो रहे थे। शिशिरकी विचित्र आत्म-कहानी सुनकर लोगों-का दिल भर आया। शिशिरने देखा कि सबका चेहरा गम्भीर हो रहा है, तरह तरहके भाव लोगोंके हृदयमें पैदा हो रहे हैं, चेहरे-का रंग प्रतिक्षण बदलता जा रहा है। किसीको बोलनेका साहस नहीं हो रहा है, यह देखकर अपनी हंसीसे शान्ति भंग करता हुआ बोला—दस बज रहा है अब मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये।

सुनयनीकी आंखोंसे अविरल अश्रुधारा बह रही थी। वह किसी तरह आंसू पोंछकर केवल इतना ही बोल सकी—बेटा!

शिशिर हंसते हंसते संध्यासे बोला—आज तो पढ़ना लिख-ना कुछ नहीं हो सका। कल जल्दी ही आकर इसकी कसर मिटा दूंगा।

संध्या भी रो रही थी। किसी तरह अपनेको सम्हालकर उसने कहा—कल तो शनिवार है। कल हमलोग गाना बजाना सीखते हैं। तब भी विद्युतके आनेके पहले कुछ पढ़ लूंगी।

इसपर रजत बोला—विद्युत ६ बजे आवेगी। शिशिर चार

बजे ही कालेजसे आकर तुम्हे पढ़ा देगा। उसके बाद मैं शिशि-रको संगतमें ले जाऊंगा।

शिशिर—भाई रजत, अभी मुझे यहाँ आये केवल पाँच दिन हुए हैं। मेरा किसीसे परिचय नहीं। यह विद्युत और संगत कौनसी बला हैं।

रजतके कुछ कहनेके पहले ही संध्या बोल उठी—विद्युत मेरी सखी है। हम दोनों एक साथ ही पढ़ते थे और इण्ट्रेंस पास किया था। इस समय विद्युन बी० ए० में पढ़ रही है। वह प्रति शनिवार मुझे गाना बजाना सिखाने आती है।

रजत—प्रत्येक शनिवारको यहाँ कई एक साहित्य सेवियोंकी एक मित्रमण्डली एकत्रित होती है। पारी पारीसे प्रत्येक अपनी रचना सुनाता है और उसपर टीका टिप्पणी की जाती है। 'संग्रह' पत्रके सम्पादक भूधर बाबू इस संगतके सभापति हैं और मैं मन्त्री हूं। तुम्हें भी सदस्य बना लूंगा।

शिशिर—(हंसकर) सदस्य होनेमें किन किन नियमोंका पालन करना पड़ता है ?

रजत—डरनेकी कोई बात नहीं है। प्रत्येक सदस्यको वर्ष भरमें कमसे कम तीन स्वकीय रचना पढ़कर सुनानी पड़ती हैं।

शिशिरने कहा—भाई! इससे बढ़कर और कौनसी विपत्ति हो सकती है। जिसने परीक्षाके लिये छोड़कर कभी निबन्ध लिखना नहीं जाना भला वह किस तरह संगतमें प्रविष्ट होनेका साहस करेगा।

संध्याको शिशिरकी कातर दशापर दया आगई, पर साथ ही उसके हृदयमें एक प्रकारका अनिर्वचनीय गर्व भी हो आया। उसने रजतको लक्ष्य कर शिशिरसे कहा—क्या आप कुछ नह लिख सकते ! पर आपके भाई साहब तो छोटेपनसे ही लिखते हैं। अभी उस दिन यही बात मा बोल रही थीं। कितनी ही किताबें लिख डाली हैं। मैं आपको किसी दिन दिखलाऊंगी।

अपनी पत्नीके मुंहसे अपनी प्रशंसा सुनकर रजत फूल उठे। पर तुरत ही बोले—संध्या, तुम्हें इस तरह कहना उचित नहीं। यह साधारण बात है कि मेरा लिखा तुम्हें भाता हो, पर शिशिरके साथ उसकी तुलना करना सर्वथा अनुचित है।

संध्या शर्मा गई। उसने देखा कि पतिदेवकी प्रशंसामें मुग्ध होकर उसने कुछ अनुचित अवश्य कह डाला। उसका सिर लज्जासे नीचा होगया।

शिशिरने यह बात देखी। संध्या देवीको सन्तोष देनेके लिये उसने कहा—रजतरायका नाम बंगला जाननेवाला कौन नहीं जानता। इनके लेखोंको पढ़नेके लिये लोग सदा उत्सुक रहते हैं। "संग्रह"के प्रकाशित होनेकी प्रत्येक मास प्रतीक्षा किया करते हैं। फिर यदि सन्ध्याने उनकी प्रशंसा की तो कौन बड़ी बात हो गई।

संध्याका चेहरा खिल उठा। लज्जा आपसे आप दूर होगई। उसने अपना सिर ऊपर उठाया और एक बार रजतकी ओर देखा। उसकी दृष्टि साफ कह रही थी कि विजय मेरी है। मैंने जो कुछ कहा था, सच था।

अपनी प्रशंसा सुनकर रजत हंसने लगा।

पुत्रकी प्रशंसा सुनकर सुनयनी देवीकी भी छाती गर्वसे फूल उठी। शिशिरकी पीठपर हाथ फेरते हुए उन्होंने कहा—इस झगड़ेका कभी अन्त होगा या नहीं। ग्यारह बजने चाहते हैं। बल्कि कल फिर तय कर लेना। चलो सब सोने चलो। इतनी राततक जागना ठीक नहीं। शिशिर! तुम भी यहीं सो रहो।

शिशिरने कहा—नहीं मा! अभी कोई हर्ज नहीं है, मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये। यह कह शिशिर सुनयनीको प्रणाम करने लगा।

सुनयनीने कहा—दिनमें कितनी बार प्रणाम करोगे बेटा!

शिशिरने गम्भीर स्वरमें कहा—जिन चरणोंमें प्रतिक्षण... बीचमें ही सुनयनीने बाधा डालकर कहा—अच्छा, अच्छा, तुम इस समय जाओ।

शिशिर प्रसन्नचित्त अपने बासाको लौट गया।

* * *

इस सम्मिलनमें विचित्र आनन्द था। एक दूसरेको श्रद्धा भक्तिसे देखता था। शिशिरकी आत्मकहानीने सुनयनी देवी और संध्याको इस प्रकार वशीभूत कर लिया था कि वे दोनों शिशिरको महात्मा समझती थीं जो शापभ्रष्ट होकर उन लोगोंके बीचमें आगया हो। इससे शिशिरपर उनकी अपार श्रद्धा भक्ति और अनुकम्पा थी। शिशिर इन दोनोंकी दया और अनुरागके स्रोतमें इस प्रकार परिप्लावित हो रहा था कि वह उन्हें कोई शापभ्रष्टा स्वर्गीया देवी समझता था।

केवल रजतकी धारणा भिन्न थी। वह धनीका पुत्र था। धनका उसे दम्भ था। उतने ऊपर उसकी आत्मा उठ ही नहीं सकती थी। उसके हृदयमें गर्वभरे भाव भरे थे कि वह अपने साथीकी सहायता कर रहा है। उसे अपनी समृद्धिका अभिमान था। अपने मुंहसे कुछ न कहनेपर भी ये भाव स्पष्ट हो जाते थे। यों तो कक्षामें अन्य अनेक धनीके लड़के थे पर उसकी बराबरी कोई नहीं कर सकता था। जो एकाध थे भी वे उसकी चापलूसीमें ही परम आनन्द मानते थे। अन्य बातोंमें भी रजत अपनेको इनसे श्रेष्ठ मानता था। इतनी छोटी अवस्थामें बङ्गालमें दो एक प्रसिद्ध व्यक्तियोंके अतिरिक्त रचना-शक्तिका किसीने परिचय नहीं दिया था। प्रसिद्ध पत्र "संग्रह" रजतके लेखोंको स्थान देता था, यह कम गौरवकी बात नहीं थी। इस बातसे कालेजके लड़कोंपर रजतका बड़ा प्रभाव था। रजतकी प्रत्येक बातको वे पूर्ण श्रद्धाके साथ सुनते। रजत देश विदेशके अनेक विद्वानोंकी चर्चा कर उनके विषयमें अनेक तरहकी बातें अपने सहपाठियोंको सुनाता। वे भी उसकी इन अनोखी बातोंमें बड़े बड़े विद्वानोंकी बातोंको--जिनका इन लोगों-ने नाम तक नहीं सुना था--बड़े चाव और आश्चर्यके साथ सुनते और रजतकी प्रगाढ़ विद्वत्तापर विस्मित होते। रजत भी इन बातोंको देख सुनकर अपनेको सर्वश्रेष्ठ समझता था। यह तो था ही, इधर जबसे शिशिरसे उसकी मैत्री हुई तबसे उसके हृदयमें नवीन आन्दोलन उपस्थित हो रहा था। उसने देखा कि शिशिर

उससे हर तरह चढ़बढ़कर है। इससे उसपर विजय प्राप्त करना, उसके ऊपर अपना श्रेष्ठत्व कायम करना उसने निश्चय किया। रजतने एक बात सीखी थी। वह सदा इस बातका अनुसन्धान किया करता था कि अमुक व्यक्तिमें क्या कमी है, कौनसी दुर्बलता है। यह जानकर वह उसी तरफ आक्रमण करता था। उस रातकी बातचीतसे उसे शिशिरकी दुर्बलताका पता लग गया था। उसने सोचा कि यहां उसपर मेरी श्रेष्ठता अवश्य स्थापित हो जायगी। यह सोचकर उसका हृदय प्रफुल्लित हो उठा, पर उसके त्यागकी बराबरी वह नहीं कर सकता, इसका ध्यान कर उसका हृदय क्षणभरके लिये खिन्न हो गया। पर यह ख्याल कर कि उसने सहजमें ही उसे अपना दानपात्र और दयापात्र बना लिया है, उसे सन्तोष हुआ।

(आठ)

शनिवारकी बैठक ।

आज शनिवार है। आज शामको सन्ध्याके गाना बजाना सीखनेका दिन है और रातको रजतकी संगत बैठेगी, यह सोच-कर शिशिर कालेजसे आते ही जलपान कर संध्याको पढाने बैठ गया। थोड़ी देर पढ़ानेके बाद शिशिरने कहा—भाभी, आपने रजत भाईकी लिखी पुस्तकें दिखानेको कहा था ?

संध्याने शर्माकर कहा—नहीं, आपलोग केवल दूसरोंकी हंसी उड़ाना जानते हैं। सच कहनेमें भी उन्हें बुरा मालूम होता है। आप लोगोंके सामने कुछ कहना सुनना धृष्टता है।

शिशिरने हंसकर कहा— भला आपके साथ दिल्लगी ! मुझसे यह धृष्टता नहीं हो सकती।

सन्ध्या निरुत्तर होगई। लाचार अपनी जगहसे उठी और रजतकी लिखी पुस्तकें लाने चली गई।

शिशिर कमरेमें अकेला रह गया। इसी समय एक तरुणी रमणीने घरमें प्रवेश किया। उसकी उमर संध्याके लगभग थी। उसका शरीर पुष्पकी भांति कोमल और मुख-कांति दीप-शिखाकी भांति उज्ज्वल थी। उसकी सुन्दरता, सौष्ठवता और कमनीयता कमाल करती थी। उसके अंग अंगसे लावण्य चू पड़ता था। उसके चेहरेसे प्रगाढ़ विद्वत्ता टपकती थी।

उसकी वेषभूषामें नितान्त सादगी थी। शमादानके ऊपर जिस तरह शीशेका आवरण रख देनेसे प्रकाश और भी तेज होकर फैलता है उसी प्रकार इस सादगीने उसकी कान्ति कमनीयताको और भी दीप्त कर दिया था। भंवरोंकी पंक्तिको मात करनेवाले उसके केशपाश भली प्रकारसे संवारे हुए थे। उसकी काली काली दोनों पुतलियां चञ्चल थीं। उसके उन्नत भ्रू-विलास उसके मुखकी रमणीयताको और भी अधिक बढ़ा रहे थे। उसके बदनपर चार पांच साधारण आभूषण थे। उसके मुख-पर सदा विराजमान विद्युत्प्रभाकी नाईं हंसी समग्र आभूष-णोंसे बढ़कर थी।

उसे देखते ही शिशिर समझ गये कि हो न हो यही विद्युत है। उसकी रूपराशिने शिशिरको आंखोंमें चकाचौंध डाल दिया। उसका चित्त चंचल हो उठा। विद्युतके प्रभावसे शिशिर सहम गया।

शिशिर सतृष्ण नेत्रोंसे उसकी ओर टकटकी लगाकर देखने लगा। विचारी विद्युत सकुचा गई। फिर उसने मन्द मुसका-नसे पूछा—संध्या कहां है?

विद्युतके मुखसे निकले ये शब्द शिशिरको अमृतवत् प्रतीत हुए। उस सुधावचनने शिशिरपर विचित्र काम किया। उठ-कर खड़े हो गये और बोले—आप आइये बैठिये, भाभी अभी आती हैं।

विद्युत विना किसी सङ्कोचके आरामकुर्सीपर बैठ गई।

यद्यपि वह हंस नहीं रही थी तथापि उसके चेहरेपर स्थित मुस-क्यानकी पतली रेखा दौड़ रही थी।

विद्युतके बैठ जानेपर शिशिर अपने स्थानपर बैठ गये। क्षण-भर चुप रहे, फिर उन्होंने पूछा—क्या आपका ही नाम विद्युत है?

इस प्रश्नसे विद्युतको जरा हंसी आ गई, पर तुरन्त ही लज्जाने आघेरा। अवनतमुखी हो उसने दबी जबानसे कहा—जी हां। मैं देखती हूं कि आपको मेरा परिचय मिल चुका है। पर मुझे आपके परिचयका अभीतक सौभाग्य प्राप्त नहीं हुआ।

इस युवतीके प्रगल्भतापूर्ण वचन विन्यासपर शिशिर मुग्ध हो गया। उसने चाहा कि संक्षेपमें मैं स्वयं अपना परिचय इसे दे दूं। इसी समय पीछेसे सन्ध्याके शब्द सुनाई दिये—ये हमारे देवरजी हैं। इनका नाम शिशिर है। इतना कहती सन्ध्या कम-रेमें प्रविष्ट हुई। शिशिर और विद्युतके बीच खड़ी होकर उसने एक बार शिशिर फिर विद्युतकी ओर देखा और हंसती हुई विद्युतसे बोली—तुम मेरी शिक्षिका हो और ये मेरे शिक्षक हैं।

विद्युतने सतेज नेत्रोंसे सन्ध्याकी ओर देखा।

सन्ध्याने इसका जवाब हंसकर दिया। विद्युत मेरा यह अभिप्राय नहीं है। पर जो भावना इस समय तुम्हारे मनमें उठी है उसे यदि ईश्वरने कभी भी चरितार्थ किया तो उससे बढ़कर प्रसन्नताकी बात हमलोगोंके लिये और क्या हो सकती है।

शिशिरने देखा कि विद्युत बेतरह शर्मा गई है। इससे उसने सन्ध्यासे कहा—भाभी जरा आपकी वह पुस्तक देखें।

सन्ध्या—आज और कल उसे देखनेकी जरूरत नहीं। उससे भी सुन्दर चीजें देखनेको मिलेंगी।

इतना कहकर सन्ध्या अपने आंचलमें मुख छिपाकर खिल-खिलाकर हंसने लगी।

शिशिर अचम्भित होकर सन्ध्याका मुंह देखने लगा।

विद्युतने बनावटी क्रोधसे कहा—जा मर। इतनी हंसी किस कामकी।

लाचार सन्ध्याने अप्राकृतिक गम्भीरता धारण कर कहा—इसमें मेरा क्या दोष है? देवरजीके साथ तुम्हीं बात करके देख, विना हंसे रहा जाता है?

विद्युतने हंसकर धीरेसे कहा—मैं तुम्हारे देवरजीके साथ खामखाह क्यों बात करने लगी।

सन्ध्याने हंसते हंसते मुंह बनाकर कहा—अब क्यों न कहोगी। सत्तर चूहा खाकर बिलैया भगतिन बनने चली हो। अभी मैं नहीं थी तब तो छेड़ छेड़कर बातें होती थीं और अभी इतनी ही देरमें यह वैराग्य उत्पन्न हो गया। मैं भी खूब जानती हूं। मनमें भावे मुड़ी हिलावे, इसीको कहते हैं। पर मैं यह बतलाये देती हूं कि मेरे देवरजी ऐसे ही हैं कि सहजमें अपने वश कर लेते हैं

शिशिर—भाभी! यह बात सर्वथा ठीक नहीं है। किसीको अपने वश किस तरह किया जाता है यह तो मैंने कभी सीखा ही नहीं। पर यदि कोई मुझे अपने वश करना चाहे तो मैं एक क्षणमें ही उसका हो जाता हूं, जैसे आपलोगोंने मुझे...

सन्ध्या विद्युतके पास बैठ गई और उसके कानमें कहने लगी—देख विद्युत, हमलोगोंकी ओटमें देवरजीने तेरे पास यह दरखास्त भेजी है। तुझे उचित है कि तू इसे स्वीकार कर ले।

विद्युतका चेहरा मारे शर्मके लाल हो गया। उसने अपना मुंह दूसरी ओर फेर लिया और धीरेसे सन्ध्याको चिकोटी काटा।

संध्या उंह करके चमक उठी।

शिशिर अपनेको किसी तरह भी रोक न सका। उसने हंसकर कहा—भाभी ! क्या विद्युत (विजली)के करेण्ट (धारा) का शाक (धक्का) लगा है क्या ?

विद्युत बेहद शर्मा गई। उसने संध्याको पकड़कर जबर्दस्ती अपने पास बैठाया और धीरेसे बोली—तू अपने देवरजीको लेकर चुहुलबाजी कर, मैं तो जाती हूं।

सन्ध्याने उसके मुंहके पास अपना मुंह ले जाकर कहा—नहीं ऐसा कैसे हो सकता है। देवरजी तुम्हारा गाना सुननेके लिये बैठे हैं। चलो, पियानोके पास।

यह कहकर संध्याने विद्युतको पियानोंके पास कुर्सीपर बैठा दिया।

शिशिरने कहा—भाभी ! मैंने तो आपका ही गाना कभी नहीं सुना।

सन्ध्या—मुझे तो तीस दिन यहीं रहना है। किसी दूसरे दिन सुना दूंगी। आज और कल विद्युतकी बारी है।

पियानोपर अंगुली फेरते हुए विद्युतने संध्यासे कहा—आ भाई, तू भी मेरे साथ सुर भर।

सन्ध्या—नहीं, मैं अपना सुर मिलाकर देवरजीके प्रथम प्रभावको कम करना नहीं चाहती।

विद्युतने फिर बनावटी क्रोधसे आंखें तरेरकर सन्ध्याकी तरफ देखा और फिर पियानोसे सुर मिलाकर गाना शुरू कियाः—

"गीत सुधारस पान करनको व्याकुल चित्त रहे।"

शिशिर भी गाने बजानेमें होशियार था। शिवशंकर बाबूने गवैया रखकर शिशिरको गाने बजानेका अच्छा अभ्यास कराया था। आत्मकथा कहते समय शिशिर इस बातको कहना छोड़ गया था। शिशिरने देखा कि विद्युतका गला अत्यन्त मधुर और सरस है तथा गान विद्यामें वह अत्यन्त निपुण है। उसकी राग उतार, चढ़ाव, ध्वनि और मूर्छनासे युक्त है। गीत समाप्त होनेपर शिशिरने कहा—आप गान विद्यामें बड़ी निपुण हैं। आपको बड़ी उत्तम शिक्षा मिली है।

विद्युत—मेरी मा खूब गाना बजाना जानती है। छोटेपनमें ही उनकी शिक्षा सुबोध उस्ताद द्वारा हुई थी। मैंने सब मासे सीखा है।

सन्ध्याने हंसते हंसते कहा—विद्युत नाचना भी अच्छा जानती है, देवरजी!

विद्युतने पुनः क्रोधभरे नेत्रोंसे संध्याकी ओर देखा और तुरन्त लज्जाके मारे सिर नीचा कर लिया।

शिशिर—नाचना जानना कोई लज्जा या हीनताकी बात नहीं है। प्राचीन समयमें इस पवित्र देशमें नाचना जानना भी उत्तम गुण माना जाता था। आज उस विद्याका सर्वथा लोप हो गया है और उसका नाम भी इतना कलङ्कित कर दिया गया है कि सहसा उसे अपनानेका किसीको साहस नहीं होता। यही कारण है कि इस देशमें आनन्द और मन प्रफुल्लित करनेका कोई साधन नहीं रह गया है। नाच और गानसे हृदयकी तन्त्रियां खिल उठती हैं। इस देशके बाहर सर्वत्र नाचना समाजके आनन्दका एक अङ्ग है। आप एक गाना और गायें, मैं बेला या इसराज लेकर सुर भरूंगा।

संध्याने विस्मयसे कहा—आप सङ्गीत शास्त्रके भी पूर्ण विद्वान हैं। इसे तो आप हमलोगोंसे आजतक छिपाये रहे। (धीरेसे विद्युतसे) देख, देवरजीने इस बातको आजतक छिपाकर तेरे लिये रख छोड़ा था।

विद्युतने क्रोधभरी दृष्टि संध्याकी ओर फेरी और एक कटाक्ष शिशिरकी ओर पात किया। विद्युतकी आंखोंसे ज्योति निकल रही थी।

शिशिरने शर्माकर कहा—इसकी चर्चाका आजतक कभी अवसर ही न मिला। आज अवसर मिला तो बता दिया। पर मेरा बजाना सुनकर आपलोग हंस पड़ेंगी और अपने मनमें यही कहेंगी—"तावच्च शोभते मूर्खो यावत्किञ्चिन्न भाषते"।

संध्याने बेला लाकर शिशिरके सामने रख दिया और कहा—अभ्यर्थना रहने दीजिये। सुर मिलाइये।

विद्युतने पियानो बजाना शुरू किया। शिशिर बेला लेकर उसके पीछे जा खड़े हुए और पियानोके सुरमें सुर मिलाकर बजाने लगे। उस समय विद्युतने गाया :—

"वैराग्य योग कठिन ऊधो हम न करब हो"

ध्वनि और मूर्छनाके साथ साथ सुमधुर गिटगिरी और उसके साथ ही पियानो और बेलाका सुर मिलाकर बजना गानेमें विचित्र चमत्कार डाल दिया।

गीत समाप्त होनेपर संध्याने कहा—आप गान विद्यामें इतने चतुर हैं और आजतक इसे हमलोगोंसे छिपा रखा। आपका हाथ किस कदर मंजा हुआ है। अब एक गीत आपको गाना होगा।

शिशिरने हंसकर कहा—कोकिलाके मृदु रवके सामने काकका कर्णकटु रव? क्या मैं पागल हो गया हूं।

विद्युत—जो बजानेमें इतना सिद्धहस्त है वह गानेमें जरूर ही कमाल करता होगा। मैंने विना किसी अभ्यर्थनाके गाना शुरू कर दिया था। पर आप तो······इतना कहते कहते विद्युतने शर्मीली आंखोंसे शिशिरकी ओर देखा।

शिशिर—मैं विना किसी ख्यालके गानेको तैयार हूं। पर मेरा गाना सुनकर आपलोग केवल हंसेंगी।

संध्याने बनावटी क्रोध दिखाकर कहा—जब मैंने कहा तब तो आपने नहीं गाया पर अब विद्युत (बिजली)का असर आपपर भी होने लगा है। क्यों···

विद्युतने जोरसे चिकोटी काटकर सन्ध्याका मुंह बन्द कर दिया। सन्ध्या हंसने लगी। शिशिर लजा गया। उसने स्नेहभरे नेत्रोंसे विद्युतकी ओर देखकर कहा—अच्छा तो आप बेला लीजिये, भाभीको इसराज दीजिये और मैं पियानो बजाता हूं।

पियानो बजाकर शिशिरने गाया:—

"प्रभुजी! तुम चरणन चित लाग्यो।"

सन्ध्या विद्युतके नजदीक जाकर धीरेसे कहने लगी—देव-रजी, गीतकी ओट अपने हृदयका सन्देश तुमतक पहुंचा रहे हैं।

विद्युत गीतमें इतनी रम गई थी कि उसे सन्ध्याकी बातोंका उत्तर देनेका भी अवसर नहीं था। उसने उन्हें सुनकर भी अनसुनी कर दिया। वह इस बातपर विस्मय प्रगट कर रही थी कि क्या पुरुषका कण्ठ भी इतना मृदु और मधुर हो सकता है। इनके सामने तो कोकिलकण्ठी स्त्री भी मात है। इनकी मृदु-लता और माधुर्य्य वर्णनातीत है। गलेमें क्या ही चमत्कार है। इस अपरिचित युवकने अपनी विद्याकी प्रखरता, व्यवहारकी सौष्ठवता और संगीतकी गम्भीरतासे विद्युतके हृदयपर अपनी छाप जमा दी। समय समयपर सन्ध्याके वाग्वाण और कटाक्षने उसकी स्मृतिको और भी सजीव कर दिया। विद्युत इस अज्ञातकुलवंश युवकका परिचय पानेके लिये अधीर हो उठी।

गीत समाप्त कर शिशिरने मुंह फेरकर देखा कि दरवाजेपर मा सुनयनी देवी और रजत उन्मुग्ध खड़े हैं। गीत समाप्त होते देखकर वे लोग भी कमरेमें आ गये। सुनयनीने कहा—

शिशिर, तेरे पेटमें इतनी विद्या भरी है। इस तरहका गाना तो मैंने कभी भी नहीं सुना था।

शिशिर उठ खड़ा हुआ और हंसकर बोला—माताकी दृष्टिमें पुत्र सदा अतुलनीय ही रहता है।

सुनयनीका हृदय प्रफुल्लित हो गया, बोली—शिशिर! तुम मेरे पुत्र बनकर पक्षपात करते हो। रजत धन्य है जिसे ऐसा मित्र मिला।

रजतने हंसकर कहा—मैं भी तो आपका एक रत्न हूं। पर आपके कनिष्ठ पुत्रके सामने मैं किसी योग्य नहीं रह गया।

शिशिर झट बोल उठा—भाई! सच बात तो यह है कि सारा बंगाल रजतरायके नामसे परिचित है पर शिशिर चक्रवर्तीका तो नाम भी किसीने न सुना होगा।

रजत—कुछ नहीं कहा जा सकता। भाई, तुम्हारे पेटमें जिस तरह विद्या भरी है उसके सामने तो अपने सिरपर नाम खोदाकर चलनेपर भी मेरी वकत नहीं।

शिशिर—भाई, मैं उस विषयमें एकदम अनाड़ी हूं। किसी बातकी आशंका मत करना।

रजत—यह तो आगे चलकर मालूम होगा। अच्छा अब यहांसे चलो। संगतमें चलकर अपनी संगीत विदग्धताका परिचय दो।

शिशिर उठकर रजतके पास जाकर खड़ा होगया और उसके कानमें बोला—यहांसे जानेका जी नहीं चाहता। यहां अधिक रस है।

रजतने हंसकर कहा—आज चलो, कल मैं तुम्हें न छेड़ूंगा।

लाचार शिशिर जानेके लिये प्रस्तुत हुआ। पर विद्युतको छोड़कर जानेकी उसे रत्तीमात्र भी इच्छा न थी। चुम्बक पत्थरकी भांति विद्युत उसके चित्तको अपनी ओर खींच रही थी। उसने विद्युतकी ओर दृष्टि फेरकर कहा—आज क्षमा! विद्युतने लज्जासे सिर नीचा करके मृदु विनम्र स्वरसे कहा—फिर दर्शन दीजियेगा।

रजत और शिशिरके बाहर होते ही सुनयनी देवी भी कमरेसे चली गईं। एकान्त पाकर विद्युतने संध्यासे पूछा–ये कौन हैं? आजके पहले इन्हें यहां कभी नहीं देखा था और न इनकी चर्चा ही कभी सुनी थी।

संध्याने हंसकर कहा—क्यों! धीरे धीरे विकलता बढ़ रही है। देखा! ऐसा सुन्दर और सुयोग्य वर मिलना दुस्तर है। यदि तुम्हारी इच्छा हो तो मैं चेष्टा करूं। आसार अच्छे नजर आते हैं क्योंकि दोनों तरफ़ असर हुआसा प्रतीत होता है।

विद्युतने बनावटी वैराग्य दर्शाकर कहा—क्या अण्डबण्ड बक रही हो। यदि किसी राह-चलतूसे नजर लड़ भी जाय तो क्या मिलाप करना उचित है?

संध्या—पहले देवरजीकी महत्वपूर्ण आत्म-कथा सुन, पीछे विचार करना कि मिलाप करनेका प्रस्ताव उचित है कि नहीं। इतना कहकर संध्या विद्युतको शिशिरकी आत्मकहानी सुनाने लगी।

शिशिरकी आत्मकहानी कहते कहते संध्याका चेहरा गम्भीर हो गया। विद्युतकी आंखोंसे आंसुओंकी धारा बह रही थी।

क्षणभर ठहरकर संध्याने विद्युतसे पूछा—देवरजी तुम्हें कैसे लगे? क्या उनमें उत्कृष्ट मनुष्यके सभी गुण वर्तमान नहीं हैं?

विद्युत कुछ बोल न सकी। उसने अपने हाथसे संध्याका हाथ जोरभर दबा दिया। उसके हृदयमें उस समय कैसे कैसे भाव उदय हो रहे थे वह उन्हें व्यक्त नहीं कर सकती थी।

थोड़ी देरतक दोनों चुप रहीं। फिर विद्युतने कहा—अब गाना जमना कठिन है। आज जाने दो। कल जल्द आऊंगी।

संध्या भी समझ गई कि शिशिरकी करुणामय आत्म-कथा सुननेके बाद गाना बजाना नहीं हो सकता। बोली—तब चल, संगतकी आलोचना सुनें।

संगत

शिशिर रजतके साथ संगतमें पहुंचा। देखा कि पूर्ण, खगेन, हेम, कालिदास, प्रभृति उसके सहपाठी और अन्य कई भद्र लोग बैठे जलपान कर रहे हैं।

कमरेमें प्रवेश करते ही रजतने कहा—यही मेरे प्रिय बन्धु शिशिर बाबू हैं, इन्हींकी बातें मैं आपलोगोंसे कह रहा था। आज ये अपने मधुर गानसे आप लोगोंका कर्ण पवित्र करेंगे।

इसके बाद शिशिरको लक्ष्य कर कहा—इन लोगोंका परिचय तुमसे करा दें। (भूधर बाबूकी ओर लक्ष्य कर) आप ही "संग्रह" सम्पादक भूधर बाबू हैं। (एक दूसरे व्यक्तिकी ओर लक्ष्य कर) आप बंगलाके प्रसिद्ध कवि नरेशचन्द्र सेन हैं और आप प्रसिद्ध गल्प-लेखक सन्तोषकुमार घोष हैं और आप प्रसिद्ध इतिहास-वेत्ता यतीन्द्रनाथ मित्र हैं।

शिशिर सबको नमस्कार प्रणाम कर एक तरफ बैठ गया। उसने देखा कि भूधर बाबू अपने नामको पूर्णतः चरितार्थ कर रहे हैं। जैसे वे लम्बे चौड़े, वैसे ही मोटे भी हैं। उनकी अवस्था प्रायः चालीस वर्षकी होगी। नरेश दुबला पतला है, श्यामवर्णका, लम्बा, प्रायः २५ या २६ वर्षका जवान है। चौड़ा चेहरा, गंजा सिर और फ्रेंचकट दाढ़ी। यतीन बाब, एक दम मोछ दाढ़ी

सफाचट, नाकोपर सोनेका चश्मा चढ़ाये थे। भूधर बाबू किसी गिरि गह्वरकी नाईं मुंह बाकर ढेरकी ढेर मिठाई उसमें रख लेते थे और अनर्गल प्रलाप आरम्भ कर देते थे। बिचारा नरेश रोगी मनुष्य डर डरकर एकाध टुकड़ा खा लेता था। अन्य लोग भूधर बाबूके साथ पूर्ण प्रतिद्वन्द्विताके लिये तैयार थे। पर स जमातमें वक्ता एकमात्र भूधर बाबू थे, अन्य सब लोग केवल सुननेवाले थे।

एक समूची पूरीमें चार पांच टुकड़ा आलू रखकर उसे मुख-विवरमें प्रविष्ट करते भूधर बाबू बोले---यदि ऐसी बात है तो रजत बाबू, संगतका कार्यारम्भ आज संगीतसे ही होने दीजिये। हम लोग जलपान भी करते जायंगे और गाना भी सुनते रहेंगे।

रजतकी इच्छा देख शिशिर हारमोनियम ले सुर मिलाकर गाने लगे:—

“ आयि भुवनमनमोहिनी ”

गाना समाप्त हुआ। भूधर बाबू रूमालसे मुंह पोंछते पोंछते बोले—शिशिर बाबू! आपका कमालका गला है। आजतक हम लोगोंकी संगत असुरकी (अ, अर्थात् विना, सुर अर्थात् गायन) संगत रही, आपके शुभ सम्मिलनसे अब यह सुर संगत होगई।

भूधर बाबूके कुछ बोलते ही उपस्थित मण्डली इस तरह हंस पड़ती थी मानों उनके व्यंग भावको उन लोगोंने खूब समझ लिया है। इस बार भी सबके सब कहकहा लगाकर हंस पड़े।

भूधर बाबूने कहा—रजत बाबू, अब आप अपनी गल्प पढ़िये।

रजत गल्प पढ़ने लगे। श्रोतागणमें पूर्ण शान्ति विराजने लगी। लोग इतने दत्तचित्त होकर रजतकी गल्प सुनने लगे, मानों एक भी शब्द कानसे छूट जानेसे अनर्थ हो जानेकी सम्भावना है। केवल सन्तोष रह रहकर पान खा लेता था या कभी कभी एकाध शब्दपर नाक भौंह सिकोड़ देता था, जिससे बोध होता था कि वह भी गल्प लिखता है।

रजतकी गल्प शिशिरको एक दम पसन्द न आयी। न तो कथानक ही पूर्ण योग्यताके साथ बांधा गया था, न वर्णन-शैली ही रोचक थी। पर गल्प समाप्त होते ही यतीन बोल उठा—क्या ही भावपूर्ण गल्प है।

खगेन—यदि सबसे उत्तम नहीं तो उत्तम कहनेमें तो कोई हर्ज ही नहीं होगा। इस तरहकी गल्प केवल रवि बाबूने साधनाके युगमें लिखी थीं।

रजत आत्मप्रशंसा सुनकर पुलकित हो रहा था। लिपि उठाकर ताखपर रखने लगा। इतनेमें भूधर बाबूने कहा—उसे "संग्रह" के लिये दे दीजिये।

रजत (सगर्व)—यह तो आपकी ही वस्तु है। पर मैंने इसे आज ही समाप्त किया है। कई जगह सुधारना है। ठीक करके आपके पास भेज दूंगा।

शिशिरने देखा कि बङ्गला साहित्यमें रजतरायकी ख्यातिके

कई कारण हैं। पहले तो प्रत्येक मास उनके दो तीन लेख किसी न किसी पत्रमें अवश्य निकलते हैं अर्थात् उनका नाम पाठकोंकी आंखके सामने विज्ञानको भांति नाचा करता है। दूसरे इतनीही छोटी अवस्थामें वे गल्प-लेखक हो गये हैं। तीसरे उनके लेख "संग्रह"में प्रकाशित होते हैं। "संग्रह"के सम्पादक भूधर बाबू विकट समालोचक हैं। सहजमें ही किसीका लेख "संग्रह"में नहीं निकल सकता। इससे "संग्रह"में रजतका लेख निकलना विशेष गौरवकी बात थी। चौथे, प्रति शनिवारको रजतकी संगतमें जलपानकी घूस खाकर अन्य साहित्यसेवी उसकी निन्दा (समालोचना) नहीं कर सकते और पांचवें, रजतके पास रजत (चांदी) की कमी न थी।

शिशिरको चुपचाप बैठे देख भूधर बाबूने कहा—शिशिर बाबू अब आपकी बारी है।

शिशिरने शर्माकर कहा—मुझे लिखनेका अभ्यास नहीं।

यह सुनकर खगेन बोल उठा—यदि मौलिक नहीं लिख सकते तो किसी नवीन पुस्तकको लेकर उसकी आलोचना प्रत्यालोचना ही कर डालिये। प्रत्येक व्यक्ति तो मौलिक लिख नहीं सकता।

यतीन बोल उठा—आपको मौलिक लिखना तो सहजमें ही आ जाना चाहिये। आपके दोस्त इतने प्रतिभाशाली लेखक, फिर भी आपमें यह अभाव रह जाय! रजत बाबू दो चार दिनमें ही आपको ठीक कर देंगे।

सन्तोष—आपकी बुद्धि भी मन्द नहीं। दो चार दिनके प्रयाससे ही ठीक हो जायगा।

रजत अतिगम्भीर होकर बोला—मैं शिशिरको सिखा लूंगा। इस सप्ताहके बाद जो शनिवार पड़ेगा उसमें शिशिर अपना निबन्ध पढ़ेगा। इस शनिवारका भार किसी दूसरेपर दे दीजिये।

सन्तोषने आतुरतासे कहा—इस शनिवारका भार मैं अपने ऊपर लेता हूं। तबतक शिशिर बाबू एकाध छोटी मोटी गल्प लिखकर अन्दाजा लगा लेंगे।

भूधर बाबू—यही ठीक रहने दीजिये। 'मधुरेण समापयेत्' के अनुसार हम शिशिर बाबूसे एक गायन और गानेके लिये अनुरोध करेंगे।

शिशिरने चट हारमोनियम उठा लिया और सुर मिलाते मिलाते बोला—जो कुछ मैं जानता हूं उसीके द्वारा सङ्गतकी सेवा किया करूंगा। लेख आदि लिखनेका बखेड़ा मुझसे नहीं उठाया जायगा।

रजत शिशिरके पास ही खड़ा था। मुरब्बीके मतिन उसके कन्धेपर हाथ रखकर कहा—डर किस बातका है, मैं बराबर सुधार करता रहूंगा। दो चार बार लिखनेसे ही हाथ बैठ जायगा, फिर तो कोई कठिनाई नहीं रह जायगी। लिखनेके पहले मेरी गल्पोंको सावधानीसे पढ़ लेना। तुम्हें सब बातें समझमें आ जायंगी।

शिशिरने हंसकर कहा—कहीं ठोंक पीटकर भी आजतक वैद्यराज बनाये गये हैं ?

बगलके कमरेमें बैठकर सन्ध्या तथा विद्युत संगतकी सारी कार्रवाइयां देख रही थीं। सन्ध्याने कहा—देवरजी ठीक कह रहे हैं। आप लिख क्या लेते हैं, लिखना आसान समझते हैं। देवरजीकी प्रकृति जैसी नीरस है उससे तो आशा नहीं कि वे कुछ लिख सकेंगे।

विद्युत केवल हंसकर चुप रह गई।

रजतने शिशिरसे कहा—खैर, इस समय वादविवाद किनारे रखकर गाना गावो।

शिशिरने गायाः—

"यह आदेश महान, कहां लौ पालन करिहों"

(दस)

रहस्योद्घाटन.

संगतका कार्य समाप्त कर तथा अतिथिगणको विदा कर रजत जनानेमें गया। इधर विद्युतको विदा कर संध्या भी अपने कमरेमें आकर "संग्रह"का नया अंक पढ़ रही थी। स्वामीके कमरेमें पैर रखते ही सन्ध्याने अभिमानपूर्ण नेत्रोंसे स्वामीकी ओर देखकर कहा--आपमें तो विचित्र सनक भरी है, आप लिखने क्या लगे, संसारको ही लेखक बनानेका स्वप्न देखने लगे। पर रचना शक्ति कुछ नैसर्गिक होती है, यह ईश्वरकी देनी है, सबको नहीं प्राप्त होती और न यह यत्नसे उपलब्ध है।

पत्नीके मुंहसे आत्मश्लाघा सुनकर रजत फूल उठा। बोला—यह मैं मानता हूं कि रचना शक्ति ईश्वरकी देनी है, पर विदग्ध बुद्धि होनेपर बाह्य चेष्टासे भी यह साध्य है। शिशिरकी बुद्धि विचक्षण है, चेष्टा करनेसे अति उत्तम तो नहीं पर साधारण लेखक वह अवश्य हो सकता है।

संध्या—यह ठीक है। पर आपका सिखाना पढ़ाना कदाचित अच्छा न लगे, इससे मेरी समझमें तो आपको इसके लिये चेष्टा न करनी चाहिये।

रजत—(दयार्द्र भावसे) क्या कह रही हो? इस ख्यालसे मुंह मोड़ लेना मेरे लिये उचित न होगा। बिचारा कितना

दीन और दुःखी है। लिखना सीखकर अखबारोंमें लेख भेजकर मासमें कुछ कमा लिया करेगा। इस काममें सहायता कर मैं उसके लिये उसका भी बन्दोबस्त कर दूंगा।

संध्या—(सन्तुष्ट होकर) यह तो आपने अच्छा सोचा। यदि इस लायक हो जायंगे तो उनके जीवनमें एक सहारा हो जायगा।

रजत—कल रविवार है। कल ही कार्यारम्भ कर दूंगा। शुभस्य शीघ्रम्।

दूसरे दिन दोपहरके बाद रजत शिशिरके बासामें जा धमका। रविवारका दिन था, इससे प्रायः सभी लड़के कहीं न कहीं घूमने चले गये थे। बासामें अकेला शिशिर रह गया था। कागज इधर उधर फैलाकर न जाने वह क्या लिखनेमें व्यस्त था। सहसा रजतको देखकर शिशिर घबड़ासा गया और जल्दी जल्दी उन बिखरे हुए कागजोंको समेटने लगा, मानों चोर चोरी करते पकड़ा गया हो और आत्मरक्षाका प्रयत्न करता हो।

रजतने चट घुसकर एक पुस्तक उठा ली।

शिशिरने छीननेके लिये हाथ बढ़ाकर कहा—भाई रजत, ये सब गुप्त चीजें है, दूसरोंके देखनेके लिये नहीं हैं। उन्हें न देखो।

रजतने शिशिरका हाथ झटकारकर कहा—क्यों, हजरत, डुबकी लगाकर पानीके भीतर जल पीना कबसे सीखा?

इतना कहकर रजत उसके पन्ने उलटने लगा। दस बीस पन्ने उलटकर बोला, अच्छा, यह तो उपन्यास है। पर आरम्भमें

उपन्यास ही लिखने बैठ जाना उचित नहीं। पहले हाथ पकड़ना चाहिये तब पहुंचा। इतने दिनोंके बाद मैंने उपन्यास लिखना आरम्भ किया है। भूधर बाबू प्रभृति तो शैलीकी प्रशंसा कर रहे हैं पर मुझे सन्तोष नहीं है। कथामुखको अन्त तक सम्हालनेमें असमर्थ होनेपर उपन्यास लिखनेका सारा श्रम व्यर्थ हो जाता है। गल्प खराब हुई तो अधिक समय नष्ट नहीं होता।

शिशिर (शर्माकर)—उसे उपन्यास नहीं कह सकते। बड़ी गल्प कहना ही ठीक होगा। और वह श्रम तो मेरी दृष्टिसे व्यर्थ गया ही है, क्योंकि प्रकाशित करनेके लिये तो वह लिखा नहीं गया है। एक तरहसे मैंने बैठकी बेगारी की है, अपने मनोगत भावोंको समय समयपर यथावसर अङ्कित किया है।

रजतने दो चार पन्ने ही पढ़कर देख लिया था कि ये सब साधारण लेखनीका परिचय नहीं देते। उस समय वह पुस्तक पढ़नेमें इतना व्यस्त हो गया था कि उसे शिशिरकी बातोंका जवाब देनेकी भी सुध बुध न रही।

रजत पढ़ने लगा। शिशिर मारे शर्मके नीचे सिर किये बैठा रहा।

एक अध्याय समाप्त कर रजतने सिर उठाया। अपना बड़प्पन प्रगट करनेके लिये नाकभौंह सिकोड़कर बोला—प्रथम प्रयासके ख्यालसे बुरा नहीं कहा जा सकता। कादम्बरीके चरित्रमें अधिकताका दोष आ गया है, इससे वह जरा अस्वा-

भाविक हो गया है और दूसरा दोष यह है कि उसके साथ प्रशान्तका इतने दिन बाद एकाएक मिलाप कराना उचित नहीं था। किसी घटनाचक्रके समावेशसे यह मिलाप कराना अधिक शोभन होता।

शिशिर (उदास मनसे)—मैं तो स्वयं जानता हूं कि इसमें दोष ही दोष भरे हैं और यही कारण है कि मैं उसे किसीको दिखाता नहीं।

रजतने उपदेश देते हुए कहा—इस तरह छिपाकर रखनेसे तो उपकार हो नहीं सकता। समालोचनासे सुधार होता है। अब तो मैंने पकड़ पाया है। सब घर उठा ले जाऊंगा और पढ़कर देखूंगा।

शिशिर बाधा देने लगा। पर रजत कब माननेवाला था। उसने सब पोथियोंपर कब्जा किया। चलते चलते उसने कहा—शामको जब आवोगे तो दोनों आदमी मिलजुलकर आलोचना प्रत्यालोचना करेंगे। तबतक मैं भी इन्हें पढ़ जाऊंगा।

इतना कहकर रजत घरसे बाहर निकला और गाड़ीपर सवार होकर चलने लगा।

शिशिरने कहा—इनको पढ़नेमें अपना समय क्यों नष्ट करोगे। ये इस लायक नहीं हैं। फिर मारे शर्मके मैं तुम लोगोंके सामने मुंह दिखाने योग्य भी नहीं रह जाऊंगा।

गाड़ीमें बैठे बैठे ही रजतने कहा—किसी भी भाषाका साहित्य उठाकर देखो तो तुम्हें विदित हो जायगा कि बड़े बड़े

लिक्खाड़ोंकी भी आरम्भिक दशा यही रही है। एक दिनमें वे इतने यशस्वी लेखक नहीं हो गये हैं।

इतना कहकर रजतने गाडी हांकी। उसका कौतूहल इतना अधिक बढ़ गया था कि घर पहुंचते ही उसने उन पुस्तकोंको पढ़ना शुरू कर दिया।

रजतको इस प्रकार व्यस्त देखकर संध्याने पूछा—यह सब क्या है?

रजत—शिशिरकी लिखी पुस्तकें हैं।

संध्या—(चकित होकर)—क्या! देवरजीके पास इतनी लिखी पुस्तकें जमा थीं?

रजत—हां, हजरत चोरी चोरी लिखते हैं।

संध्या—कैसा है?

रजत (नाक सिकोड़कर) अभी हाथ बैठा नहीं है, पर आशा अच्छी है। एक पुस्तक पढ़कर देखो न!

संध्या (हंसकर) इनको पढ़नेमें कौन समय नष्ट करे। अभी तो आपके ही नये उपन्यासके चार परिच्छेद बाकी हैं, उन्हींको समाप्त करने जाती हूं।

रजत—पर इस तरह उसका उत्साह बढ़ेगा।

संध्या—पढ़कर दो चार बातें मुझे भी बता देना। उन्हींके सहारे मैं उन्हें उत्साहित करूंगी। मञ्जुलिका डाक्टरके घर पहुंचाई गई है, उसके बाद उसपर कैसी गुजरी, यह जाननेके लिये मेरा चित्त चञ्चल हो रहा है।

पत्नीकी बातें सुनकर रजतका चित्त गद्गद् हो गया। उसने स्निग्ध नेत्रोंसे सन्ध्याकी ओर देखा और हंस दिया। उसका जवाब हंसकर ही देकर सन्ध्या पुस्तक लेकर पढ़ने बैठ गई।

सन्ध्या रजत-लिखित मंजुलिका उपन्यासका शेष भाग पढ़कर अन्तिम परिणाम जाननेके लिये अधीर होकर रजतसे बोली—न जाने कब आप इसे समाप्त करेंगे, जरा जरा करके लिखते हैं। यह नहीं होता कि एक दमसे समाप्त कर डालें।

रजतने सिर उठाकर कहा—मैं कितना ही क्यों न लिखूं पर तुम्हारी पढ़ाईका मुकाबिला तो नहीं कर सकता।

सन्ध्याने उत्सुक होकर पूछा—अच्छा, इतना तो बतला दीजिये कि अन्तमें मञ्जुलिका और रणवीरका मिलाप होगा कि नहीं।

रजत पुस्तकको पढ़ते पढ़ते बोला—यह तो मेरे हाथ है, जैसी रानी साहबाकी आज्ञा होगी पालन किया जायगा।

सन्ध्या—उनका मिलाप करा दीजियेगा।

"जो आज्ञा सरकारकी" कहकर रजत पुस्तक पढ़ने लगा।

सन्ध्या—आप तो पढ़नेमें लगे, अब मैं क्या करूं।

रजत तुम भी वही करो जो मैं कर रहा हूं।

सन्ध्या—अभी साधारण हाथ है, रोचक हो कि न हो, पढ़नेमें जी लगे कि न लगे। इससे तो मैं जाकर सिलाई करती हूं।

इतना कह कर सन्ध्या वहांसे उठी और बगलके कमरेमें

जाकर सिलाई करने लगी। इतनेमें विद्युत आ पहुंची। संध्याने उसका स्वागत करते हुए कहा—आज इतनी जल्दी क्यों ?

विद्युत—घरपर तबीयत नहीं लगती थी।

संध्या—(हंसकर) जिसे देखनेके लिये इतनी उतावली होकर दौड़ी आई हो वह तो अभी तक आये नहीं।

इतना कहकर विद्युतके उत्तरकी अपेक्षा न कर संध्या रजतके कमरेमें गई और शिशिरकी लिखी हुई पुस्तक उठा लाई और विद्युतके ऊपर फेंक दी।

विद्युतने पूछा—यह क्या तूफान है ?

संध्या—देवरजीकी लिखित पुस्तकें।

विद्युत—इतनी पुस्तकें कब लिखीं ?

संध्या—कुछ मत पूछो। परदेके आड़से शिकार खेल रहे थे।

विद्युत—पढ़कर देखा था, कैसी लिखावट है ?

संध्या—अभी कच्चा हाथ है। साधारण लिखावट है। कौन पढ़ेगा।

विद्युत और कुछ न कहकर पुस्तक लेकर पढ़ने लगी। दो चार लाइन पढ़कर ही उसने कहा—तुम क्या कहती हो, कच्चा हाथ है ! साधारण लिखावट है ! मेरी तो धारणा है कि बंगला साहित्यमें कम ही लोग इतना सुन्दर लिख सकते हैं। क्या ही चमत्कार है। सुन—

"इस शुभ्र ज्योत्स्नामयी शरद ऋतुकी शर्वरीमें सरोवरके किनारेपर राजकन्या अकेली खड़ी थी। माधवी लताकी नाई

इसका लावण्य, आयत विशाल और चञ्चल नेत्र, अलियोंकी मालाको भी लज्जित करनेवाली ईषत् दोलायमान केशराशि इस तरह शोभा दे रही थी मानों वर्षाकालकी तडित्‌राशि हो। उसके हृदयके भाव उसकी आंखोंकी पुतलियोंद्वारा इस प्रकार व्यक्त होते थे जैसे बादलोंके बीच बिजली।"

संध्याने विस्मित होकर कहा—देखूं देखूं ! इस तरहका शब्दविन्यास।

इतना कहकर संध्याने एक पुस्तक उठा ली और बीचसे खोलकर पढ़ने लगी–

"नाना प्रकारके पुष्पों और पल्लवोंसे सुशोभित, आनन्द काननमें मन्द पवनसे चञ्चल, रङ्ग बिरङ्गे रेशमी वस्त्रोंके बने पताकाओंकी भांति, मानों कोई सुन्दरी स्त्री अपने सुकोमल हाथोंको हिला रही हो, उसने हाथोंके इशारेसे नागरिकोंको मेलाके लिये बुलाया। फौव्वारेमेंसे शीतल जल ऊपर उठकर जल-बिन्दुकण होकर नीचे पड़ता था—जलकी भीनी भीनी महकसे सारा धरातल इस प्रकार सुगन्धयुक्त हो गया था मानों गुलाब-जल छिड़का हो।"

विद्युत पढ़ते पढ़ते बोल उठी—सुन, कितना मनोहर वर्णन है, पढ़कर हृदयकी कलियां खिल उठती हैं—

"सामने एक लम्बा चौड़ा तालाब है। इसका शुद्ध जल इतना निर्मल है मानों देवताओंकी मुखाकृति देखनेके लिये मणि माणिक्यका बना ऐना (शीशा) हो। उसकी उत्तर ओर

वृक्षलताओंसे आच्छादित श्याम वर्णका अति दीर्घकाय भूधर इस तरह अटल स्थित है, मानों किसी प्रबल प्रतापी और बलिष्ठ दैत्यकी जंघाको अपने वज्रसे काटकर इन्द्रने गाड़ दिया हो।"

संध्या मुग्ध हो गई। बोली—इस तरह चार पंक्ति यहांसे और चार पंक्ति वहांसे पढ़नेमें आनन्द नहीं आ रहा है। आओ आरम्भसे पढ़ा जाय।

विद्युतने कहा—एक पुस्तक तुम लो और एक मैं लूं। दोनों दो पुस्तक पढ़ें।

निदान दोनोंने दो पुस्तक लेकर पढ़ना आरम्भ किया। दोनों पढ़नेमें इतनी तन्मय हो गई थीं कि उन्हें किसी बातकी सुधबुध न रही।

सन्ध्या अभी पढ़ रही थी। जो पुस्तक उसने ली थी अभी समाप्त नहीं हुई थी। विद्युत अपनी पोथी समाप्त कर बोल उठी—क्या ही उत्तम वर्णन शैली है! शब्दोंका चुनाव मनको हर लेता है। अपूर्व चमत्कार है।

सहसा उसकी निगाह दरवाजेपर पड़ी। शिशिर खड़ा मुस्कुराता उसकी ओर देख रहा था मानों विद्युतके रूप लावण्यको देखकर शिशिरकी आंखें भी यही कह रही थीं—अपूर्व चमत्कार है। विद्युतने धीरेसे सन्ध्याको ठोककर कहा—देख, शिशिर बाबू आये हैं।

सन्ध्या उठ खड़ी हुई और हंसते हंसते बोली—देवरजी, आपके पेटमें इतनी विद्या भरी है। आपकी वर्णन शैली कितनी

सुन्दर और रोचक है। इन सबोंको बन्द करके क्यों रखे हैं। प्रकाशित क्यों नहीं कराते ?

शिशिर कमरेमें चला गया। विद्युतके पास ही कुर्सीपर बैठ गया, बोला—भाभी, अभी मेरी रचना इस योग्य नहीं है कि प्रकाशित कराई जाय। जो बालक माताके गर्भसे ही पुष्ट नहीं निकलता वह जन्म पाकर भी दुर्बल और कमजोर रहता है, सदा रोगी रहता है और कोई उसका आदर नहीं करता। सब बातोंके लिये उपयुक्त समय और अवसर चाहिये।

विद्युत इस युवा तपस्वीकी कार्यनिष्ठा और साधन-संयमकी वार्ता सुनकर मनही मन इसपर निछावर हो गई।

सन्ध्या—वर्तमान लेखकोंमेंसे तो कितनोंकी ही रचनाओंसे आपकी रचना अति सुन्दर होती है।

शिशिर—(हंसकर) आप लोगोंकी दृष्टिमें मैं अच्छा हूं इसीसे मेरी सभी बातें आपको रुचती हैं, नहीं तो किसी पत्रका सम्पादक थोड़े ही उसे इस तरह पसन्द कर सकता है।

शिशिरकी आवाज सुनकर रजत बगलके कमरेसे उठकर आया और बोला—हां, अभी हाथ कच्चा है पर "काण्डारी" के सम्पादक दक्षिणा बाबूके साथ मेरा परिचय है। मेरे अनुरोधसे वे इन लेखोंको अपने पत्रमें अवश्य निकाल देंगे।

सन्ध्या—पर "काण्डारी" कोई अच्छा पत्र नहीं है। भूधर बाबूसे कहकर "संग्रह"में प्रकाशित कराइये।

रजत—(गम्भीर स्वरसे)—एक दम नये लेखकको "संग्रह"में

स्थान मिलेगा कि नहीं, निश्चय नहीं कह सकता, तोभी भूधर बाबूसे पूछूंगा।

शिशिर—(लज्जासे) जिसमें लिखनेकी शक्ति नहीं हो उसे इस प्रकार बलात् प्रकाशित कर हास्यास्पद बनाना उचित नहीं प्रतीत होता।

रजत—(गम्भीर स्वरसे) पहले पहल प्रायः सभी लेखकोंकी यही दशा होती है। केवल मुझे ही ऐसा नहीं करना पड़ा। संगतमें आकर भूधर बाबू मेरे लेखोंको सुन सुनकर स्वयं उठा ले जाते थे। चलो न, तुम्हें भूधर बाबूके पास ले चलूं।

शिशिर—(उदास मनसे) इतनी जल्दीबाजी क्यों। देखा जायगा। इस समय रहने दो।

शिशिरकी अन्तिम बात सुनकर रजत हंस पड़ा। उसने एक बार विद्युतकी ओर देखा और पुनः शिशिरकी ओर देखकर बोला—यहां प्रलोभनका अधिक साधन है—तो मैं अकेला ही जाता हूं।

इतना कहकर रजत हंसता हंसता कमरेसे बाहर हो गया।

शिशिरकी आंखें मारे शर्मके जमीनकी तरफ झुक गई थीं। अब उसने टेढ़ी चितवनसे विद्युतकी ओर देखा। देखा, विद्युतका मुख लाल वर्ण हो रहा है। शिशिरकी समझमें न आया कि इस रक्तताका क्या कारण है, क्रोध, क्षोभ, अनुराग, विरक्ति या लज्जा।

शिशिरको फिरते देखकर विद्युतने उत्तेजित होकर कहा—आपने उन पुस्तकोंको क्यों ले जाने दिया? उनमें रत्नोंका जो आगार भरा है उसको जिन्हें पहचान करनेकी तमोज तक नहीं है, उनके सामने जाकर उनके प्रकाशनके लिये सिफारिश करना पुस्तक और लेखक दोनोंके लिये नितान्त अपमानजनक है।

विद्युतकी उत्तेजनाभरी बातें सुनकर सन्ध्याको सुख दुःख दोनों हुआ। सुख तो उसे इस बातसे था कि शिशिरके प्रति विद्युतका अनुराग स्पष्ट झलक गया पर उसके कथनमें रजत-पर छिपा आक्रमण था इससे उसे दुःख हुआ। उसने कहा—तुम्हारा कथन सर्वथा उचित नहीं है, नये लेखकोंका सम्पादकोंके साथ अपने आप तो परिचय हो नहीं सकता।

सन्ध्याकी बातें विद्युतको तीरकी तरह लगीं पर उसने हृदयस्थ भावको छिपाकर धीमे स्वरमें कहा—यह अपने गुणों द्वारा ही साध्य है, दूसरोंकी सिफारिशसे नहीं।

शिशिरने देखा कि विद्युतकी बातोंसे सन्ध्याको बड़ा दुःख हुआ है। वह विद्युतको लक्ष्य कर बोला—आप इस बातको भूलती जा रही हैं कि इस बातके लिये रजतका कितना आग्रह है। वह विख्यात हो गया है और चाहता है कि मैं भी विख्यात हो जाऊं। यही कारण उसकी जल्दबाजीका है। मुझे आज-तक इस बातकी इच्छा ही न हुई कि लोगोंकी दृष्टिमें मेरे लेखका किसी प्रकारका सम्मान होता है या नहीं। मैंने केवल अपने

मनोविनोदके लिये लिखा था। उसका आज पुरस्कार भी मिल गया। आज मैं अपनेको धन्य समझता हूं।

सन्ध्या—विद्युतकी प्रशंसासे न देवरजी ? ..इतना कहकर उसने एक तीव्र दृष्टि विद्युतपर डाली और हंसने लगी ।

शिशिर शर्मा गया। चट अपनेको सम्हालकर बोला—हां भाभी, आप लोगोंकी प्रशंसा क्या कम पुरस्कार है।

विद्युतकी ओर देखकर सन्ध्याने हंसकर कहा—सम्मान सूचनार्थ बहुवचन अर्थात् "आप लोगों" शब्दका प्रयोग किया गया है।

शिशिरने हंसकर कहा--उस गौरवसे तो आप भी बरी नहीं हैं, भाभी !

सन्ध्या—(हंसकर) ठीक ही है। मुंहपर अस्वीकार करना सदाचारके विरुद्ध होगा।

शिशिरकी आंखोंसे आंसू निकल पड़े। उसने जोरसे कहा—भाभी ! आपलोगोंके अतिरिक्त मेरा अपना कोई नहीं है।

संध्या—(उदास मनसे) देवरजी ! मैं हंसी कर रही थी। अच्छा विद्युत अब कुछ गाना बजाना होना चाहिये। देवरजी ! आप बेला लीजिये।

संध्याने बेला लाकर शिशिरके हाथमें थमा दिया। शिशिरके हृदयकी सरलतासे विद्युतका मन और भी मुग्ध हो गया। पियानोके पास जाती जाती उसने संध्यासे धीरे धीरे कहा—इस तरहकी हंसीसे उन्हें तंग न किया करो।

संध्या—नहीं भाई, मैं अब कुछ न कहूंगी। मुझे क्या पता कि इनका हृदय इतना जर्जर है।

विद्युतने करुणाभरी दृष्टिसे संध्याकी ओर देखकर कहा—जो अधिक चोट खाये रहता है उसकी यही गति होती है।

विद्युतने संध्याको और कुछ कहनेका अवसर नहीं दिया। वह पियानोपर जाकर बैठ गई और सुर मिलाकर एक गत बजाया। तदुपरान्त उसने गाया :—

"हृदयबिच कांटा एक चुभ्यो।"

(ग्यारह)

साहित्यसंसारमें शिशिर

शिशिरकी पुस्तकोंको लिये रजत "काण्डारी"के सम्पादक दक्षिणा बाबूके पास पहुंचा। रजतको मोटरसे उतरते देख दक्षिणा बाबू उसका स्वागत करनेके लिये जल्दी जल्दी उठकर आगे बढ़े। इस ताड़ाताड़ीमें दरवाजेसे धक्का भी खा गये। चार हाथके लम्बे चौड़े एक कमरेमें "काण्डारी"का कार्य्यालय था। चार पांच काठके टुकड़े जोड़कर टेबुल बना दिया गया था, उसके ऊपर एक पुरानी बनात बिछी थी जिसमें एक रोंआ भी नहीं रह गया था, कहीं कहींसे कट भी गई थी, रोशनाईके गिरनेसे वह चित्रित भी हो गई थी। उसीपर कार्यालयका सारा सामान धरा था, टेबुलके पास ही एक लकड़ीकी कुर्सी भी पड़ी थी। कुर्सीका ढांचा तो संगमर्मरका बना था पर बैठनेकी जगह देवदारुकी लकड़ी लगी थी, हाथा और पीठ टूट भी गई थी, जिनके मरम्मतकी नौबत अभीतक नहीं आई थी। टेबुलकी दूसरी तरफ एक साधारण बेंच और एक टूल (तिपाई) पड़ा था, जिसके ऊपर वर्तमान मासकी "काण्डारी" रखी थी। कुर्सीपरसे उठकर दक्षिणा बाबू किसी न किसी तरह दो कदम आगे बढ़ सके और वहींसे बोले—आइये रजत बाबू, स्वागत।

रजत मोटरसे उतरकर कमरेमें प्रविष्ट हुए। "काण्डारी" के अंकोंको एक तरफ सरकाकर बेंचपर बैठ गये।

दक्षिणा बाबू आग्रह पूर्वक बोले—नहीं, वहां नहीं, कुर्सीपर आकर बैठिये।

रजत—मैं मजेमें हूं, एक लेख देने आया हूं। पढ़कर देखिये यदि प्रकाशनके योग्य हो।

दक्षिणा बाबू आनन्दसे गद्‌गद्‌ होकर बोले—अहो भाग्य! इतने दिनोंकी प्रार्थनाके बाद आज दिन तो फिरे। आपका लेख और योग्यायोग्यका विचार! खूब!

रजत प्रसन्नतापूर्वक बोले—यह मेरा लेख नहीं है। मेरा तो अक्षर अक्षर भूधर बाबू उठा ले जाते हैं। यह मेरे एक बन्धुका है।

दक्षिणा बाबूका मन खिन्न हो गया, बोले—सारी आशाओं-पर पानी फिर गया।

रजतने सहानुभूति दिखलाते हुए कहा—यह भी एक दमसे खराब नहीं है।

दक्षिणा—खराब न भी हो तोभी आपको टक्करका तो हो नहीं सकता।

दक्षिणा बाबूने लेखोंके पन्ने उलटते हुए कहा—शिशिर चक्र-वर्ती—यही उन लेखोंके लेखकका नाम था—चाहे जितना भी अच्छा लिखते हों पर रजतरायके समान बङ्गला साहित्यमें उनका नाम तो है नहीं।

रजत बाबू चलनेके लिये प्रस्तुत हुए, बोले—इस समय तो इसे रखिये, मैं भी कुछ लिखकर देनेकी चेष्टा करूंगा। अन्य लेखोंके साथ यह लेख भी चल सकता है।

दक्षिणा—आपकी बातको मैं टाल नहीं सकता, पर आपको भी मेरा ख्याल करना होगा।

रजतने हंसते हंसते उत्तर दिया—अवश्य, अवश्य, पूरा ख्याल रहेगा। इतना कहकर वह मोटरपर सवार होकर रवाना हो गया।

उसके चले जानेके बाद दक्षिणा बाबूने उन लेखोंको एक तरफ फेंक दिया और आपही आप बोले—मित्रका लेख है। गोया हमारा पत्र इसीके लिये है, पड़ा रहने दो उसे वहीं।

रजतकी मोटर धड़धड़ाती "संग्रह" कार्यालयके सामने जाकर खड़ी हुई। "संग्रह" कार्यालय लम्बा चौड़ा है। आठ हाथ लम्बा और छः हाथ चौड़ा एक घर है। कमरेमें एक कुर्सी रखी है, एक बेंच है, एक टेबुल है, एक अलमारी है और एक तख्ता रखा है जिसपर दरी चांदनी बिछी है। उसी चौकीपर तकियेके सहारे अजगर सांपकी तरह पसरे भूधर बाबू प्रूफ देख रहे थे। मोटरकी आवाज सुनकर खिड़कीसे मुंह निकालकर देखे तो सामने रजतराय नजर आये, बोले—आइये रजत बाबू।

रजत कुछ उत्तर दिये विना ही जाकर बेंचपर बैठ गये। भूधर बाबूने विकट स्वरमें कहा—आपके ही गल्पकी तो प्रूफ देख रहा हूं।

यह सुनकर रजत मुस्कुरा दिये ।

इतनेमें भूधर बाबूकी निगाह रजतके हाथके कागजपत्रोंपर पड़ी, पूछ बैठे—क्या कोई नया सामान लेकर आये हो क्या ? मालूम होता है, नया उपन्यास तैयार हो गया ।

रजतने हंसकर कहा—है तो उपन्यास ही पर मेरा नहीं है, शिशिरका है ।

भूधर—शिशिर बाबू लिखना जानते हैं ? क्या आपने पढ़ा है ? कैसा है ?

रजत—हां, मैं देख गया हूं । बहुत खराब नहीं है, चल सकता है । यदि आप उचित सुधार कर उसे छापनेकी व्यवस्था कर दें तो उसे अच्छा प्रोत्साहन मिलेगा और यदि उस गरीबको कुछ पुरस्कार भी मिल गया तो उसका बड़ा उपकार होगा ।

भूधर बाबूने गम्भीर होकर कहा—नामी नामी लेखकोंके इतने लेख अप्रकाशित पड़े हैं कि नये लेखकोंका लेख प्रकाशित करनेका अवसर........

रजतने बीचमें ही रोक कर कहा—कोई जल्दी नहीं है । यदि अवकाश होनेपर सुधारकर कहीं कोने अंतरेमें इसे डाल देंगे तो बड़ा कृतज्ञ हूंगा । उसकी अवस्थासे तो आप भली भांति अवगत हैं ।

भूधर—यह तो मैं खूब जानता हूं । उससे आत्म-कहानी लिखनेको क्यों नहीं कह देते, बड़ाही रोचक और शिक्षापूर्ण उपन्यास होगा ।

रजत—एक उपन्यासमें वह अपनी जीवनीकी छाया लाया है। उसे अभी समाप्त नहीं कर सका है। घरपर है।

भूधर बाबूने उस प्रसंगको छोड़कर कहा—क्या आपने अपना उपन्यास समाप्त किया? उसका नाम आपने रखा है, "प्रेम-पाश" पर "पाश" शब्द अनुकूल नहीं।

रजत उठते उठते बोला—आपका कहना उचित है। केवल शब्दावली बदलनेसे भला मालूम होगा। मेरा इरादा "प्रणय-वेदना" रखनेका है। यह तो ठीक होगा न?

भूधर—यह कुछ जंचता है। गत शनिवारको संगतमें नाम-करणपर ही परामर्श होगा।

रजत—यह भी ठीक है। इतना कहते कहते वह मोटरपर सवार होकर चलता बना।

घर पहुंचकर रजतने देखा कि गाना खूब जमा है। संध्या, विद्युत और शिशिर तीनोंने मिलकर सारे मकानको स्वरमय बना दिया है। रजतके कमरेमें प्रविष्ट होते ही गाना रुक गया। रजतने कहा—यह क्या? बन्द क्यों हुआ? कुछ होने दो।

पर गाना जो बन्द हुआ सो हुआ। रजतने शिशिरसे कहा—तुम्हारी एक किताब तो "कण्डारी" के सम्पादक और दूसरी "संग्रह" के सम्पादकको देता आया हूं।

शिशिर मारे शर्मके सिर नीचा किये बैठा रहा। न संध्या कुछ बोली, न विद्युत। इसी प्रसंगको लेकर जो अप्रिय बातें थोड़ी देर पहले हो चुकी थीं उसका परिमार्जन गीतने

कर दिया था। अब कोई उसे फिर उठाना नहीं चाहता था।

उसकी इस बहादुरीकी न किसीने प्रशंसा की और न किसीने कृतज्ञता प्रकाश की। इससे रजतको बड़ा दुःख हुआ। साथ ही उसके आते ही गाना भी बन्द हो गया, इससे वह और भी चिढ़ गया। उसके मनमें द्वेषके भाव उठने लगे।

कमरा निस्तब्ध था। किसीके मुंहसे शब्द नहीं निकलता था। सब कोई इसे अशोभन समझते थे, पर खोजनेपर भी कोई विषय नहीं मिलता था कि कोई कुछ कहना आरम्भ करे।

इसी समय उनकी सहायताके लिये सुनयनी देवी आ पहुंचीं। आते ही उन्होंने कहा—शिशिर, गाना बजाना हो गया। चलो खाने चलो।

शिशिरने उठते उठते मुस्कुराकर कहा—चलो, भाई रजत।

रजतने गम्भीर स्वरमें उत्तर दिया—चलो।
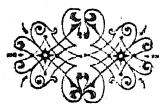
(बारह)

उपेक्षा

इस घटनाके बाद शिशिरके लेखके प्रसंगकी चर्चा ही बन्द होगई। अगले शनिवारकी बैठकमें भूधर बाबूने चर्चा छेड़ी थी पर चूंकि तबतक उन्हें उसे पढ़नेका अवसर ही नहीं मिला था, इससे वे अपना स्थिर मत नहीं दे सके। इसी समय रजतके नये उपन्यासके नामकरणका प्रश्न उठा। चारों ओरसे इतना शोर गुल मचा कि शिशिरकी बात ही लोग भूल गये। पर इससे इतना लाभ हुआ कि रजतके हृदयमें शिशिरके प्रति जो एक तरहका दुर्भाव और ईर्ष्या द्वेष अंकुरित हो रहा था वह मिट गया। इससे शिशिरने बड़ा शान्ति-लाभ किया।

मासके अन्तमें दस दस रुपयेके दो नोट लाकर संध्याने शिशिरके हाथमें रख दिये।

शिशिरने संध्याकी ओर देखकर हंसते हुए पूछा—यह क्या भाभी?

संध्या—प्रणामी कहकर तो दे नहीं सकती, इससे कहती हूं कि यह आपकी दक्षिणा है।

शिशिर (गम्भीर भावसे)—आपको पढ़ाकर जो पुरस्कार मैं दिन प्रतिदिन पा रहा हूं वह इस रुपयेसे कहीं मूल्यवान है। मुझे अतुल सम्पत्ति मिली थी। मैंने जान बूझकर उसे

ठुकराया। पर जो सम्पत्ति मैंने यहां प्राप्त की है, जिस सम्पत्तिका मैं भिखारी था, उसके सामने यह दक्षिणा तुच्छाति-तुच्छ है।

सुनयनी बोल उठीं—बेटा, हम लोग कौनसा ऐसा अमूल्य पदार्थ दे रहे हैं?

सुनयनीकी बात सुनकर शिशिरका हृदय उल्लसित हो उठा। उसने गद्गद् स्वरसे कहा—जिस स्नेहसे मैं सदा वञ्चित रहा, उस मा, भाई और भगिनीके स्नेहका अनुभव मुझे अपने जीवनमें सबसे पहले यहीं मिल सका है। क्या इसकी तुलना तुच्छ रुपये पैसेसे हो सकती है?

इतनी बातचीतके बाद अब किसीको साहस न हुआ कि वह शिशिरको रुपया लेनेके लिये अनुरोध करे। थोड़ी देर तक चुप रहनेके बाद सुनयनीने कहा—तब फिर तुम्हारा सारा भार तुम्हारी माता और भाईके ऊपर रहा।

शिशिरने हंसकर कहा—मेरी सारी आवश्यकता तो आप ही लोग पूर्ण कर रहे हैं। मुझे किसी बातकी कमी तो है नहीं।

रजत—मा बनमालीदासकी बात कह रही हैं। उसके पढ़ने लिखनेका जुगाड़ भी तुम्हें ही करना पड़ता है। उसका भार भी हमी लोगोंपर रहने दो। शिशिरने कुण्ठित होकर कहा—नहीं, उसका भार मेरे ही ऊपर रहेगा! देशमें गरीब लड़कोंकी कमी नहीं है।

सुनयनी शिशिरकी पीठपर हाथ फेरती हुई बोली—बेटा!

हमलोगोंका यह अनुरोध तुम्हें मानना होगा। बनमाली दासको जो कुछ तुम भेजते रहे, वह हम भेजेंगे।

शिशिरको लाचार होकर स्वीकार करना पड़ा। उसने कहा—प्रतिमास मैं बनमाली दासके पास १०) भेजता हूं।

इसी समय डाक पीउनने अखबारोंका एक बण्डल लाकर रजतके हाथमें रख दिया। संध्या उत्सुकताके साथ बोल उठी—देवरजीका लेख इस मासकी "काण्डारी" में अवश्य प्रकाशित हुआ होगा।

रजतने और अखबारोंको किनारे रखकर "काण्डारी" को खोलकर बार बार उलटा पर शिशिरका लेख कहीं नजर न आया।

रजतकी मुखाकृति देखकर ही संध्या समझ गई कि शिशिरका लेख इस अङ्कमें नहीं है। इससे संध्याने एक प्रकारका प्रच्छन्न आनन्द अनुभव किया पर साथ ही साथ उसे लज्जा और अतिशय दुःख हुआ। प्रसन्नता तो उसे इस बातकी थी कि ये लोग लेखन कलामें उसके पतिसे कहीं घटकर हैं, अच्छे अच्छे समाचार-पत्रोंकी बात तो दूर रही "काण्डारी" समान साधारण पत्रिकाने भी उसे स्वीकार नहीं किया।

इन लोगोंकी आकृति देखकर शिशिर भी समझनेसे बाकी न रहा कि उसके लेखकी क्या गति हुई। उसने हंसकर कहा—अधम-तारण "काण्डारी" ने भी मेरे लेखोंको नहीं पूछा तो इसमें आश्चर्य ही क्या? चलो छुट्टी हुई। अब तो रजत इन लेखोंके लिये मुझे तङ्ग न करेगा। भारी चिन्ता मिटी।

संध्या, रजत और सुनयनी तीनोंने ही शिशिरके उपरोक्त कथनमें पराजय-स्वीकारका प्रत्यक्ष चिन्ह देखा। इससे रजतकी उत्कृष्टता और भी अधिक प्रत्यक्ष हो गई। पर उस आनन्दमें भी उसे शिशिरके लिये दुःख ही था। रजत झट बोल उठा—यह जरूरी थोड़े ही है कि जिस मासमें लेख दिया जाय उसीमें प्रकाशित भी हो जाय। प्रत्येक मासके लिये स्थान पहली तिथिको ही छेंक जाता है।

शिशिरने हंसकर कहा—उन्हें प्रत्येक मासमें मेरे प्रति अच्छे लेख मिल जायंगे। इस तरह परिश्रम करके तुम्हें असफल होना पड़ा है इसके लिये तुम्हें लज्जा लग रही है क्या?

बात कुछ सच थी। रजत उन लेखोंको प्रकाशित करवानेके लिये और व्यग्र हो उठा। उसने कहा—मैं दृढ़तासे कहता हूं एक न एक दिन शिशिर चक्रवर्तीका यश बंगाल देशके कोने कोनेमें छा जायगा। जिसे हम लोग अच्छा कहते हैं वह सदा अच्छाही रहेगा।

शिशिर—(हंसकर) व्यर्थकी प्रशंसासे क्या लाभ! रजतके प्रकाशके सामने शिशिरको कोई पूछ भी नहीं सकता।

रजत—(मनही मन फूलकर) यह भी तो देखना होगा कि मैं कितने दिनोंसे लिख रहा हूं।

यह अरुचिकर वार्तालाप अधिक देर तक न चल सका। उसी समय उस कमरेमें विद्युतने प्रवेश किया। उसको देखते ही सन्ध्याने हंसकर कहा—क्यों भाई, यह अनोखी बात कैसी?

विद्युत—माकी तबीयत कुछ खराब है, उन्होंने बुलावा भेजा है।

रजत—(शिशिरको लक्ष्य कर) तबीयत तो माकी खराब है और आना यहां हुआ ?

विद्युत शर्मा गई। उसने घबराकर कहा—नहीं, नहीं यह बात नहीं है। मैंने शिशिर बाबूकी चर्चा मासे की थी। उन्होंने इन्हें बुलाया है और उसीके लिये इनके पास मुझे...

रजत हंसकर बोले—क्यों न हो। हम लोगोंके साथ इतने दिनका पुराना परिचय पर आजतक एक बार भी निमन्त्रणका सौभाग्य प्राप्त न हो सका। हम लोगोंकी तो बात ही दूर रहे सन्ध्याकी भी कभी पूछ न हुई पर शिशिर बाबूके साथ इस तरह-का पक्षपात !

रजतकी बात सुनकर मारे शर्मके विद्युतका चेहरा लाल हो गया। शिर नीचा करके वह चुपचाप बैठ रही। शिशिर लज्जाके साथ साथ विचित्र आनन्दका अनुभव कर रहा था। लेखोंके न छपनेका जो आन्तरिक खेद था वह इस सुखके प्रवाहमें एक दम बह गया।

विद्युतको शर्माई हुई देखकर सुनयनीने कहा—बेटी, तू स्पष्ट क्यों नहीं स्वीकार करती कि अच्छी वस्तु सबको ही भाती है। इसमें शर्मकी कौन बात है। संसारमें शायद ही कोई ऐसा प्राणी हो जिसका हृदय शिशिर अपनी ओर न खींच ले। बेटी, शिशिर सदृश पुरुष तुम्हें नहीं मिल सकेगा। यदि तू

स्वयं आत्म-समर्पण करनेमें शर्माती है तो हमलोगोंसे बतला, हम सब प्रबन्ध कर लेंगे।

ऐसी दशामें बिचारी विद्युत न वहां रह ही सकती थी और न वहांसे उठकर चली ही जा सकती थी। उसने आजतक इन बातोंकी कल्पना तक न की थी। जिस दिन उसने उच्छ्वासित हृदयसे अपनी माताके सामने शिशिरकी प्रशंसापूर्ण कहानी कही थी उसी दिन उसकी माने कहा था—"बेटी, एक दिन उन्हें मेरे पास बुला ला, मैं भी उन्हें देखना चाहती हूं।" आज अपनी माको अस्वस्थ देखकर विद्युतने उससे कहा—"मा, यदि आपकी आज्ञा हो तो शिशिर बाबूको बुला दूं, उनसे बातचीत करके तुम्हें बड़ा सुख मिलेगा।" इसी प्रस्तावपर शिशिर बाबूके नाम एक पत्र लिखकर उसकी माने विद्युतको उसे बुलानेके लिये भेजा था। विद्युत वही चिट्ठी लेकर मन ही मन अतिशय प्रसन्न होती रजतके घर शिशिरको लेने आयी थी। शिशिरके ध्यानमें वह इतनी निमग्न थी कि उसे यह सोचनेका अवसर तक न मिला था कि इस विषयमें उसकी कोई हंसी उड़ा सकता है। जिस गाड़ीपर वह आई थी उसे भी उसने विदा नहीं की थी, क्योंकि उसीपर वह शिशिरको तुरत ही लेकर लौटना चाहती थी। पर रजतकी बातें सुनकर उसके कान खड़े हो गये। उसने अपने मनमें कहा—काम तो बड़ा बुरा हुआ। मैं इतने दिन तक सन्ध्याके साथ पढ़ती रही। सन्ध्याको गाना बजाना सिखानेके बहाने अनेक वर्षोंसे इनके घर आ जा रही हूं पर मैंने

एक बार भी सन्ध्या या रजतको अपने घर निमन्त्रित नहीं किया। शिशिर बाबूसे मेरा भलीभांति परिचय भी नहीं पर उनको अपने घर बुलानेमें इतना आग्रह कर मैंने उचित नहीं किया और तिसपर भी दूसरेके घर आकर निमन्त्रण दिया। पर इसमें तो लाचारी थी क्योंकि पहले तो, मैं शिशिर बाबूके डेरेपर जा नहीं सकती थी और दूसरे, तीसरे पहर वे यहीं मिल भी सकते थे। इन सब बातोंपर विद्युत जितना अधिक विचार करती थी उतना ही वह लज्जासे नीचे गड़ती जाती थी।

विद्युतकी यह अवस्था सुनयनीको असह्य हो उठी। उसने मीठे स्वरमें कहा—बेटी! ला, शिशिरके नामकी चिट्ठी कहां है?

विद्युत बड़ी कठिनाईसे अपनी जगहसे उठी और पत्रको शिशिर बाबूके हाथमें रख दिया।

रजत और सुनयनीकी बातोंने शिशिरको विचित्र अवस्थामें डाल दिया। विद्युतके निमन्त्रणसे उसे जितनी खुशी हुई थी उतनी ही लज्जा भी। मारे शर्मके पत्र लेनेके लिये उसके हाथ भी न उठे। बड़ी कठिनाईसे उसने पत्र लिया और उसे खोलकर पढ़ने लगा। पढ़ तो गया पर वह विद्युतसे यह न कह सका कि मैं चल सकूंगा या नहीं। वह चिट्ठीमें ही आंख गड़ाये रहा। चिट्ठीमें लिखा था—

कल्याणवरेषु—

जिस दिनसे विद्युतसे तुम्हारी चर्चा सुनी तुम्हें देखनेकी

अतिप्रबल कामना हृदयमें जागृत हो उठी। विद्युतके मित्र होकर तुम मेरे पुत्रतुल्य हो। यदि तुम अकाज मेरे घरपर पधारनेकी कृपा करो तो मैं बड़ी सुखी होऊंगी।

शुभाकांक्षिणी—

श्रीक्षणप्रभा देवी।

शिशिरको चुप देखकर विद्युत और भी घबरा उठी। विना कुछ उत्तर पाये भीं तो वह उठकर जा नहीं सकती थी।

यह अवस्था देखकर सुनयनीने कहा—बेटा, शर्म छोड़ो। चुपचाप बैठे रहना उचित नहीं। उठो, विद्युतके साथ उसके घर जाओ।

शिशिर विना कुछ कहे उठ खड़ा हुआ। उसे उठते देखकर विद्युत भी उठ खड़ी हुई। मारे शर्मके उन दोनोंके चेहरे लाल हो रहे थे। किसीकी तरफ देखे विना ही वे दोनों अवनत-मुख कमरेसे बाहर हुए। इसी समय सन्ध्या आनन्द-सूचक बाजा बजाने लगी और रजत आनन्द स्वरसे घरको गुञ्जरित करने लगा।

(तेरह)

शिशिर और क्षणप्रभा

रास्तेभर दोनों चुपचाप चले जाते थे। मेमके स्कूलमें पढ़नेसे विद्युतमें पुरुषत्वके निःसंकोच भाव आगये थे। वह बोलने बतलानेमें कभी किसीसे शर्म या लिहाज नहीं करती थी। पर आज शिशिरके साथ उसने लज्जाका जो अनुभव किया वह अकथनीय और अवर्णनीय था। स्वयं विद्युत उसके एकान्त कारणको नहीं समझ सकती थी। शिशिरने भी आज अभूतपूर्व मौन धारण कर लिया था।

विद्युतका मकान श्यामबाजारमें था। बङ्गलानुमा छोटासा मकान था। सामने छोटासा चमन भी था और कुक्कुर, बन्दर, बिलार, शुक, श्यामा, मैना आदि अनेक तरहके पशु पक्षी भी पालित थे।

गाड़ीसे उतरकर विद्युतने लज्जाभरे शब्दोंमें शिशिरसे धीरेसे कहा—चलिये।

शिशिर उसके पीछे हो लिया अन्दर जाकर आंगनमें रुक गया। शिशिरको यों ठिठकते देखकर विद्युतने कहा—आप सीधे ऊपर चले आइये।

ऊपर जाकर शिशिरने देखा कि एक कमरेमें पलङ्गपर एक

मोटे तकियेके सहारे एक विधवा स्त्री लेटी है। उसकी आकृति देख अवस्थाका बोध नहीं हो सकता था। शिशिरने अनुमान किया—यह विद्युतकी बड़ी बहन होगी। उसके शरीरकी कान्ति भी विद्युतके ही समान थी। उसी तरहकी मदमाती आंखें, वही श्रीयुक्त मुख, वही उन्नत ललाट। इन सब बातोंके होते हुए भी शिशिरने देखा कि इस रूपलावण्यमें एक ऐसी भारी कमी है जो इसे मिट्टी कर रही है। इसे देखकर श्रद्धा और भक्तिके भाव उदय नहीं होते अर्थात् इसमें स्त्रीजाति स्वभावगत लज्जाका सर्वथा अभाव प्रतीत होता है। इसके रहन सहन तथा वेष भूषाकी विलासिता भी शिशिरको विशेष रुचिकर न हुई। वह अपने मनमें तर्क करने लगा—यह क्या! वेष विधवाका और शृङ्गारके सामान इतने! विलासिताके साधन इस प्रकार! रङ्ग विरङ्गे कपड़े, महीनसे महीन वस्त्र, रङ्गविरङ्गी धोतियां, तरह तरहके फैशनके बने जाकेट और सेमीज! ये तो विधवाओंके पहननेके लिये नहीं होते। तुरंतही उसने अपने मनको यों समझाया—आजकल नई रोशनीका प्रकाश चारों ओर फैल रहा है। अङ्गरेजी शिक्षाने हमारे समाज और चरित्रमें घोर परिवर्तन डाल दिया है। अब उस पुरानी लकीरको कौन पीटता है। जिस विधवा आदर्शका मैं स्वप्न देख रहा हूं वह युग अब इस संसारसे कोसों दूर है। इस तरहकी अनेक कल्पनाओंसे शिशिरने अपने मनको प्रबोधा, पर उसे सन्तोष न हुआ। इस रमणीके प्रति उसके हृदयमें श्रद्धा लेशमात्र भी उदय न हुई। शिशिरने सोचा—

सुनयनी भी तो विधवा ही हैं। वे भी सदा जाकेट और सेमीज पहने रहती हैं। पर उन्हें देखकर हृदयमें जो श्रद्धा भक्तिका भाव उदय होता है उसका लेशमात्र भी आभास यहां नहीं। पर विद्युतकी माके नाते शिशिरने उसे दूरसे ही प्रणाम किया, चरण छूकर प्रणाम करनेको उसकी आत्माने कबूल न किया।

क्षणप्रभाने आशीर्वाद देते हुए कहा--आओ बेटा! बैठो!! (विद्युतसे) बिजलीका पंखा खोल दे बेटी!

शिशिर पासकी आराम-कुर्सीपर बैठ गया। विद्युत पंखा खोलकर अपनी माताके पलङ्गपर जा बैठी।

क्षणप्रभाने कहा—बेटा, विद्युत लाख बार भी तुम्हारी प्रशंसा करके नहीं अघाती। हरवक्त उसकी जबानपर तुम्हारी ही बात रहती है। बिचारी मेरे पास रह भी नहीं सकती। कालेज इतनी दूर है कि रोज आना जाना नहीं हो सकता, इसीसे छात्रावासमें कर दिया है। मुझे दौरा आता है। कभी कभी हृदयकी गति मन्द पड़ जाती है। कल एकाएक दौरा आया और मैं मूर्च्छित हो गई तो उसे बुलवाया। कल चली जायगी। प्रतिसप्ताह शनीचरकी शामको आती है और सोमवारको प्रातः-काल चली जाती है। इधर जब कभी आती है सदा तुम्हारी ही चर्चा करती रहती है। मेरी शारीरिक अवस्था ठीक नहीं। आज हूं कल नहीं। सदा इसीकी चिन्ता लगी रहती है कि यदि इसे किसी सुयोग्य पात्रके हाथ सौंप देती तो निश्चिन्त होकर मरती। मेरे आत्मीय कोई नहीं। जिस दिन मैं आंख मूंद

लूंगी, बिचारी विद्युतका अपना कोई नहीं रह जायगा। यही कारण है कि मैं अभीसे उसे अपनेसे अलग रखती हूं, जिससे मेरे वियोगका विशेष सन्ताप उसे न हो। पढ़ लिखकर वह होशियार हो जायगी तो मेरी देख रेखके न रहते भी वह अपनी जीवन यात्रा चला लेगी। मुझे यह जानकर और भी सन्तोष है कि उसके तुम लोग सदृश दो चार सच्चे सुहृद हैं जो समय कालके अनुसार उसे सहायता देते रहेंगे। विद्युत प्रत्येक शनिवारको आती है। रविवारको अकेली रहती है। यदि रविवारको तुम आजाया करो तो उसका भी दिल लगे और मैं भी प्रसन्न रहूं। विद्युत कहती थी तुम दोनों एक ही कक्षामें पढ़ते हो और गाने बजानेमें भी तुम्हारी विशेष प्रवृत्ति है। तुम्हारे साथ आलोचना प्रत्यालोचना करके विद्युत अनेक बातें सीख लेगी। स्त्री जाति कितनी ही शिक्षिता क्यों न हो विना पुरुषके संसर्गसे सांसारिक विषयोंका ज्ञान उन्हें नहीं हो सकता। यदि कभी कभी तुम आजाया करोगे तो विद्युतका बड़ा उपकार होगा। मैंने सुना है कि यहां तुम्हारा भी अपना कोई नहीं है। विना किसी संगी साथीके मन खिन्न रहता है। यहां आकर बातचीत करनेसे तुम्हारी भी तबीयत लगेगी।

इस तरह क्षणप्रभा लेटे ही तोतेकी भांति जो कुछ मनमें आता था बकती जाती थीं। हां, उनकी प्रत्येक बातमें विद्युतके साथ शिशिरके विवाहकी कल्पना और अभ्यर्थना अवश्य रहती

थी। विद्युत मारे शर्मके आंखें नीची किये बैठी रही। शिशिरको भी अधिक बोलनेकी आदत नहीं थी इससे वह भी चुपचाप रहा। और न उन लोगोंके बोलनेकी कोई आवश्यकता ही क्षणप्रभाको प्रतीत होती थी।

क्षणप्रभाकी बातें शिशिरको रुचिकर न थीं। प्रथम मुलाकातमें ही इस तरहको स्वार्थभरी बातें एक तरहकी दुकानदारी प्रतीत होती हैं।

शिशिरको चुपचाप बैठे देख क्षणप्रभाने विद्युतसे कहा—बेटी, शिशिरको जलपान कराओ।

विद्युत उठी। एक छोटोसी टेबुल लाकर शिशिरके सामने रख दी। उसके ऊपर एक स्वच्छ रूमाल बिछाकर बाहर चली गई और थोड़ी देरके बाद एक तश्तरीमें मीठा, दूसरीमें नमकीन और तीसरोमें फल तथा एक शीशेके गिलासमें पानी लेकर उपस्थित हुई।

क्षणप्रभा—पहले चाय तैयार कर।

विद्युतने शिशिरको लक्ष्य कर कहा—आप चाय तो नहीं पीते ?

शिशिर—नहीं।

क्षणप्रभा—अच्छा, चाय नहीं पीते तो गरम दूध ही ला दे।

शिशिर—(व्यस्त होकर) नहीं, कोई जरूरत नहीं। मैं अधिक दूध नहीं पीता। दूधसे मुझे विशेष रुचि नहीं।

विद्युत बाहर चली गई। क्षणप्रभाने शिशिरसे कहा—बेटा, जलपान कर लो।

विद्युत शीशेके गिलासमें दूध लेकर लौट आई।

शिशिर शर्माते शर्माते खाने बैठे। क्षणप्रभाने कहा—ये सब चीजें विद्युतकी तैयार की हुई हैं। तुम्हें सब खानी पड़ेंगी।

शिशिर व्यस्त होकर क्षणप्रभाकी ओर देखकर बोला—मैं तो इतना नहीं खा सकता।

विद्युत बोली—ये बहुत ही कम खाते हैं।

क्षणप्रभा—अच्छा बेटा, पर सब रकमसे थोड़ा थोड़ा चखकर देखो कि विद्युत कैसी चीज बनाती है। हमने केवल उसे लिखना पढ़ना ही नहीं सिखाया है बल्कि गृहस्थीके प्रत्येक काममें दक्ष कर रखा है। वह जिस घरमें जायगी उसको पूर्णरूपसे सुसज्जित रखेगी।

शिशिर जलपान समाप्त कर चुका।

विद्युतने पूछा—और क्या लाऊं?

शिशिर—अब तो कुछ नहीं चाहिये।

विद्युत—चलिये, हाथ मुंह धो लीजिये।

क्षणप्रभा—हाथ धोनेको कहां लिये जाती है? यहीं चिलमची मंगाकर क्यों नहीं हाथ धुला देती।

विद्युतने शिशिरकी ओर देखकर कहा—इस तरहका म्लेच्छाचार इन्हें पसन्द नहीं।

क्षणप्रभाने हंसकर कहा—ये तुम्हारे मित्र हैं। तू जानती

है कि उन्हें क्या प्रिय है क्या अप्रिय है। जो उन्हें रुचिकर हो वही कर।

विद्युत बाहर ले जाकर शिशिरका हाथ धुलाने लगी।

शिशिरने व्याकुल होकर कहा—यह क्या? लोटा रख दीजिये, मैं मुंह हाथ धोलूंगा।

विद्युतने हंसकर कहा—नहीं, यह नहीं हो सकता। आज आप मेरे अतिथि हैं।

शिशिर हार गया। झुककर हाथ धोने लगा। विद्युत भी पानी देनेके लिये झुक गई थी। दोनोंका मुंह पास पास हो गया। शिशिर हाथ धोता जाता था पर उसकी आंखें विद्युतकी मुखश्रीको पान कर रही थीं। एक तरफ तो विद्युतके हाथसे शिशिरके हाथपर अनवरत जलकी धारा गिर रही थी, दूसरी ओर शिशिरकी हृदयतन्त्रीमें एक दूसरी ही धारा अनवरत रूपसे बह रही थी।

हाथ धुलाकर विद्युतने हाथ पोंछनेके लिये एक तौलिया दिया। हाथ मुंह पोंछकर शिशिर फिर घरमें गया। इतनेमें विद्युतने एक तश्तरीमें सुपारी, लायची, मशाला आदि लाकर रख दिये।

क्षणप्रभाने कहा—पान क्यों नहीं लाई, बेटी?

विद्युत—ये पान नहीं खाते।

विद्युतकी बातें सुनकर शिशिरको बड़ा विस्मय हुआ। उसने अपने मनमें कहा—इतने अल्प परिचयमें ही यह मेरे विषय-

में इतनी अधिक बातें कैसे जान गई। इस भावने क्षणप्रभाके प्रति शिशिरके हृदयस्थ दुर्भावको भी दूर कर दिया। उसका चेहरा प्रसन्नतासे खिल उठा।

क्षणप्रभा—बेटी, शिशिरको अपने कमरेमें लेजा।

अकेले विद्युतके कमरेमें जाना शिशिरको अभिप्रेत न था। उसने बहाना करके कहा—मुझे एक जरूरी काम है। और अधिक नहीं ठहर सकता। जानेकी आज्ञा दीजिये।

क्षणप्रभा—अगले रविवारको दोपहरको यहीं भोजन करना। आजसे ही निमन्त्रण दे रखती हूं।

शिशिर—(बीचमें ही) आजसे ही कैसे निश्चयपूर्वक कह सकता हूं। अनेक तरहके काम लगे रहते हैं। कहीं फुरसत न मिली तब.........

क्षणप्रभा चुप हो गई, अधिक अनुरोध नहीं किया। उस समय शिशिरको फिर सुनयनीका स्मरण आ गया। उनका कोई भी अनुरोध इतना शिथिल नहीं होता। जिस तरहसे हो, स्नेहसे, अभ्यर्थनासे, प्रेमसे वे स्वीकार करवा ही लेती हैं। उस समय उनकी अवज्ञा करनेका किसको साहस हो सकता है।

शिशिर उठ खड़ा हुआ और कमरेसे बाहर निकला। विद्युत भी साथ ही बाहर निकली।

शिशिर एकबार विद्युतकी ओर देखकर सीढ़ीसे उतरने लगा। शिशिर दो दण्डा उतर गया। विद्युतने ऊपरसे ही रेलिंग थामकर मृदु स्वरसे पूछा—आप आवेंगे न?

शिशिरने मुंह फेरकर विस्फारित नेत्रोंसे विद्युतकी ओर देखा। देखा कि विद्युतकी आंखें प्रबल अनुरोध कर रही हैं। उसे साहस न हुआ कि वह इन्कार कर सके, कहा—आऊंगा।

विद्युतका चेहरा मारे प्रसन्नताके खिल उठा।

(चौदह)

प्रेमपाश

इस तरह शिशिरको एक और मित्र लाभ हुआ। रजतके तीव्र शब्दवाण और क्षणप्रभाकी अकारण प्रबल अनुरागभरी बातोंको बरदाश्त कर शिशिर प्रति शनिवारको संगतकी बैठकके बाद विद्युतको श्यामबाजार पहुंचाकर तब अपने वासामें लौटता था। रविवार रविवार वह विद्युतके घर भी जाता। वहांसे घर लौटकर वह यही संकल्प करता कि अब भविष्यमें विद्युतके घर न जाऊंगा। शनिवारको संध्याके घर मुलाकात हो जाती है। फिर रविवारको जानेकी क्या आवश्यकता ? पर जब शनिवारकी रातको वह विद्युतको पहुंचाकर लौटने लगता और विद्युत मृदुस्वरमें कह बैठती कि कल जरूर आइयेगा तो उसे इन्कार करनेका साहस न होता। इस प्रकार आने जानेसे क्षणप्रभाके प्रति उसका विराग भी कुछ कम हो गया। रविवारको सवेरेसे ही उसकी तबीयत घबराने लगती। वह तीसरे पहरकी प्रतीक्षा करने लगता। संध्याके पास तो वह अनेक तरहकी हंसी दिल्लगी करता पर विद्युतके घर जाकर वह चुपचाप बैठा रहता। क्षणप्रभाकी अनर्गल बातें सुनता या गाना बजाना करता। पर विद्युतसे बहुत ही कम बातें होतीं। उस अल्प कथावार्तामें

भी विद्युतकी विद्वत्ताका पूरा परिचय मिलता। उसकी साहित्य-विदग्धता, बुद्धि-विचक्षणता, चरित्र दृढ़ता, और उसकी हृदय-कोमलता तथा सरसता उसे मुग्ध कर लेतीं। इन्हीं सब गुणोंने शिशिरके ऊपर अपना मोहनी प्रभाव डाल रखा था।

एक दिन शामके वक्त शिशिर संध्याको पढ़ा रहा था। पर उसका मन विद्युतमें अटका था। वह प्रतिक्षण उसके आगमनकी प्रतीक्षा कर रहा था। हठात् शिशिरने कहा—भाभी, पढ़ानेमें तबीयत नहीं लगती, आज यहीं समाप्त कीजिये।

संध्याने हंसकर कहा—अभी तो विद्युतके आनेमें अधिक देर है।

शिशिरने हंसकर उत्तर दिया—भाभी, आप लोगोंने तो अन्धेर कर दिया। इस तरह मेरे पीछे पड़ गईं कि वाकई विद्युतके लिये मेरा मन व्यस्त हो उठा है।

सन्ध्याने हंसकर उत्तर दिया—फिर किसीको शङ्कामें रख छोड़नेसे क्या लाभ? जब दोनों तरफसे बराबर आकर्षण है तो मिलाप क्यों न हो जाय?

शिशिर—यह तो ठीक है पर विद्युतको लाकर हम रखेंगे कहां? अपने मेसमें?

अपनी दरिद्रता और निराश्रयताकी बात कहकर शिशिरने सन्ध्याको अप्रतिभ कर दिया। इस बातका कोई समुचित उत्तर न देकर उसने तिरस्कारपूर्ण शब्दोंमें कहा—आप बड़े बुरे आदमी हैं। मैं आपसे नहीं बोलूंगी।

शिशरने हंसकर कहा—कबतक ?

इस बातको उड़ा देनेके अभिप्रायसे संध्याने कहा—हां, एक बात याद आ गई। विद्युतने आपके शरीरका नाप लेनेको कहा था।

शिशिर—क्यों ?

संध्या—वह सिलाई करना सीख रही है। आपके लिये एक कुर्ता तैयार करेगी। स्वयं कहते लज्जा आई इसलिये मुझसे कहा।

शिशिर समझ गया कि मेरे लिये नया कुर्ता तैयार करनेके हेतु यह चाल चली जा रही है। वह चुप रहा। संध्या नाप लेनेके लिये गज लाने चली गई। इसी समय विद्युतने कमरेमें प्रवेश किया और शिशिरको अकेला बैठा देख अचकचाकर पूछा—संध्या कहां है ?

शिशिर—परोपकार करनेकी चेष्टा करने गई हैं ?

विद्युत—आपकी बात मेरी समझमें न आई।

शिशिर—प्रथमतः आपके लिये मेरे कुर्तेका नाप लेना और द्वितीयतः मेरे लिये नया कुर्त्ता तैयार करना।

शिशिरकी बातें सुनकर विद्युतको दुःख और लज्जाने एक साथ ही आ घेरा। कुछ न कहकर उसने अपना सिर नीचा कर लिया।

इतनेमें गज लेकर सन्ध्या लौटी। कमरेमें विद्युतको देखकर उसने कहा—आप आ गई ? देवरजी पागल हो रहे थे। (गज देती हुई) लो, अपना नाप आप ही ले लो।

एक तो विद्युत यों ही शिशिरका नाप लेनेमें असमर्थ थी, दूसरे सन्ध्याकी इन सारगर्भित बातोंने उसका मार्ग और भी अवरुद्ध कर दिया। पर संध्या माननेवाली स्त्री नहीं थी। वह जबर्दस्ती फीता (गज) विद्युतके हाथमें थमाकर उसे खींच लायी और शिशिरके सामने खड़ी कर दी। इस स्थितिमें नाप न लेना भी अनुचित था। विद्युतने नीची नजरोंसे एक बार शिशिरकी ओर देखा। उस चितवनने विद्युतके हृदयको शिशिरके सामने स्पष्ट खोल दिया। विद्युत नाप ले लेकर बोलने लगी और सन्ध्या हंस हंसकर उसे कागजपर लिखने लगी।

नाप ले लेनेके बाद सन्ध्याने मान सहित कहा—मैं नाप मांगते मांगते हैरान हो गई पर देवरजी एक न एक पख लगाकर देनेसे इन्कार ही करते गये। अब विद्युत रानीके फीता लेकर खड़े होते ही कैसे चुपकेसे नाप दे दिया।

शिशिरने शर्माकर कहा—जो किसी एक रास्तेपर चले तो उससे वाद विवाद करना भी उचित रहता है पर जो मनमाना, दूसरोंकी सुने विना ही, बकता जाता है, उससे तर्क करनेसे क्या लाभ ? वहां तो हार स्वीकार कर चुप रहना ही उत्तम मार्ग है।

सन्ध्या—आजसे मैं भी अनर्गल प्रलापी हुई।

शिशिर घबराकर बोला—तब तो मैं दोके बीचमें पड़कर बेतरह मरा।

सन्ध्या—(हंसकर) हम दोनों अलग अलग कुर्त्ता तैयार करेंगी। देखें, किसका आपको अधिक जंचता है।

शिशिरने कहा—मेरे लिये तो दोनों ही बराबर होंगी।

इसपर सब हंस पड़े। इसी समय "काएडारी"की एक प्रति लिये रजत कमरेमें प्रविष्ट होकर बोला—बोलो शिशिर, क्या खिलाओगे ?

शिशिर—क्या मेरा लेख निकला है ? पहले यह तो बतलाओ कि तुमने कितना घूस दिया है तो उसीके अनुसार तुम्हें खिलाने की व्यवस्था की जाय।

रजत (सगर्व)—साधारण घूस दिया है। मेरा एक बहुत पुराना लेख पड़ा था। उसीको दे आया था।

शिशिर—यह साधारण नहीं था। उसीके प्रतापसे तो मेरा लेख छप सका है।

शिशिर और रजत दोनों हंसने लगे। इतनेमें संध्या रजतके हाथसे "काएडारी"का वह अंक लेकर पढ़ने लगी और विद्युत झुककर देखने लगी।

शिशिरने पूछा—"संग्रह"में जो लेख दे आये थे उसका क्या हुआ ?

रजत—भूधर बाबूने कहा कि अभी तो उसे देखनेका समय ही नहीं मिला। अनेक प्रसिद्ध विद्वानोंके लेख भी पहलेके पास पड़े हैं। इससे अभी उसे छापनेका अवसर भी नहीं है।

शिशिर—तो उसे लौटा क्यों नहीं लाते ?

रजत—इतनी चिन्ता क्यों ? कितने लेखकोंके लेख बरसों

पड़े रहते हैं पर तुम तो पेड़ उगनेके पहिले ही फलके लिये आतुर हुएसे प्रतीत होते हो।

शिशिर—यह तुम्हारा भ्रम है। मैं तो न पेड़ चाहता हूं न फल। तुम्हीं जबर्दस्ती मुझे मजबूर करके बाहर खींच रहे हो। तुम पीछे न पड़ गये होते तो वे सब कागजपत्र ज्योंके त्यों पड़े रहते। संसारमें कोई उनकी गन्ध तक न पाने पाता।

रजत—अच्छा, यह सब बात रहने दो। मैं चेष्टा करके "संग्रह"में भी उसे शीघ्र ही प्रकाशित करा दूंगा। चलो, इस समय बाहर चलो, भूधर बाबू आदि सभी आये हैं।

इतना कहकर रजतने शिशिरका हाथ पकड़कर बाहरकी ओर खींचा। चलते चलते शिशिरने एक बार विद्युतपर दृष्टिपात किया। इसी समय विद्युत भी पुस्तकसे आंख उठाकर शिशिर-की ओर देख रही थी। दोनोंकी चार आंखें होते ही विद्युत शर्मा गई और फिर पुस्तक देखने लगी। शिशिर रजतके साथ कमरेसे बाहर हो गया।

शिशिरको दूरसे ही देखकर भूधर बाबूने चिल्लाकर कहा—आइये शिशिर बाबू, मैंने तो पहलेसे ही भविष्य-वाणी कर रखी है कि थोड़े ही दिनोंमें आपकी साहित्य-कीर्ति बङ्गाल देशमें छा जायगी।

रजत जरा गम्भीर हो गया। भूधर बाबूके मुखसे इस तरहकी मुक्तकण्ठसे किसीकी प्रशंसा उसने आजतक नहीं सुनी थी। शिशिरने समझा कि भूधर बाबू उसकी हंसी उड़ा रहे

है क्योंकि उनकी प्रकृतिसे वह भली भांति परिचित था। उसने अपने मनमें कहा कि जिसका काम ही लोकनिन्दा है वह भला मेरे लेखोंकी प्रशंसा कैसे कर सकता है।

कमरेमें प्रविष्ट होकर रजतने पूछा—आपने शिशिरके लेखोंको पढ़ा था?

भूधर—नहीं

भूधर बाबूकी बात समाप्त भी न होने पाई थी कि रजत अट्टहास करके हंसा।

उपस्थित अन्य लोगोंने भी उसमें योग दिया। भूधर बाबूको अपनी बात समाप्त करनेका भी अवसर न मिला। शिशिरका जी दुःख गया।

भूधर—इनके लेखको बिना पढ़े ही मैंने कम्पोज होनेके लिये प्रेसमें दे दिया है। "काण्डारी"में जो लेख निकला है उसे देखकर ही मैंने समझ लिया कि शिशिर बाबूकी कलममें कितनी शक्ति है, इनकी बुद्धिमें कितना चमत्कार है, इनमें कितनी प्रतिभा है। भाषापर इतना जबर्दस्त अधिकार, शब्दविन्यासमें यह करामात, वाक्यरचनामें इतना माधुर्य्य, भावविश्लेषणमें इतनी प्रखरता शायद ही कोई लेखक इस उमरमें प्रगट कर सकता है।

भूधर बाबूकी बातसे घरमें एक बार सन्नाटा छा गया। यह हंसीमें उड़ा देनेकी बात नहीं थी। इस दुबले, पतले, क्षीणकाय, मितभाषी, शान्तप्रकृति युवकके हृदयमें इतनी प्रतिभा, इतनी विदग्धता, इतनी विचक्षणता भरी है कि भूधर बाबू सदृश विकट

समालोचक भी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा किये विना नहीं रह सकते। रजतको तो इतना यश स्वप्नमें भी न मिल सका था। हां, चल सकता है, मन्द नहीं, एक रकमसे अच्छा है, ये ही प्रशंसा रजतके लेखोंको सदा मिलती आई थीं। आज शिशिरकी उत्कट प्रशंसा-से उसका जी जल उठा। शिशिर और भूधर बाबू दोनोंके लिये उसके हृदयमें विद्वेषाग्नि जल उठी। पर हृदयके भावको छिपाकर, इस पराजयकी शर्मको धो डालनेके निमित्त उसने हंसकर कहा—देखो शिशिर, उस दिन तो तुम मुझपर खफा होते रहे, पर आज इतनी प्रशंसा किसकी बदौलत हो रही है।

शिशिरका हृदय कृतज्ञतासे भर गया। उसने गम्भीर स्वर-में कहा—भाई रजत, मैं देखता हूं कि तुम्हारे एहसानोंका बोझ दिन प्रतिदिन भारी ही होता जा रहा है। मेरा इतना सौभाग्य न होता तो तुम मुझे बन्धुत्वेन ग्रहण क्यों करते।

सबके सामने शिशिरको अपना ऋणी स्वीकार कराकर भी रजत सन्तुष्ट न हो सका। उस पराजयको वह क्षणमात्रके लिये भी न भूल सका।

भूधर—शिशिर बाबू, मैं कल आपके घरपर आक्रमण करूंगा। किसी अन्यके पहुंचनेके पूर्व मैं आपके समस्त भण्डार-पर अधिकार कर लेना चाहता हूं। रजत बाबू हमारे लेफ्टेण्ट होंगे।

अबतक तो रजत किसी प्रकार अपने हृदयके भावको छिपा-कर हंस रहा था। भूधरकी इस बातको सुनकर वह एक दम

गम्भीर हो गया। बोला—कल तो मैं नहीं चल सकूंगा। कुछ आवश्यक काम है।

भूधरने रजतकी गम्भीरताकी उपेक्षा कर कहा—तब मैं अकेला ही आऊंगा, शिशिर बाबू !

प्रथम सफलतासे शिशिरका चित्त मारे आनन्दके उद्दीप्त हो उठा था। स्वभावगत लज्जासे नम्र होकर बोला—आपका स्वागत है, पर वहां हरण करने योग्य कोई वस्तु आपको न मिलेगी।

भूधरने हंसकर कहा—जो कुछ हम ला सकेंगे वही बङ्गला साहित्यमें अतीव दुर्लभ है। आपके हृदयमें विद्या और सौन्दर्यका विचित्र सम्मिलन हुआ है।

रजतने एक दम गम्भीर भाव धारण कर लिया, चुप चाप बैठा रहा। किसी बातमें योग नहीं दिया। उसके अन्य साथी भी चुप्पी साधे बैठे रहे। भूधर बाबूकी रसभरी बातोंने भी उनकी चुप्पी न तोड़ी। संगत भी न जमी, आज सब लोग जल्दी ही चले गये।

(पन्द्रह)

डाह

••०◇०••

संगत भंग होगई। रजत घरके भीतर गया। संध्याने प्रसन्न होकर कहा—भूधर बाबू देवरजीकी बड़ी प्रशंसा कर रहे थे।

रजत—(गम्भीर होकर) वह सब सम्पादकोंकी चाल है। नये लेखकोंको फंसानेका यही तरीका है।

संध्याने प्रतिवाद करके कहा—यह बात तो नहीं है। पहले तो बिना पढ़े ही वे लेख लौटा देनेको प्रस्तुत थे। पर "काण्डारी" में प्रकाशित लेखको पढ़कर उनका मत परिवर्तन हुआ।

रजत—"काण्डारी"में प्रकाशित लेख तो शिशिरका ही नहीं है। प्रूफमें मैंने घोर परिवर्त्तन करके इसका इस प्रकार रूपान्तर कर दिया है कि लोगोंको जचने लगा है।

शिशिरके नामसे जो लेख प्रकाशित हुआ है वह पूर्णतः शिशिरका नहीं है, उसमें रजतका भी हाथ है, रजतके परिवर्तन करनेसे ही उसने यह रूप धारण कर लिया है, दूसरेके परिश्रमसे ही शिशिरका इतना नाम हो गया है, इत्यादि बातोंको स्मरण कर संध्या दुःखी और सुखी हुई। यदि यह लेख शिशिरका ही होता तो उसे अधिक प्रसन्नता हुई होती। यह शिशिरका लिखा नहीं है यह जानकर उसे बड़ा दुःख हुआ पर अपने पतिकी मित्र-भक्ति

देखकर उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने कहा—मुझे पहले क्यों नहीं बताया! मैं भी इसी सोचमें पड़ी थी कि नूतन लेखक तुमसे उत्तम कैसे लिख सकता है। दो आदमीका हाथ लगनेसे वह इतना उत्तम हो गया है।

पर इससे रजतको तनिक भी प्रसन्नता न हुई। उसने गम्भीर स्वरसे कहा—हां। इतना कहकर रजत बाहर जाने लगा।

संध्या पतिकी गम्भीरताको लक्ष्य न कर उसके पीछे चलते चलते बोली—अबकी भूधर बाबूकी खूब हंसी होगी। बिना देखे ही लेख छापनेको दे दिया है तो ठगे भी जायंगे। देखो, अबकी तुम प्रूफ मत देखना और न संशोधन ही करना।

रजतको संध्याकी बातोंमें जरा भी आनन्द न मिला। उसने उसी भावसे कहा—तुम जाकर सो रहो, मुझे एक आवश्यक लेख लिखना है।

पतिके इस अन्तिम वाक्यको सुनकर संध्या चुप हो रही। उसने देखा कि पति भगवान बड़े ही गम्भीर हो रहे हैं, उसकी बातोंमें उन्हें लेशमात्र भी आनन्द नहीं मिल रहा है। उसने समझा—मालूम होता है इनके हृदयमें किसी नये भावका आविर्भाव हुआ है और वे उसीको अंकित करनेके लिये सिलसिला बांध रहे हैं। कोई न कोई नई रचना ये अवश्य कर डालेंगे और कुछ न कुछ नया अवश्य पढ़नेको मिलेगा, इस ख्यालसे उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। निदान वह बिछौनेपर जाकर सो रही। रजतने

कमरेमें जाकर बत्ती जलाई और लिखने बैठा—"काण्डारीकी नई संख्याकी समालोचना।"

प्रायः बारह बजते बजते रजतने अपनी समालोचना समाप्त की। उसी समय संध्या उठ खड़ी हुई और आग्रहसे पूछने लगी—देखूं, क्या लिखा है।

रजतने आश्चर्यसे पूछा—क्या तुम सो नहीं गई थी?

संध्याने पतिप्रेमसे अभिभूत होकर कहा—नींद नहीं पड़ी। आपका लेख देखे बिना तो मुझे चैन नहीं आता।

रजतने गम्भीर स्वरमें कहा—कोई विशेष बात नहीं है। "काण्डारी"की नई संख्याकी समालोचना की है। "संग्रह"के आगामी अंकमें जायगी।

सन्ध्याने आग्रहसे कहा—जरा देखूं तो अपने मुखसे अपनी करनी किस प्रकार वर्णित है।

रजतने कुण्ठित होकर कहा—अभी उसमें बहुतसा रद्दोबदल करना है।

सन्ध्याने लेख उठाते हुए कहा—जो कुछ बदलना हो पीछे बदलना। इस समय तो मैं उसे पढ़ूंगी ही। केवल इसे पढ़नेके लिये ही मैं अबतक जग रही थी।

रजत वहांसे उठा और धीरे धीरे जाकर चारपाईपर पड़ रहा। सन्ध्या पढ़ने लगी। अन्य लेखोंपर साधारण दृष्टिपात करते हुए रजतने अपनी गल्पकी जरा तीखी समालोचना की थी और अन्तमें शिशिरके उपन्यासकी समालोचना थी। लेखकने किन

किन शब्दोंका असङ्गत प्रयोग किया है, कहां शब्द-विन्यासकी टूट है, कहां भाव-ग्रहणमें कमी है, नायक नायिकाकी बात-चीतमें कहां अतिशयोक्ति है, इत्यादि बातोंकी कड़ी समालोचना की गई थी। इस समालोचनासे सन्ध्या सन्तुष्ट न थी पर उसने हंसकर कहा—अपनी और अपने मित्रकी हजामत अपने ही हाथ बनाई जायगी क्या ?

रजतने गम्भीर होकर कहा—इस विषयमें तो अपना पराया देखा नहीं जाता। यहां तो एक तरफ लेखक और दूसरी तरफ समालोचक। साहित्यकी दृष्टिसे तो प्रत्येक लेखककी जांच करनी होगी और उसी तराजूमें तौलना होगा।

सन्ध्याका दिल श्रद्धा और प्रेमसे भर गया। मेरे स्वामी इतने निरपेक्ष! सन्ध्या अपनी जगहसे उठी, पतिदेवको गाढ़ आलिङ्गन कर अपने हृदयके भावको अधररूपी कटोरीमें भरकर रजतके मुखमें डाल दिया। फिर भी रजतके हृदयमें उल्लास नहीं आया। उसने गम्भीर होकर कहा—अब और न जागो। रात अधिक बीत गई। चलो सो जायं।

उधर सङ्गत समाप्त होनेके बाद जब शिशिर विद्युतको लेकर पहुंचाने गया तो मार्गमें विद्युतने कहा—भूधर बाबूके मुखसे आपकी प्रशंसा सुनकर आपके मित्रको विशेष प्रसन्नता नहीं हुई।

शिशिरने व्यस्त होकर कहा—नहीं, यह बात नहीं है। इस प्रशंसाका अधिकांश श्रेय तो उन्हींको है।

विद्युत—मैं तो यह दो वर्षसे देखती चली आ रही हूं कि

रजत बाबू सदा अपनी प्रतिष्ठा चाहते हैं। दूसरेको अपने ऊपर उठते देख वे व्यस्त हो जाते हैं और उसे सह नहीं सकते।

शिशिर (व्यस्त होकर)—नहीं, रजतको समझनेमें आपने भूल की है। उसका हृदय बड़ाही सरल और उदार है।

विद्युत शिशिरकी प्रकृतिकी सरलता, सहज विश्वस्तता और संसारमें अटल विश्वास देखकर मुग्ध हो गई। बोली—आपका कहना ठीक है। पर रजत बाबूकी उदारता तभी तक रहती है जबतक वे देखते हैं कि उनकी बराबरीका कोई अन्य नहीं है। पर जिस समय उन्हें बोध हो जाता है कि कोई अन्य व्यक्ति उनसे ऊपर उठ रहा है उसी समय उनकी प्रकृति उन्हें बेतरह धोखा देती है और वे विकट रूप धारण कर लेते हैं। आरम्भमें ही आपकी जो प्रशंसा हो रही है क्या उसे आपके मित्र बरदाश्त कर सकेंगे ?

शिशिर (दुःखित होकर)—यदि ऐसा है तो मुझे अपने लेख उठा लेने होंगे। मुझे यशकी अभिलाषा नहीं है। रजतकी मैत्री बनी रहे, यही मेरे लिये बहुत है। अभीतक तो छपा नहीं है। अब कभी न छपेगा !

विद्युत शिशिरके बन्धु-वात्सल्यपर मुग्ध होकर चुप हो रही।

(सोलह)

उदय

दूसरे दिन तीसरे पहर भूधर बाबू शिशिरके डेरेपर जा पहुंचे। "संग्रह" के सम्पादक स्वयं लेख लेनेके निमित्त शिशिरके घरपर आये हैं, इस संवादने डेरेमें हलचल मचा दी। लोगोंने विस्मयसे देखा कि शिशिर उपेक्षा योग्य नहीं है !

शिशिरने कहा—भूधर बाबू, मैं यह नहीं चाहता कि लेख किसी पत्र या पत्रिकामें प्रकाशित हों। रजतसे भी मैंने यही कहा था। इसके अनेक कारण हैं।

भूधर—इस तरहका सङ्कोच वृथा है। आज मैंने आपकी "फूलोंकी डाली" पढ़ी। क्या ही मधुर और मनोहर रचनाशैली है। पढ़कर तबीयत बाग बाग हो जाती है। वाकई "फूलोंकी डाली" के प्रत्येक शब्द फूल ही हैं। उसके प्रत्येक शब्दमें अपरिमित भाव भरे हैं, फूलोंकी सौरभके समान मस्तिष्कमें भर जाते हैं। एक एक शब्द प्रौढ लेखनीसे निकले हैं।

शिशिर (उदास और गम्भीर होकर)—रजतने जो नासमझी की है उसीसे मैं त्रस्त हो गया हूं, इस छात्रावस्थामें मानसिक चिन्तामें मुझे न डालिये। मुझे भय है कि कहीं आपकी प्रशंसा मेरे लिये हानिकर न हो।

भूधर बाबू खिलखिलाकर हंस पड़े, डेरेके लड़के भी हंस पड़े। भूधर बाबूने कहा—इस समय जो कुछ आपके पास है उसे हमारे हवाले कीजिये। बी० ए० पास करनेके बाद फिर लिखनेका काम कीजियेगा।

शिशिर (नम्र होकर)—आप मुझे क्षमा करेंगे। आप साग्रह मेरे लेखके लिये इस तरह अनुरोध कर रहे हैं, इससे बढ़कर सौभाग्यकी बात मेरे लिये क्या हो सकती है। बङ्गालमें ऐसे कितने लेखक हैं। इसपर भी मैं आपत्ति कर रहा हूं। इससे आप भली भांति समझ सकते हैं कि मेरी आपत्तिका कारण कितना प्रबल है।

शिशिरकी प्रशंसा सुनकर कालिदास अतिशय प्रसन्न हो रहा था। उसने सोचा कि शिशिरका यह सङ्कोच स्वाभाविक है। नये लेखकोंको उतनाही सङ्कोच होता है जितना प्रथम सन्तान लाभ करनेपर नव वधूको। इसलिये वह शिशिरकी समस्त लिखी पुस्तकें लाकर भूधर बाबूके सामने रखकर बोला—लीजिये, इतनी तो यह हैं और मैं खोजता हूं।

पुस्तकें पाकर भूधर बाबू अतिशय प्रसन्न होकर उठ खड़े हुए और बोले—"गञ्जी यार किसके, दम लगाये व खिसके" अपना काम होगया अब मैं चलता हूं। इस समय विदा होता हूं फिर कभी उपस्थित हूंगा।

शिशिरका मुख भय और शंकासे कातर हो रहा था। भूधर बाबू उसकी ओर देखकर हंस दिये और चलते बने। डेरेके

समस्त छात्र आ आकर शिशिरकी प्रशंसा करने लगे और उसे हर तरहसे तङ्ग करने लगे। कोई हाथ पकड़कर खींचता, कोई पीठ ठोकता, कोई आलिङ्गन करता। शिशिरने हतोत्साहसा होकर कालिदाससे कहा—भाई कालिदास! तुमने अच्छा काम नहीं किया। इसके लिये मुझे भारी प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।

कालिदासने समझा कि शिशिर शायद समालोचकोंकी कठोर लेखनीसे भयभीत है। उसने हंसकर कहा—जिसके लेखको "संग्रह"के सम्पादक इतने आग्रहसे ले जांय उसको फिर समालोचना आदिका क्या भय?

शिशिर चुप रहा। इसी समय किसीने नीचेसे आवाज़ देकर पूछा—क्या इस डेरेमें शिशिर चक्रवर्ती रहते हैं?

कालिदासने चट उत्तर दिया—हां, आप लोग ऊपर आइये।

शिशिरने आश्चर्यसे कहा—यह बला कहांसे पहुंची!

इतनेमें ही दो सज्जनोंने कमरेमें प्रवेश किया। उनमेंसे एक महाशय तो जरा मोटे तगड़े थे। अभी जवानीकी उमङ्गमें थे। पञ्जाबी चादर ओढ़े थे जो कुछ मैली हो गई थी। दूसरे महाशय दुबले पतले थे, आंखपर चश्मा लगाये थे, माथा चिकना था और पोशाकसे बाबूपन झलकता था।

तगड़े सज्जनने कहा—मेरा नाम शैलेन्द्रनाथ सरकार है। मैं "मन्दिर"का सम्पादक हूं। (दूसरे सज्जनकी ओर लक्ष्य कर) आपका नाम शिरीषचन्द्र मैत्र है। आप "मुद्रिका" के सहकारी सम्पादक हैं। "काण्डारी"में शिशिर बाबूका जो लेख निकला है

उसे पढ़कर हम लोग मुग्ध होगये। भूधर बाबूसे भी शिशिर बाबू-की बड़ी प्रशंसा सुनी। हमलोग शिशिर बाबूके पास प्रार्थना करने आये हैं कि उनकी कृपादृष्टि हमारे पत्रपर भी होनी चाहिये। आप लोगोंमें शिशिर चक्रवर्ती किसका नाम है?

कालिदासने हंसकर कहा—जिसने इतनी प्रबल प्रतिभाका परिचय दिया है वह छिपा नहीं रह सकता। आप लोग सम्पादक हैं, क्या इतनी पहचान भी आपलोग नहीं कर सकते?

शैलेन्द्र अपने नामको चरितार्थ कर रहा था। अभीतक तो वह हंस रहा था पर कालिदासकी बातोंने उसे चक्करमें डाल दिया। वह चकित होकर सबके मुंहकी ओर गौरसे देखने लगा पर निश्चय न कर सका कि शिशिर चक्रवर्ती कौन हैं। उसने कालिदाससे कहा—आपने इस तरहका प्रश्न किया, इससे स्पष्ट है कि आप शिशिर चक्रवर्ती नहीं हैं। (शिशिरको लक्ष्य कर) आपकी आकृति, स्वभावगत लज्जा और उज्ज्वल मुख देखकर आपपर ही सन्देह होता है। उनकी बात समाप्त होते न होते सब ही प्रसन्न होकर हंस पड़े।

कालिदासने हंसकर कहा—आप लोग परीक्षामें उत्तीर्ण हुए, चलिये बैठिये। पर इतना अभीसे बतला देता हूं कि जो कुछ रहा सब भूधर बाबू अभी उठाकर ले गये।

शैलेन्द्र हताश होगया, बोला—क्या सब उठा लेगये?

शिरीष हंसकर बोला—तो हर्ज ही क्या है। लेखक तो कल्पवृक्ष ठहरे। फल सभी तोड़ सकते हैं। पर फलनेकी शक्तिको

तो कोई उठा नहीं ले जा सकता। जब जब उसे हिलाइये फल गिरेगा हो। जिस बुद्धि द्वारा नित्य नई बातोंका अविर्भाव हो, नये उद्गारोंका जन्म हो, उसे ही प्रतिभा कहते हैं।

शिरीष बाबूकी वाक्‌पटुता और वचनचातुर्य्यसे शिशिर बड़ा ही प्रसन्न हुआ। उसने कहा—मेरा सौभाग्य है कि आपलोग मेरे लेखको अपने पत्रमें स्थान देना चाहते हैं। मैंने कुछ छिपाकर रख छोड़ा है, अभी देता हूं।

"मुद्रिका" उस जमानेमें बङ्गालमें सर्वोत्तम पत्रिका समझी जाती थी। उसके सम्पादकको लेखके लिये इतना आग्रह करते देख शिशिर अपनी सारी आशंका और डर भूल गया। वह जाकर दो लेख ले आया और उसमेंसे जो उत्कृष्ट था उसे तो शिरीष बाबूको और जो जरा मध्यम था उसे शैलेन्द्र बाबूको दिया।

शैलेन्द्र आनन्दित होकर बोला—आपकी सुजनतासे हमलोग अतिशय कृतकृत्य हुए। यदि किसी समय कार्यालयमें पधारने-की कृपा करें तो हमलोग अनुगृहीत होंगे। हमलोग इतने फंसे रहते हैं कि बहुत आना जाना नहीं होता।

शिरीषने हंसकर कहा—हमलोगोंका एक क्लब है। हम चाहते हैं कि आप उसके सदस्य हो जायं। प्रति सोमवार बैठक होती है। बारी बारीसे बैठकका अधिवेशन प्रायः सभी मेम्बरोंके घर होता है। उसका कोई स्थायी अड्डा नहीं है। हमलोग सभी विषयोंकी निर्भय आलोचना करते हैं। हमारे क्लबमें नास्तिक,

साम्यवादी, विवाहके विरोधी, सभी प्रकारके लोग हैं। चूंकि इसकी सीमा परिमित नहीं है इसीसे इसका कोई स्थिर अड्डा भी नहीं है।

शिरीषकी बातचीतका ढंग इतना सुन्दर था कि शिशिर उस-पर मोहित हो गया। उसने कहा—जरूर मैं भी मेम्बर होऊंगा। आपने तो मुझे भी ठोंकपीटकर वैद्यराज बना दिया। जिस तरहसे आप लोग मेरी प्रशंसा कर रहे हैं उससे मैं भी अपनेको पण्डित और विज्ञ समझने लगा हूं।

शिरीषने हंसकर कहा—तो शुभस्य शीघ्रम्। कलकी बैठकमें आप अवश्य सम्मिलित हों।

शिशिरने पूछा—कल बैठकका अधिवेशन कहां होगा?

शिरीष—मेरे ही घरपर। कलसे ही आप हम लोगोंके अङ्ग हो जायंगे। कल आपका प्रवेश कराया जायगा। दूसरे सप्ताहसे आपको बराबर सूचना मिलती रहेगी। प्रतिमास चार आना चन्दा देना होगा और लिखना पड़ेगा कि हम सदा स्वत-न्त्रताके पक्षपाती हैं, सबको सोचने, लिखने और काम करनेकी पूर्ण स्वतन्त्रता है।

शिशिर (हंसकर)—इतना और क्यों न जोड़ दिया जाय कि हमलोग स्वतन्त्र डकैतीके भी समर्थक हैं।

शिरीष—हमलोग उसके भी प्रतिपादक हैं। हमलोग सबकी सब जगह स्वतन्त्रता चाहते हैं। स्वतन्त्रताही हमलोगोंका लक्ष्य है। कायदे कानूनके बन्धनको हम लोग स्वीकार नहीं करते।

शिशिर इस नव परिचित मनुष्यसे बातचीतमें पूर्ण स्वतन्त्रता और हेलमेल देखकर समझने लगा मानों यह मेरा पुराना परिचित है। इससे बातचीतकर शिशिर अतिशय प्रसन्न हुआ। इतनेमें शिरीष उठकर खड़ा हुआ और प्रणाम नमस्कार कर चलनेकी आज्ञा मांगी।

शिशिरने साग्रह उन्हें विदा किया। जाते समय शिरीष और शैलेन्द्र उस वर्षकी "मुद्रिका" और "मन्दिर"की पूरी पूरी फाईल उपहार देते गये।

इनसे छुट्टी पाकर शिशिर कपड़ा पहिनकर ज्योंही विद्युतके घर जानेको प्रस्तुत हुआ उसी समय "काण्डारी" के सम्पादक दक्षिणा बाबू एक सज्जन पुरुषको लेकर उपस्थित हुए। शिशिरका पता लगाकर उससे कहा—आपकी मेरी कभीकी जान पहचान नहीं। पर हम लोग एक दूसरेसे एकदम अपरिचित नहीं। मैं "काण्डारी" का सम्पादक हूं।

शिशिरने कहा—ठीक!

दक्षिणा बाबू कहने लगे—आपके लेखने "काण्डारी"का भाग्य पलट दिया। दिन प्रदि दिन ग्राहक बढ़ रहे हैं। इस मासकी "मुद्रिका"में आपके लेखकी बड़ी प्रशंसा निकली है। "मुद्रिका"के सहकारी सम्पादक श्रीयुत शिरीष मैत्रने आपके लेखकी समालोचना की है। उसी समालोचनाकी बदौलत इस तरह ग्राहक टूट पड़ रहे हैं।

शिशिर—शिरीष बाबू तो अभी यहांसे गये हैं, पर उन्होंने

यह सब कुछ नहीं कहा। "मुद्रिका" तो अवश्य देते गये हैं पर मैंने उसे अभीतक पढ़ा नहीं।

शिशिर "मुद्रिका"का वह अङ्क लेकर समालोचना खोजते खोजते बोला—आप मेरे ऊपर बड़ा अनुग्रह कर रहे हैं।

दक्षिणा बाबू—हम लोग आपसे एक बातकी प्रार्थना करने आये हैं। ये हमारे मित्र श्यामलाल मुखोपाध्याय हैं। आप प्रकाशनका काम करते हैं। जो लेख "काण्डारी"में छप रहे हैं उन्हें आप पुस्तकाकार निकालना चाहते हैं। यदि आप आज्ञा दें तो साथ ही साथ वह काम भी होता चले और इसके लिये ये आपको २५) रु० सैकड़े पुरस्कार देना चाहते हैं और कापी-राइट भी लेनेके लिये तैयार हैं। आदमी बड़े अच्छे हैं, किसी तरहकी धोखाधड़ी नहीं कर सकते।

शिशिर—मैं तो यह सब कुछ जानता नहीं। बलात् इस तरहकी विपत्तियोंमें झोंक दिया गया हूं। अच्छा होता यदि उसके संबन्धकी बातें आप रजत बाबूसे तै करते।

दक्षिणा बाबू—मैं पहले रजत बाबूके पास ही गया था पर उन्होंने कहा कि एक तो दूसरेकी पुस्तक, दूसरे रुपये पैसेका मामला, मैं इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। आप उनके ही पास जाइये। इसलिये मैं यहां आया।

रजतकी बातें सुनकर शिशिरको मार्मिक वेदना हुई किन्तु दूसरोंके सामने इस तरह हृदयके भावको व्यक्त करना उचित न समझकर उसने कहा—अच्छी बात है। मुझे आपकी शर्तें मञ्जूर हैं। कोई विशेष आपत्ति नहीं है।

श्याम बाबू—पुस्तककी कितनी प्रतियां आपको चाहिए ?

शिशिर(जरा सोचकर)—पचीस प्रति काफी होगी। मेरे तो सङ्गी साथी कोई अधिक नहीं हैं। समालोचनाके लिये तो पुस्तकें आप भेज ही देंगे।

श्याम बाबू—हां।

इसके बाद दोनों व्यक्ति विदा हो गये। शिशिर भी उन्हें दरवाजे तक पहुंचा आया।

शिशिरके ऊपर आते ही कालिदासने हाथ पकड़कर कहा—भाई! आज तो मैं आनन्दसे फूला नहीं समाता। भाई, ईश्वरने तुम्हें गजबकी सफलता दी। अब तो एक दिन हम लोगोंको खिलाना होगा।

शिशिरने हंसकर कहा—अच्छी बात है। आज ही रातको होने दो। तुम्हें ही तो सब कुछ करना धरना है। मुझे इस समय बाहर जाना आवश्यक है।

कालिदासने हंसकर कहा—विद्युतकी प्रभा ऐसी होती ही है। दावत आज नहीं जिस दिन पुरस्कारका द्रव्य मिलेगा उस दिन हम लोग डटकर खायंगे।

इसी समय एक आदमी लुङ्गी पहने आकर सामने खड़ा हो गया। शिशिरने पूछा—तुम कौन हो? उसने कहा—मैं दफ्तरी हूं। रजत बाबूका सब काम मैं ही करता हूं। सुना है कि "काण्डारी" प्रेसमें आपकी कोई पुस्तक छप रही है। यदि उसकी बंधाई हमें करनेको मिलती तो अच्छा होता।

शिशिरने हंसकर कहा—उससे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं। उसके प्रकाशक दूसरे हैं। उनसे और दक्षिणा बाबूसे मिलो।

दफ्तरी—यदि आप सिफारिश कर दें तो हमें अवश्य मिल जायगी।

शिशिर—पर मैं तुमको जानता नहीं। रजत बाबूके पास जाओ।

दफ्तरी—मैं उनके पास गया था, उन्होंने मुझे आपके पास भेजा है। उन्होंने कहा—मैं उसके बारेमें कुछ नहीं कर सकता।

शिशिर—मैं उनसे पूछकर जो होगा कहूंगा।

दफ्तरी सलाम करके चला गया। उसके चले जानेपर शिशिरने कहा—नाम हो जानेमें भी बड़ी मुसीबत है।

कालिदास—तो क्या आपने खेल समझा है?

शिशिरने गम्भीर होकर कहा—भाई, मुझे डर लग रहा है कि कहीं लेनेके देने न पड़ जायं।

कालिदास—कैसे?

शिशिर—मैं देखता हूं कि रजतकी ईर्ष्याकी मात्रा बढ़ती जा रही है।

शिशिरकी आशंकाको मिटाते हुए कालिदासने कहा-पागल! रजत तुम्हारी इस सफलतापर सबसे अधिक प्रसन्न है। तुम बड़े ही कातर हो। भला रजत समान प्रख्यात लेखक तुम सरीखे नव सिखुओंके साथ प्रतियोगिताका डाह करेगा।

कालिदासने शिशिरको जो छोटा पद दिया उससे शिशिर

अतिशय प्रसन्न हुआ। उसने अपने मनमें कहा—मैं भी पागल-पनमें क्या क्या सोच गया था। विद्युतकी बातोंने मेरे चित्तको चंचल कर दिया था। मैं अभी जाकर विद्युतसे लड़ूंगा।

यही सोचते सोचते शिशिरने विद्युतके घरकी तरफ प्रस्थान किया।

(सत्तरह)
शिशिरकी उदारता

एकके बाद एकके आजानेसे शिशिरको देर होगई। विद्युतके घरपर पहुंचते पहुंचते सन्ध्या हो गई। वह बेधड़क ऊपर चढ़ गया और क्षणप्रभाके कमरेमें प्रवेश करना ही चाहता था कि सहसा ठिठक गया। उस समय क्षणप्रभा एक बड़े आइनेके सामने खड़ी होकर अपनी सौन्दर्य-छटा निहार निहारकर बिहंस रही थीं। उनकी हंसी और भ्रूभङ्गीसे विचित्र तरहकी लालसा और विलासिताका भाव टपक रहा था। शीशेमें शिशिरका लज्जित और विरक्त प्रतिबिम्ब देखते ही क्षणप्रभा जल्दी जल्दी सिर ढंककर बोली—आओ बेटा, विद्युत तुम्हारी प्रतीक्षा कर रही थी। अबतक तुम न आये तो उसने समझा कि तुम निश्चय ही रजत बाबूके घर होगे। अभी वहीं गई है। आज इतनी देर क्यों हुई?

शिशिर—कई लोग आ गये, इसीसे देर हो गई। अच्छा तो अब जाता हूं।

क्षणप्रभा—रजतके घर जाओगे न? विद्युत वहीं मिलेगी।

माके मुखसे बेटीके लिये इस तरहकी बातें शिशिरको बहुत ही बुरी लगीं। बिना कुछ कहे सुने वह नीचे उतरा और घरसे बाहर हो गया।

रास्तेमें उसने निश्चय किया कि आज रजतके घर न जाऊंगा।

पर श्यामबाजारसे चलकर जब वह बीडन स्क्वायरके पास पहुंचा तो उसका मन जबर्दस्ती रजतके घरकी ओर खिंचने लगा। बार बार चेष्टा करनेपर भी वह अपने मनको न रोक सका। तब लाचार वह रजतके घरकी ओर मुड़ा। रजतके घरके फाटकमें एक तरफसे वह घुसा और दूसरी तरफसे विद्युतकी गाड़ी। गाड़ीसे उतरते ही विद्युतने शिशिरको देखकर हंसकर कहा—मैं तो आपहीको ढूंढती ढूंढती यहांतक पहुंची हूं।

शिशिरने हंसकर कहा—मैं भी तो आपके ही घरसे लौटा आ रहा हूं।

विद्युतने हंसकर कहा—तो चलिये लौट चलें।

शिशिरने हंसकर कहा—किसीके दरवाजे तक आकर लौट जाना उचित नहीं होगा।

विद्युतको भी यह बात पसन्द न थी। पर शिशिरके साथ एकान्तमें बातचीत करनेके आग्रहसे प्रेरित होकर ही उसने यह बात कही थी। पर शिशिरकी जबानी यह उत्तर पाकर वह शर्मा गई, उसका चेहरा लाल हो गया। और कुछ न कहकर वह आगे बढ़ी। शिशिर भी साथ साथ चला। घरमें सुनयनी, सन्ध्या और रजत तीनों विद्यमान थे।

दोनोंको साथ आते देखकर संध्याने हंसकर कहा—एक साथ आज युगलजोड़ीका शुभागमन बड़ा ही सुखदायक है।

विद्युतने संध्याके पास पहुंचकर प्रेमभरी चपत उसके गाल-पर जमा दी।

संध्याने हंसकर कहा—देवरजी ! क्या आपने इस मासकी "मुद्रिका" देखी है ? आप चाहे दुनियांको भलेही धोखा देलें पर हम लोगोंके सामने आपकी चाल नहीं चल सकती। हम लोगोंको तो पता लग ही गया।

शिशिर सन्ध्याका अभिप्राय न समझ सका। पूछा—किस तरह ?

सन्ध्याने हंसकर कहा—"कारडारी" में प्रकाशित लेख तो ठीक आपका नहीं है पर प्रशंसा आपकी हो हो रही है।

शिशिर—(चकित होकर) किसने कहा कि मेरा लेख नहीं है ?

सन्ध्या (उसी तरह कौतुककी हंसी हंसकर)—जिसने आपकी सहायता की थी, जिसने प्रूफमें आपके लेखको ठीकठाक कर दिया था, वे ही आपके बन्धु। इतना कहकर सन्ध्याने टेढ़ी नजर रजतपर डाली।

शिशिर अवाक् हो गया। उसने रजतकी ओर देखा। उसका चेहरा मुरझा गया था। वह समझ गया। चट सन्ध्याकी ओर फिरकर बोला—मालूम होता है रजतने सब भेद खोल दिया। इतना मना किया, इसे गुप्त रखनेके लिये भी कहा, पर न माना। जब आपको सब बातें मालूम ही हो गई हैं तो आपसे छिपाऊं क्या। सच बात तो यह है कि लेखका नाम और नीचेका हस्ताक्षर तो सोलहों आना मेरा, नहीं तो लेखके विषयमें पन्द्रह आना रजतका है और एक आना मेरा। इसपर मैंने रजतसे कहा कि तब अपना ही नाम रखो। उसने कहा—नहीं, कथा-

मुख तो तुम्हारा है। तब मैंने दोनों नामोंका प्रस्ताव किया। उसे भी स्वीकार नहीं किया। पर चोरी कितने दिन छिपी रह सकती है। आखिर खुल ही गई। चार कानसे दस कानमें पड़ी। अवश्य फूट जायगी और मुझे शर्माना पड़ेगा।

सन्ध्या (गम्भीर होकर)—हमलोग घरके लोग हैं, विद्युत अपनी है। बाहरके लोग यह बात किस तरह जान सकेंगे?

रजत उठकर धीरेसे बाहर चला गया।

सुनयनी पुत्रके मित्रवात्सल्यसे बड़ी प्रसन्न हुई, बोली—क्यों बेटा शिशिर! क्या तुम कोई दूसरे हो।

शिशिर-मलिन मुख उनकी ओर देखकर बोला—मा! यह तो मैं कह नहीं रहा हूं।

सन्ध्याने हंसकर कहा—एक और दिल्लगी हुई है। "काण्डा-री" के इस अंककी उन्होंने समालोचना की। उसमें अपने और आपके लेखकी बड़ी खिल्ली उड़ाई है। पढ़नेवालोंको यही विदित होगा कि समालोचक लेखकोंके पीछे हाथ धोकर पड़ गया है। खामखाह लोगोंका ध्यान लेखकोंकी ओर आकृष्ट होगा। संसारकी आंखोंमें धूल झोंकनेका यह दूसरा उपाय है।

इस बातसे शिशिरको आन्तरिक वेदना हुई। उसने दिखौआ हंसी हंसकर कहा—रजत इस गुणमें भी इतना निपुण है! हमें प्रसिद्ध कराये विना उसे चैन पड़ते नहीं दिखाई देता।

सुनयनी—बेटा, बड़े भाईका यही कर्तव्य है।

विद्युत बैठी बैठी सब बातें सुन रही थी। उसके हृदयमें

रह रहकर नये भाव उठते और विलीन हो जाते थे, भय, वेदना, लज्जा, विरक्तिके भाव उसे बेतरह पीड़ा देने लगे। उसे यह समझनेमें देर न लगी कि शिशिर ये सब बातें गढ़ गढकर कह रहा है। उसने सोचा—जिस दिन यह भेद सुनयनी और सन्ध्यापर प्रगट हो जायगा उस दिन रजतके प्रति इनके क्या भाव रहेंगे। अपने ही घरमें माता और स्त्रीसे रजत कितना अपमानित होगा। इस ख्यालने उसे और भी मर्माहत किया। वह चट उठकर चलनेको प्रस्तुत हुई, बोली—तबीयत अच्छी नहीं मालूम होती। घर जाती हूं।

सुनयनी घबराकर उसके उदास मुंहकी ओर देखकर पूछने लगी—क्या हो गया तुम्हें ?

विद्युत—सिरमें जोरोंका दर्द हो रहा है। कलेजेमें भी दर्द हो रहा है। इस तरहका दौरा मुझे प्रायः आया करता है।

सन्ध्या (सस्नेह उसके शरीरपर हाथ फेरती हुई)—यहीं सो रहो, जरा तबीयत सम्हल जानेपर तब जाना।

विद्युत—नहीं, मैं जाऊंगी। यह कहकर वह उठकर चली गई।

विद्युतका शरीर खराब है, यह सुनकर शिशिरको बड़ा ही दुःख हुआ। पर वहां कुछ कहना उचित न समझकर वह चुप हो रहा। विद्युतको अकेली जाते देख उसे और भी दुःख हुआ। पर मारे शर्मके वह साथ भी नहीं जा सकता था। पर सुनयनीने उसकी रक्षा की, बोलीं—शिशिर, तुम विद्युतके साथ जाकर

उसे घरतक पहुंचा आओ। उसकी तबीयत अच्छी नहीं है। अकेले जाना उचित नहीं।

इस आज्ञाका पालन करनेके लिये शिशिर सहर्ष तैयार हो गया। सुनयनी (सन्ध्यासे)—मालूम होता है इसे भी अपनी माका रोग हो गया है। कलेजेका दर्द तो साधारण बीमारी नहीं है।

अपनी सखीके इस संक्रामक रोगसे सन्ध्या अति विकल हो उठी। कातर दृष्टिसे सासकी ओर देखती हुई बोली—गर्मीके कारण भी दर्द हो सकता है। फिर हंसकर—देवरजीको उड़ा ले जानेके लिये तरकीब भी हो सकती है।

बधूकी बात सुनकर सुनयनी हंस पड़ी। विद्युत शिशिरके साथ रवाना हो गई।

गाड़ीमें बैठते ही विद्युतने शिशिरसे कहा—इस तरह झूठी बातोंसे कबतक उनके अवगुणोंको छिपाइयेगा ?

शिशिर विद्युतकी बुद्धि-विलक्षणतापर मन ही मन मुग्ध होता हुआ बोला—मैंने झूठ क्या कहा ?

विद्युतने जोर देकर कहा—मेरे नजदीक आपकी चाल नहीं चल सकती। रजत बाबूकी शैली मुझसे छिपी नहीं है। इस लेखकी एक लाइन भी लिखनेकी उनमें योग्यता नहीं और यही उनकी ईर्षाका कारण है।

शिशिरने सिर नीचा करके लम्बी सांस खींचते हुए कहा—न जाने किस अशुभ घड़ीमें रजतने मेरी पुस्तकोंको बाहर

निकाला। अब तो बचावका कोई उपाय भी नहीं रहा। आज "संग्रह" "मुद्रिका" और "मन्दिर" के सम्पादक भी आकर लेख ले गये।

शिशिरकी अन्तिम बात सुनकर विद्युत मारे खुशीके उछल पड़ी। बोली—क्या "मुद्रिका" के सम्पादक भी लेख मांगने आये थे? खूब हुआ। "मुद्रिका"के सम्पादकसे तो रजत बाबूका झगड़ा है। देखें अब वे किस मुंहसे कहते हैं कि इस लेखका प्रूफ भी मैंने देख दिया है।

शिशिर (जरा रुककर)—प्रूफ मैं मंगा भेजूंगा। मैं तो प्रूफ देखने जानता नहीं, रजतको दे दूंगा।

शिशिरकी उन्नतहृदयता देखकर विद्युत अवाक् हो गई। वह और कुछ न कह सकी। तृषित नेत्रोंसे शिशिरके मुंहकी ओर देखती रही। गाड़ी पूर्ण वेगसे खट्खट् करती जा रही थी पर भीतर बैठे दोनोंके दोनों एक दम चुप थे।

(अठारह)

कपटजाल

दूसरे दिन कालेजमें पहुंचते ही खगेन शिशिरके पास पहुंचा और उसके कन्धेपर हाथ रखकर बोला—रजत बाबूने तो चुटकी बजाते बजाते आपका नाम कर दिया।

शिशिर—(हंसकर) प्रथम सहवाससे ही मैं जान गया था कि रजत इन गुणोंमें कितना निपुण है।

खगेन—(मुंह बनाकर) रजत बाबूमें भी कैसी शक्ति है! कलममें कैसा जोर है, क्या देखनेवाला कभी भी कह सकता है कि यह उनकी शैली है। तुम्हारी शैलीमें एकदम अपने कलमको मिला दिया।

शिशिर—(हंसकर) इसीसे तो उनकी प्रसिद्धि है। जो कुछ वह कर दें उसे थोड़ा समझिये।

रजत उस जगहसे हटकर दूर चला गया। खगेनने कहा—आत्म-प्रशंसाकी बात सुनकर रजत बाबू यहांसे हट गये।

कालिदास चुपचाप अबतक शिशिर और खगेनकी बातें सुन रहा था। उसने पूछा—खगेन! तुमसे कौन कहता था कि शिशिरका जो लेख "काण्डारी" में निकला है वह रजतका लिखा है? क्यों शिशिर यह बात सच है?

शिशिरके बोलनेके पूर्व ही खगेन बोल उठा—भला यह कब सम्भव है कि शिशिर बाबू इस बातको स्वीकार कर लेंगे। रजत बाबू स्वयं मुझसे कह रहे थे—मैं शिशिरको खाना कपड़ा देता हूं, बासावालेने मकानका किराया कम कर दिया है, इस बहानेसे मकानका किराया भी चुकाता हूं, उसका नाम होगा यह सोचकर उसके लिये पुस्तकें लिखकर छपवा देता हूं पर वह ऐसा निमकहराम है कि एक बार स्वीकार भी नहीं करता।

शिशिरपर मानों पहाड़ गिर पड़ा। कातर दृष्टिसे उसने कालिदासकी ओर देखा। शिशिरको सान्त्वना देनेके अभिप्राय-से उसने कहा--सब झूठी बात है। इतनी पुस्तक लिखनेका रज-तको समय कब मिला? स्वयं भूधर बाबू बासामें जाकर शिशि-रके लेखोंकी जिस तरह प्रशंसा करते थे उसे मैंने अपने कानों सुनी है।

खगेनने कहा--भूधरकी बात छोड़िये। सम्पादक तो बिना पेंदीके लोटा होते हैं, कभी इधर ढुलक पड़ते हैं कभी उधर। आज जिसकी निन्दा करेंगे कल उसीकी स्तुति करने लगेंगे। भूधरने देखा कि शिशिरकी विख्याति हो रही है तो लेख पानेके लालचसे उनकी स्तुति करने लगे। हमारे पत्रमें जिसका लेख निकले वही तो सुलेखक है।

कालिदास–यह कैसे? सबसे पहले तो "काण्डारी"ने छापा। उसे देखकर ही तो उनकी आंखें खुलीं, नहीं तो उसके पहले तो निकम्मा समझकर कोनेमें फेंक दिया था।

खगेन—(हंसकर जोरसे) "काण्डारी"में जो छपा है उसमें क्या सार है यह तो इस मासका "संग्रह" बतला देगा।

उसी वक्त सन्ध्याकी बातें शिशिरको स्मरण हो आई। जिस तरह शिखण्डीकी आडमें अर्जुनके वाणोंने भीष्मका संहार किया था, सुग्रीवके व्याजसे रामचन्द्रके वाणोंने बालिका नाश किया था। उसी तरह "संग्रह"की ओटमें रजत-लिखित समालोचना शिशिरको मर्मभेदी प्रतीत हुई। शायद यहां रहनेपर और कुछ अप्रिय सुनना पड़े यह ख्याल कर वह वहांसे चला गया। कालिदास भी वहांसे खिसक गया। बनमालीने उस चीत्कारमें खगेनका साथ दिया।

पाठक बनमाली दासको न भूले होंगे। यह वही बनमाली दास है जिसे शिशिर अपना पेट काटकर १०) रु० महीना भेजता था। रजतने उसे राजशाही कालेजसे बुलाकर कलकत्तामें रख लिया है और सब खर्च स्वयं देता है।

कालेजसे बासामें पहुंचकर शिशिरने करुण स्वरसे कालिदाससे कहा—इसे मैं स्वीकार करता हूं कि रजत मेरी नाना तरहसे सहायता करते हैं पर मैं उनके पास कभी मांगने तो नहीं गया था। अतिशय प्रेमके कारण ही उनकी यह कृपा मेरे ऊपर है, आज तक मैं इसी भ्रममें पड़ा था। पर क्या यह सब एक दम मुफ्त था? मैंने भी कुछ न कुछ बदलेमें दिया ही है।

कालिदास—रजत ऐसी बातें कभी भी नहीं कह सकता। यह सब खगेनकी चाल है। उन सब बातोंका जरा भी ख्याल मत करो।

कमरेमें जाकर शिशिर खत लिखने बैठा। सबसे पहले उसने उन पत्रोंके सम्पादकोंके नाम पत्र लिखा जो उसके लेख ले गये थे। फिर उसने पुस्तक-प्रकाशकके पास पत्र लिखा। सबके पास उसने लेख आदि न प्रकाशित करनेके लिये ही प्रार्थना की थी। इतना करके वह घरसे बाहर हो गया।

सबसे पहले वह विद्युतके घर गया। शिशिर जानता था कि आज विद्युत घरमें न होगी तोभी वह इस उम्मीदपर गया कि यदि वह होगी तो उसे कह आऊंगा कि कुर्तेका जो माप लिया है उसके अनुसार कुर्त्ता न बनाना। यदि वह न मिली तो उसकी मासे कह आऊंगा।

विद्युत घरपर नहीं थी। क्षणप्रभा भी नहीं थी। घरमें थे केवल नौकर चाकर। पूछनेपर मालूम हुआ कि वह कहीं गई है। शनिवारके सवेरे आवेगी।

शिशिर लौट आया। रास्तेमें रुककर सोचने लगा कि रजतके घर जाना उचित है अथवा नहीं। कुछ निर्णय न कर सकनेपर भी वह रजतके घरकी ओर ही चल पड़ा।

पहले वह सीधे सुनयनी और सन्ध्याके पास चला जाया करता था। पर आज वह रजतकी बैठकमें गया। उस समय बैठकमें रजत, खगेन, बनमाली तथा हेम बैठकर हंसी मजाक कर रहे थे। शिशिरके पहुंचते ही सब ठंढे पड़ गये। पर उनके चेहरेसे हंसीका भाव लुप्त नहीं हुआ था। बैठते बैठते शिशिरने कहा—भाई रजत! मुझे आजतक विदित नहीं था कि तुम मेरे कमरेका किराया भी देते हो।

खगेन—(पीछे मुंह फेरकर पूर्णसे) क्या खूब! हजरतको यह मालूम नहीं!

उन लोगोंकी बातें शिशिरके कानमें पड़ीं पर उनपर ध्यान न देकर उसने रजतसे कहा— आजसे मकान-मालिकको घूस मत देना। मैं उस बासामें न रहूंगा।

खगेन आंख मटकाकर उन लोगोंकी ओर देखकर शिशिरको लक्ष्य करके बोला—क्या विद्युत सुन्दरीके घरमें निवास होगा?

उनकी बोलीपर ध्यान न देकर शिशिरने कहा—और बनमालीकी सहायताके लिये भी आपको कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा।

बनमालीने बीचमेंही बात काटकर कहा—मैंने क्या अपराध किया है?

शिशिर दृढ़ और गम्भीर स्वरमें बोला—तुमने कोई अपराध नहीं किया है, अपराधी तो मैं हूं। मेरे कारणही रजत तुम्हारी सहायता कर रहे हैं। मैं उनका ऋणी हूं, आभारी हूं, अब कितना बोझ लादूंगा। तुम राजशाही लौट जाओ, पूर्ववत मैं तुम्हें १०) रु० मासिक भेजा करूंगा।

आजतक बनमाली शिशिरके १०) रु०की सहायताको बड़ी-भारी बात समझता आरहा था और इसीमें कृतकृत्य था पर एक माह कलकत्तामें रहकर रजतकी कृपासे प्रचुर द्रव्य व्ययके लिये पाकर उसके भाव एकदम बदल गये थे। शिशिरकी बातें सुनकर उसने एकबार रजतकी ओर देखा। रजत शिशिरकी बातोंसे विरक्त न होकर मन्द मन्द हंस रहा था। उससे साहस पाकर

बनमालीने कहा—अब मैं आपकी कृपाका भिखारी नहीं हूं। अब आपको उस दस रुपयेके देनेका भी कष्ट नहीं उठाना पड़ेगा।

शिशिरको ऐसी आशा नहीं थी। बनमालीकी बातें सुनकर वह अवाक् रह गया। क्षणभर चुपचाप रहकर उसने कहा—अच्छी बात है। एक ऋणसे मैं मुक्त हुआ। शिशिरने रजतसे कहा—भाई रजत, मैंने सभी प्रकाशकोंको पत्र लिखकर अपने लेखों-को न छापनेकी प्रार्थना की है। मैं प्रत्येकके दफ्तरमें जाऊंगा। इस काममें तुम भी मेरी सहायता करो।

इतनी देरतक रजत चुप था, बोला—खूब कहा। जिससे मेरे सिरपर इस बातका कलंक लगे कि रजत शिशिरकी ख्यातिमें बाधा डालनेके लिये प्राणपणसे चेष्टा कर रहा है। मैं तो इसी बातकी चेष्टा करूंगा कि तुम्हारा लेख कोई लौटावे नहीं।

शिशिर हताश होगया। बनावटी हंसीसे बोला—देखते हैं तुम ऋणका बोझ बढातेही जाओगे।

शिशिर बैठकसे बाहर निकल आया। दालानमें खड़ा होकर सोचने लगा कि भीतर जांय कि नहीं। पहले तो इच्छा हुई कि इन लोगोंसे संबन्ध विच्छेद कर दें पर सुनयनी और संध्याको विना अपराध इस तरह दण्ड देना उसने महापाप समझा। निदान वह भीतर गया।

उसका चेहरा उदास था, मुख मलीन था। संध्याने पूछा—देवरजी! अपकी तवीयत अच्छी नहीं है क्या?

शिशिर सूखी हंसी हंसकर बोला—नहीं भाभी, तबीयत तो ठीक है।

सुनयनी—पगली लड़की! कालेजसे आया है, थक गया है। आओ बेटा, जलपान कर लो।

शिशिरकी आंखोंमें जल भर आया। मैं खाऊंगा नहीं मा! भाभी, किताब निकालिये।

शिशिरका भाव देखकर ही सुनयनी ताड़ गईं कि कोई न कोई घटना अवश्य हुई है। शिशिरकी पीठपर हाथ फेरते फेरते उन्होंने पूछा—क्या हुआ है बेटा!

इसी समय रजत भी भीतर आ गया। उसको देखते ही सुनयनीने पूछा—रजत, क्या हुआ है? शिशिर खाने क्यों नहीं जा रहा है।

रजत—मुझे क्या मालूम—

सुनयनी—(शिशिरके प्रति) तब फिर मुझे नहीं बतलावोगे?

शिशिरने उदास मुखसे एक बार रजतकी ओर देखा, फिर सिर नीचा करके रोनी आवाजसे बोला—क्लासके लड़के यह कहकर मेरी हंसी उड़ा रहे हैं कि रजत मुझे खाना कपड़ा और बासाका भाड़ा देते हैं।

सुनयनीने क्रुद्ध होकर आंखें काढ़कर रजतसे पूछा—वे लोग ऐसी बातें क्यों कहते हैं?

रजत—(हंसकर) मेरे ऊपर आपका क्रोध व्यर्थ है मा! क्या मैं लोगोंका मुंह बन्द कर दूं?

सुनयनीने उसी तीव्र स्वरसे पूछा—बासाके किरायेकी बात उन्हें क्योंकर मालूम हुई ?

रजत निरीह भावसे बोला—बासाके किसी लड़केने कह दिया होगा।

सुनयनी तीव्र कटाक्षसे रजतकी ओर देखकर, शिशिरका हाथ अपने दोनों हाथोंमें लेकर बोलीं-बेटा शिशिर ! हम लोगोंने तुम्हारे तेजस्वी भाग्य और स्वेच्छानुसार स्वीकृत दरिद्रताका धनके मदमें प्रेमका कपटजाल बिछाकर अपमान किया है। बेटा, तुम हम लोगोंको क्षमा करो।

शिशिर सुनयनीके पैरोंपर गिर पड़ा। बोला—मा ! आप यह क्या अनर्थ कर रही हैं। मैं आपका पुत्र हूं।

रजत एक क्षण भी वहां ठहर न सका। कमरेसे बाहर हो गया।

सुनयनीने शिशिरको उठाकर कहा—बेटा, तुम नहीं जानते कि तुमसा पुत्र पाकर मुझे कितना गर्व है। उसका नाश मत होने दो। सहसा हम लोगोंसे सम्बन्ध मत तोड़ो।

शिशिर—मा ! मैं प्रतिज्ञा करता हूं कि मैं प्रतिदिन आभो-को पढ़ाने आया करूंगा।

सुनयनी—हम लोग तुमसे केवल लेंगे ही, तुम्हें कुछ देंगे नहीं। बड़े आदमियोंकी क्या अवस्था है, इसका हम प्रतिक्षण अनुभव करते हैं।

शिशिर—(हंसकर) मा ! जो कुछ आपसे पाया है उसका शोध जन्म जन्मान्तरमें भी नहीं हो सकता।

सुनयनीको मर्मान्तिक वेदना हुई। वह अपनेको सम्हाल न सकीं। आंसुओंका बेग रोकने या गुप्त रखनेके लिये वह वहांसे उठकर चली गईं।

सुनयनीकी इस न्यायपरायणता और दरिद्रताके प्रति अनन्य श्रद्धाने शिशिरका हृदय उसके प्रति श्रद्धा और प्रेमसे भर दिया। वह सारी वेदना भूल गया। उसने हंसकर कहा—चलिये भाभी! पढ़िये।

संध्या मारे शर्मके गड़ी जा रही थी। वहांसे धीरे धीरे अपने कमरेमें गई और पुस्तक लेकर बैठ गई। पर अन्य दिनकी तरह आज पढ़ाई नहीं जम सकी। आज गुरु-शिष्यका संबन्ध पूर्णतः चरितार्थ हो रहा था।

(उन्नीस)

हेरफेर

नियमित समयपर शिशिर प्रतिदिन आकर संध्याको पढ़ा जाया करता था पर अब सुनयनी किंवा संध्या कोई भी उसे भोजन आदिके लिये अनुरोध नहीं करती थीं। रजत चोरकी तरह खा पीकर घरसे बाहर चला जाता था। उसकी माता तथा पत्नी जिस प्रकार क्षुब्ध और विषण्ण होगई थीं, ऐसी अवस्थामें उसे वह घर भी खाने दौड़ता था, शिशिरको मुंह दिखाना तो अति दुस्तर था।

रजतकी व्यवस्था देखकर ही सुनयनी और संध्या दोनोंने समझ लिया था कि शिशिरके अपमानमें रजतका हाथ अवश्य है। इससे शिशिरकी बात तो वे लोग उसके सामने करतीं ही नहीं, उससे भी खुलकर बातचीत न करतीं।

इस प्रकार अपने ही घरमें अपनी माता और पत्नीके लिये भी रजत बेगानेकी तरह होगया था। रजतने देखा कि इन उपद्रवोंका कारण शिशिर है, इससे वह शिशिरसे और भी अप्रसन्न होने लगा।

शिशिर भी अब पहलेकी तरह स्वच्छन्द नहीं रहा। अब वह पहले बाहरसे खबर भिजवा देता था और जब कोई बुलाने

आता था तब अन्दर जाता था। पहलेकी तरह अब हंसी दिल्लगी भी नहीं होती थी। संध्या छात्रीकी भांति चुपचाप पढ़ने बैठ जाती थी। यह अवस्था यद्यपि शिशिरके लिये अतिशय क्लेशकर थी तथापि वह प्रतिदिन नियत समयपर आजाया करता था। वह सोचता था—मैं ऋणी हूं, जहांतक बन पड़े इस ऋणका प्रतिशोध करना ही होगा। इस ख्यालसे उसे एक तरहका आनन्द भी होता था।

शनिवारका दिन था। ज्योंही शिशिर मकानके अन्दर पहुंचा, संध्याने उत्फुल्ल होकर कहा—देवरजी ! क्या आपने इस मासका "संग्रह" देखा है ? मुझे अभी मिला है।

संध्याके इस आनन्दमें विगत सात दिनके गुरुभारकी स्पष्ट प्रतिध्वनि थी। जिस तरह बादलोंकी काली घटा दखिनइया हवाके चलते ही न जाने कहां दूर हो जाती है उसी प्रकार संध्याके चेहरेकी विषण्णता भी दूर हो गई। शिशिरके हृदयपरसे भारी बोझ उतर गया। उसने हंसकर कहा—नहीं मैंने तो नहीं देखा है। क्या मेरे लेखकी वह समलोचना निकली है क्या ?

संध्या—हां, समालोचनाको पढ़कर देखिये। इस अंकमें आपका "फूलोंकी डाली" उपन्यास भी आरम्भ हुआ है। इतना कहकर संध्याने "संग्रह" का अंक शिशिरके हाथमें रख दिया। शिशिर समालोचना पढ़ने लगा। उसका मुख प्रसन्न हो उठा। सन्ध्याके आह्लादकी सीमा नहीं थी। समालोचकने रजतके लेखकी जितनी निन्दा की थी उससे कहीं अधिक प्रशंसा शिशिर-

के लेखकी की थी। शिशिरने सोचा कि रजतने मेरी ख्यातिके लिये इतना अन्याय अपने साथ किया है। यह जानकर रजतके प्रति स्नेह और श्रद्धासे उसका दिल भर गया। उसके दिलमें जो कुछ असद्भाव था, गायब हो गया। उसे अपनी भूलपर पश्चात्ताप होने लगा। यदि रजत यहां होता तो वह उससे क्षमा प्रार्थना किये विना न रहता।

सन्ध्या और शिशिरकी आकृति देखकर सुनयनी समझ गई कि कोई नई बात अवश्य हुई है। उन्होंने पूछा—क्या है बेटा शिशिर ?

सुनयनीका भाव पूर्ववत् स्थिर देखकर शिशिर गद्गद् हो गया। उसने हंसकर कहा—मा! रजतका त्याग देखो। अपने लेखकी अकारण निन्दा कर मेरे लेखकी प्रशंसाका पुल बांध दिया है। मैंने सब लेखकोंको पत्र लिखा था कि मेरा लेख लौटा दीजिये। उन्होंने जाकर सबको मना कर दिया कि मेरी बातोंकी कोई परवा न करे।

सुनयनी पुत्रके सभी अपराध भूल गईं। उसने देखा–रजतने अपने पापका काफी प्रायश्चित्त कर लिया है। पुत्र-स्नेहसे उसका हृदय प्रफुल्लित होगया। उसने सस्नेह कहा—रजत तुझे भाईकी तरह स्नेह करता है। अपने भाईकी कौन उन्नति नहीं चाहता।

उसी समय रजतने घरमें प्रवेश किया। सबको आनन्दमें निमज्जित देखकर उसे आश्चर्य हुआ। वह ठमक गया।

शिशिर तुरत उसके पास जाकर बोला—तुमने यह क्या अन्याय किया रजत ?

रजत—(गम्भीर होकर) जो सत्य है उसे तो अपनत्वके नाते छोड़ा नहीं जा सकता। समालोचकोंको सदा पक्षपातहीन होना चाहिये ।

शिशिर—(हंसकर) पर यह निष्पक्षपात नहीं हुआ है। अपने लेखकी इस तरह निन्दा और मेरे लेखकी इतनी प्रशंसा तो उचित नहीं थी। मेरे और तुम्हारे लेखकी तो कोई तुलना नहीं।

रजत स्तम्भित होगया। उसने हाथ बढ़ाकर कहा—देखें ?

रजतके इस भावने सबके मनमें सन्देह उत्पन्न कर दिया। सन्ध्याने जल्दीसे कहा—पहले तो दोनोंकी निन्दा ही की गई थी। यह बदल कब दिया गया ?

"संग्रह"की समालोचना पढ़ते पढ़ते रजतने गम्भीर स्वरसे कहा—बादको बदल दिया। सन्ध्याके हाथमें "संग्रह"का अङ्क देकर बाहर जाते जाते रजतने विकट हंसी हंसकर कहा-तुम लोगोंको कैसा धोखा दिया !

रजतके गम्भीर भावने जो सन्देह उत्पन्न कर दिया था, उसकी इस हंसीने उसे भी दूर कर दिया।

इसी समय विद्युत् भी आ उपस्थित हुई। सन्ध्याने हंसकर कहा—इस मासका "संग्रह" देखा है ? इस अङ्कमें देवरजीकी

"फूलोंकी डाली" आरम्भ हुई है और "काण्डारी"में प्रकाशित लेखको प्रशंसापूर्ण समालोचना है।

विद्युतका चेहरा मारे प्रसन्नताके खिल उठा। उसने शिशिरके चेहरेपर दृष्टिपात किया और सन्ध्याके हाथसे 'संग्रह'का अङ्क लेकर पढ़ने लगी। बोली—समालोचकको एक भी त्रुटि नहीं मिल सकी।

शिशिर—भला अपने दहीको किसीने खट्टा कहा है!

पतिकी प्रशंसाकी बातें सुनकर सन्ध्या मन ही मन अति-प्रसन्न होती हुई स्वभावगत लज्जाको छिपानेके लिये विद्युतकी ओर घूमकर बोली—तुम्हारे हाथमें क्या है?

विद्युत शिशिरको लक्ष्य कर बोली—कुर्त्ता तैयार करके लायी हूं, तुम्हारा तैयार होगया कि नहीं?

सन्ध्या बड़ी कठिनाईमें पड़ गई, कुर्त्ता तो तैयार था पर पिछली घटनाओंके कारण उसे शिशिरको देनेका साहस न था। इस समयके आमोद प्रमोदमें वह उस स्मृतिको भुला देना चाहती थी पर विद्युतने उसे पुनः जागृत कर दिया। इससे सन्ध्याने संभ्रान्त होकर विद्युतको इशारेसे रोका। विद्युत भी घबरा गई, सन्ध्याकी गम्भीर आकृति देखकर वह समझ न सकी कि क्या मामला है। उसने सशङ्क नेत्रोंसे शिशिरकी ओर देखा।

शिशिर—अपनी सिलाई भी बाहर कीजिये भाभी! आज आप लोगोंके गुणोंकी परीक्षा होगी।

शिशिरका प्रसन्न मुख देखकर सन्ध्याका सारा भय दूर हो गया, वह चट जाकर कुर्त्ता ले आई।

देखते ही शिशिरने कहा—इसमें तो भाभीकी जीत रही। भाभी, रजत भाईको बुलाओ, मैं उन्हें दिखला दूं कि आपलोगोंका मेरे ऊपर कितना स्नेह है।

तीनों व्यक्ति हंस पड़े। सन्ध्या उठकर रजतको बुलाने चली गई।

एकान्त देखकर शिशिरने विद्युतसे कहा—आपसे मेरा एक अनुरोध है।

विद्युत अनिमेष दृष्टिसे शिशिरकी ओर देखती रही।

शिशिरने कातर होकर कहा—जबतक मैं कमाने नहीं लगता मैं आपके घरपर आना जाना बन्द कर दूंगा, आपसे भी प्रार्थना है कि इसके लिये अनुरोध न करें। मैं यहां भी आना नहीं चाहता पर सन्ध्या और मा सुनयनी तथा आपके दर्शनकी अभिलाषा मुझे यहांतक खींच लाती है।

रजतका नाम न लेनेपर भी विद्युत ताड़ गई कि रजतने किसी तरहका असद् व्यवहार अवश्य किया है जिसका इनके मर्मपर आघात पड़ा है। एक दिन उसने शिशिरको इस बातकी चेतावनी भी दी थी। शिशिरकी मनोवेदनाका वृत्तान्त जानकर उसे घोर सन्ताप हुआ।

इसी समय संध्याने कमरेमें प्रवेश किया। बोली—मुझे बाहर भेजकर आप लोग क्या बात कर रहे थे। वे तो कहीं बाहर चले गये हैं। लौटकर आवेंगे तो हमलोगोंके अनुरागका वृत्तान्त उन्हें सुनाइयेगा। इस समय अपने अनुरागकी फिकर कीजिये। क्या मैं यहांसे चली जाऊं?

इतना कहकर संध्या जानेको उद्यत हुई। विद्युतने उसका हाथ पकड़ लिया। चार आंखें होते ही उसने देखा कि विद्युतका मुख म्लान हो गया है और किसी तरहकी मर्मान्तिक वेदना उसे बेतरह सता रही है। उसने देखा कि शिशिर हंस रहे हैं पर उनकी हंसीमें भी एक तरहकी वेदना मिली है। संध्याका चेहरा उदास हो गया। वह समझ न सकी कि यह कालरात्रि कहांसे एकाएक आ उपस्थित हुई। उसने कातर और करुण स्वरसे विद्युतसे पूछा—क्या हुआ विद्युत?

विद्युतने असली भाव छिपाकर ऊपरी हंसी हंसते हुए कहा—होगा क्या, कुछ तो नहीं।

इसी समय दरवानने आकर सूचित किया—रजत बाबू थेटरमें गये। बाहर बैठकमें यतीन बाबू और कालिदास बाबू बैठे हैं, शिशिर बाबूको बुलाते हैं।

शिशिर उठकर बाहर चला गया।

संध्या—(चकित होकर) थेटर गये! यह तो एक दम नई बात है। आज तो संगतकी बैठकका दिन था!

विद्युतने संध्याके मुखपर दृष्टिपात किया। उसने देखा कि संध्याके चेहरेपर अमंगलसूचक आशंकाकी गम्भीर छाया आ विराजी है। उसने उसे खींचकर अपने पास बैठा लिया। पर दोनोंका हृदय भाव-तरङ्गोंसे इस प्रकार आन्दोलित हो रहा था कि किसीको बोलनेका साहस न हुआ।

(बीस)

पतन

••○◊○••
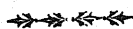
रजतने "संग्रह"में शिशिरके लेखकी प्रशंसा पढ़कर तुरत गाड़ी कसवाई और "संग्रह" कार्यालय जा पहुंचा। दफ्तरमें प्रवेश करते ही उसने भूधर बाबूसे पूछा—मेरे लेखमें आपने इस प्रकार परिवर्तन क्यों किया ?

भूधर—जब समालोचना सम्पादकके नामसे निकलती है तब मैं असत्य बात कैसे छाप सकता हूं ?

रजत—तो फिर मेरी गल्पकी निन्दा क्यों रहने दी।

भूधर—वह उचित थी।

रजतने क्रुद्ध होकर कहा—शिशिरके लेखोंके पानेके पूर्व आपने कभी भी ऐसा साहस नहीं किया था।

इस अन्तिम बातसे भूधर बाबूने अपनेको अपमानित समझा पर क्रोध न दिखलाकर स्वाभाविक गांभीर्ययुक्त वचन बोले-देखिये रजत बाबू ! छोटे मुंह बड़ी बात उचित नहीं। बंगालमें तो ऐसा कोई नहीं जो "संग्रह"के सम्पादकके लिये यह कहनेका साहस करे। आपको होनहार देखकर प्रोत्साहन देनेके अभिप्रायसे आपके लेख छापने लगा जिससे आपको इतनी धृष्टता हो गयी कि आप अपनेको सिद्धहस्त लेखक समझने लगे। शिशिर बाबूकी

लेखनीसे जो शब्द अङ्कित हुऐ हैं उनकी बराबरी आप सात जन्ममें भी नहीं कर सकते।

रजत अपमानित होकर बोला—तब आप शिशिरको लेकर रहिये। मेरा आपके साथ आजसे किसी तरहका सम्बन्ध नहीं रहा। आप खूब समझते हैं कि दूसरोंके नामसे मैं "संग्रह"को कितना रुपया देता आ रहा हूं।

भूधर—यदि आप सम्बन्ध रखना भी चाहें तो हमारी ओरसे असम्भव है। यदि "संग्रह" किसी योग्य है तो वह आपके दानकी उपेक्षा करके भी अनवरतरूपसे चल सकता है।

रजत कार्यालयसे बाहर होगया। बाहर आते ही खगेन, हेम, पूर्ण, बनमाली आदि उसके मुसाहिब मिल गये। उन्होंने भूधर, "संग्रह" और शिशिरका विविध प्रकारसे उल्लेख कर रजतको खूब उत्तेजित किया। इसके बाद विक्षुब्ध चित्तको शान्त करनेके लिये रजत साथियोंके साथ एक होटलमें गया। पर भोजन किया तो घर जानेकी इच्छा न रही। उसने सोचा शिशिर अभी वहीं होगा। घरके सब लोग उसके गुणोंपर मुग्ध हैं। संध्या उसकी प्रशंसा कर मुझे और भी क्षुब्ध कर देगी। इससे उसने अपनी मित्र-मण्डलीसे पूछा—घर जानेकी तो इच्छा नहीं होती। कहो कहां चला जाय?

सब एक स्वरमें बोल उठे—आज शनीचर है चलो थेटरमें चला जाय।

रजत—(ज़रा सोचकर) चलो।

रजत अपनी मित्र-मण्डलीके साथ थेटरमें पधारे। भूधर बाबूसे सम्पर्क ही न रहा। बैठकमें केवल कालिदास व यतीन उपस्थित थे।

कालिदासने शिशिरको बुलाकर कहा—क्या मामला है? मेजमान साहब तो थेटरमें पधारे और मिहमानोंकी संख्या इतनी कम। क्या यह बैठक भंगकी नोटिस है?

शिशिर—मुझे क्या पता, भाई?

तब गोली मारो, यह कहकर कालिदास और यतीन भी चले गये।

इतनेमें सुनयनीने नौकरसे कहा—बाहर बाबू लोगोंको जलपान दे आओ।

नौकरने कहा—दो बाबू आये थे वे भी चले गये।

सुनयनीका मन उदास होगया। जलपानकी सामग्री जहां-की तहां पड़ी रही।

शिशिर लौट आया। उसने देखा कि भोजनकी सामग्री इधर उधर बिखरी पड़ी है। उसीके बीचमें सुनयनी विषण्ण होकर बैठी हैं और संध्या पाषाणकी मूर्त्तिकी तरह बैठी उनका मुंह देख रही है। कमरेमें अकेली विद्युत बैठी है।

यह दृश्य देखकर शिशिरका हृदय विदीर्ण होगया। उसने अपने मनमें सोचा—इन सब विपत्तियोंकी जड़ मैं ही हूं। बोला—मैं कितना बदकिस्मत हूं। जहां कहीं मेरी परछांई पड़ी वहीं अशान्तिका जन्म होजाता है। मा, मेरेही कारण इस घरमें

इतनी अशान्ति उत्पन्न होगई है। यदि मैं न आऊंगा तो सब ठीक ठीक चलेगा। अब मुझे आशीर्वाद दीजिये।

सुनयनीने शिशिरके चेहरेपर दृष्टिपात किया। बोलनेकी इच्छा की पर मुखसे शब्द न निकले। उसका गला भर आया।

शिशिरने चुपचाप सुनयनीको चरण छूकर प्रणाम किया। संध्यासे बोला—भाभी, आपलोगोंकी दयादृष्टि मेरे जीवनका अमूल्य रत्न है। मैं इसे कभी न भूलूंगा। मेरा निवेदन है कि अनजानमें मुझसे जो अपराध हुआ हो उसे मनमें न लाइयेगा।

शिशिरने देखा संध्याकी आंखोंसे छलछल अश्रुधारा बह रही है। अपनी आंखोंके आंसू छिपानेके लिये वह मुंह फेरकर वहांसे चल पड़ा। नीचे आकर उसने देखा कि विद्युत बिना किसीसे कुछ कहे ही चली जा रही है। विद्युत चुपचाप जाकर गाड़ीमें बैठ गई। शिशिरने गाड़ीके पास जाकर पूछा—क्या अकेली ही जावोगी?

विद्युत—(विषण्ण भावसे) पहले भी अकेली जाया करती थी आज भी जाऊंगी।

शिशिरने बिदा लेनेके लिये खिड़कीसे गाड़ीके भीतर हाथ बढ़ाया।

विद्युतने अपना दाहिना हाथ शिशिरके हाथके ऊपर रख दिया। शिशिरने उद्वेगमें अपने हाथमें विद्युतका हाथ लेकर कहा—यही अन्तिम मुलाकात है।

विद्युतने धीरे धीरे हाथ खींच लिया। गाड़ी चल दी।

शिशिर भी वहांसे बासाकी ओर चला। वह सोचने लगा—मनुष्य-जीवनमें इससे अधिक सुख नहीं। यह चरम सीमा थी और मैं उसपर पहुंच गया था। सुनयनीका स्नेह, सन्ध्याकी प्रीति तथा विद्युतका अमूक अनुराग—इन सबका तीस दिनतक पूर्णरूपसे उपभोग करता रहा। इस सुखके सामने जीवनके निकृष्टतम दुःख भी कुछ नहीं थे। पर मैं दस दिन पहले ही यहांसे अलग क्यों न हो गया। तब तो रजतका बन्धुत्व भी जैसाका तैसा बना रहता। पर अभाग्य देवताकी कृपाको कौन रोक सकता है। अब जो हो गया उसकी चिन्ता क्या? इसी तरह सोचता विचारता वह बासा पहुंचा।
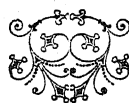
(इक्कीस)

षड्यन्त्र

अपरिचित शिशिर, जिससे एक मास पूर्व जानपहचान भी न थी, उनके लिये कितना प्रिय हो गया है इसका पता आज सुनयनीको लगा। शिशिरके लिये उनका चित्त अधीर होने लगा। सुनयनी उसी तरह भोजनकी सामग्रियोंके बीच बैठी थीं और सन्ध्या किवाड़ पकड़े खड़ी थी। दोनोंकी आकृतिसे स्पष्ट झलकता था मानों कोई उनका प्राण हर ले गया है।

इसी समय रजतने घरमें प्रवेश किया। रजतकी शब्दध्वनि पाकर सुनयनीने वधूकी ओर देखा। इस समय संध्याका म्लान मुख कुछ कुछ प्रसन्न हो रहा था।

मित्रोंके अनुरोधसे रजत थेटरमें गया था पर उसे चैन न मिली। संगतकी बैठक और मित्रोंका ख्याल उसे वहां बेचैन करता रहा। घरके लोग भी उद्विग्न होते होंगे। शिशिरका भी ख्याल उसे आया। उसीके भयसे वह इधर उधर मुंह छिपाके फिरता रहा। इन सबका ख्याल आतेही उसका चित्त उद्विग्न होगया। थेटरमें बैठकर ये लोग नाना प्रकारके उपाय सोच रहे थे जिनके द्वारा ये लोग "संग्रह" और भूधरको नीचा दिखावें। इतनेमें रजतने कहा—हमारी इच्छा है कि एक पत्र निकाला जाय।

खगेन एकबारगी चिल्ला उठा—खूब सोचा। अवश्य निकाला जाय।

उसकी चीत्कारसे थेटर-हाल एक दम गूंज उठा। दर्शक-गण एकदमसे चिल्ला उठे—जनाब, जरा धीरे २ बोलिये।

इस सुयोगको हाथमें लेकर रजत बोला—चलो घर चलें। आजही पत्रकी सारी व्यवस्था कर दी जाय।

खगेन—(उत्साहित होकर) ठीक तो है चलिये न।

पूर्ण—यह काम कल भी हो सकता है। तमाशा बीचमें ही छोड़कर चलना तो हमें नहीं जंचता।

खगेन–नहीं, नहीं, शुभस्य शीघ्रम्, अभी होजाना चाहिये।

मन न रहनेपर भी सब उठ पड़े और रजतके पीछे हो लिये। घर आकर रजतने बैठकको सूनी पाया। पूछनेपर मालूम हुआ कि दो सज्जन आये थे पर बिना जलपान किये ही चले गये। शिशिर बाबू भी चले गये। मा अभी तक भोजनका सामान लिये बैठी हैं। भय और शर्मके मारे रजतका मुंह सूख गया। साथियोंको बैठनेका इशारा कर वह बनावटी हंसी हंसता भीतर गया। सामना होतेही सुनयनीने उसपर तीव्र दृष्टिपात किया। भयके भावको छिपाकर रजत इस तरह बोला मानों कुछ हुआ ही नहीं है। संगतके लोग विना जलपान किये ही चले गये मा! शिशिरको भेजतीं। शिशिरको घरका आदमी समझकर मैं इधरसे निश्चिन्त था। पर शिशिरने खूब तमाशा किया!

सुनयनीने घुड़ककर पूछा—तू तो थेटरमें गया था न।

रजत—(हृदयके असली भावको छिपाकर) अप्सरा थेटरके मनेजर कई दिनसे एक नाटक लिख देनेके लिये अनुरोध कर रहे हैं। उसी संबन्धमें उनसे कुछ बातचीत करने गया था। देरकी सम्भावना देखकर कोचवानसे शिशिरके पास समाचार भेज दिया था।

जिस प्रकार रातकी मन्द शीतल समीर पथिककी सारी थकावट अपनी मन्द थपकियोंसे दूर कर देती है उसी प्रकार रजतकी बातोंने सुनयनीके हृदयकी सारी व्यथा दूर कर दी। उसने हंसकर कहा—हम लोगोंको यह क्या मालूम! आत्माभिमानी शिशिर हम लोगोंसे सदाके लिये बिदा होकर यहांसे चला गया।

रजतने झूठी चालसे माता और स्त्रीके हृदयका सन्देह दूर किया था। इसकी उसे खुशी थी पर शिशिरकी बात सुनकर उसे पुनः भय हो गया। उसने विषण्ण होकर पूछा—क्यों?

शिशिरकी बात सुनकर रजतका चेहरा उतर गया था। यह देखकर सुनयनीको हार्दिक प्रसन्नता हुई। उसने कहा "क्यों?" पूछते हो। उसे जितना आत्माभिमान है उतना ही पागलपन भी है। उसने समझा कि उसके ही कारण तुम घरसे भागे भागे फिरते हो। रात अधिक हो गई है नहीं तो अभी बुला लानेके लिये तुम्हें भेजती।

रजत—(गम्भीरता और लापरवाहीसे) कल वह स्वयं आवेगा।

सुनयनीने कहा—अच्छा यह सब सामान लेजाकर अपने दोस्तोंको खिला दो।

रजत घरसे बाहर निकला। निकलते निकलते उसने कहा—थाली लगाकर बैठकमें भेजिये, मेरे समेत पांच आदमी हैं।

भोजन आ गया। लोग खानेमें व्यस्त होगये। खाते खाते खगेनने कहा—सम्पादक होंगे रजत बाबू, पर पत्रका नाम क्या होगा ?

रजत—(हंसकर) कोई नाम आप ही बताइये।

खगेन—(मुंह चलाते हुए) "सञ्जय" नाम रखिये।

रजत—(हंसकर) उससे अच्छा तो "धनञ्जय" होगा। धनञ्जय शब्दके साथ 'घात प्रतिघात' की भी सार्थकता है।

पूर्ण—मेरी समझमें "नारद" नाम अच्छा होगा।

हेम–भाई, 'प्रथमे ग्रासे मक्षिकापातः' ठीक नहीं। झगड़ालू नाम लेकर उठना ठीक नहीं।

रजत—पर झगड़ेके कारण ही तो इस पत्रको जन्म दिया गया है।

सब एक स्वरमें बोल उठे—"नारद" ही ठीक होगा। "नारद" ही रखा जाय।

रजत—मैंने तो "जहन्नुम" नाम रखना चाहा था पर "नारद" मुझे भी जंचता है। केवल समालोचनाका शीर्षक "जहन्नुम" रख दिया जायगा।

इस बातपर लोगोंने इतनी खुशी प्रगट की कि कोलाहलके मारे सारा मकान गूंज उठा।

अब प्रश्न उठा कि पत्रका आकार क्या हो, सचित्र हो कि

अचित्र, कागज कैसा लगाया जाय, एण्टिक कि आइवरी फिनिश इसपर प्रायः बारह बजे रात तक परामर्श होता रहा पर कोई स्थिर राय कायम न होसकी। यह तय कर बैठक समाप्त की गई कि कल कालेजसे लौटकर पुनः परामर्श कर सब बातें स्थिर की जायं और पत्र इसी माससे प्रकाशित होने लगे।

साथियोंको विदा कर रजत भीतर गया। संध्याने पूछा—इतनी राततक किस बातकी गोष्ठी होती रही?

रजत—(हंसकर) एक पत्र निकालनेका विचार हो रहा है।

संध्या—(उत्फुल्ल होकर) कबसे निकालोगे? क्या नाम होगा?

रजत—(कौतुकके साथ) इसी माससे निकलेगा। "सन्ध्या" नाम रखनेका विचार है।

सन्ध्या—(आनन्दमें निमग्न होकर) क्या! जो वस्तु एकको पसन्द है वही सबको पसन्द होगी।

रजत—(हंसकर) जिस "सन्ध्या"के सम्पादक रजतराय होंगे वह किसे न भावेगी?

सन्ध्या—(प्रसन्नताके साथ) क्या सम्पादकके स्थानपर शिशिर बाबूका भी नाम दोगे?

रजत—(गम्भीर होकर) क्या "सन्ध्या"के लिये एक सम्पादक रजतराय पर्याप्त न होंगे कि शिशिर चक्रवर्तीको भी घसीटना पड़ेगा?

सन्ध्या रजतके मुख-गांभीर्यको न देख सकी। उसकी बातोंसे उसने समझा कि वे हंसी ही कर रहे हैं। इससे उसने

कहा—सच सच बता दो, देवरजीका नाम दोगे कि नहीं ? सम्पादकके स्थानपर दोनोंका नाम देना अच्छा होगा।

रजत—(गम्भीर होकर) वह नये लेखक हैं, उन्हें जानते ही कितने लोग हैं ?

सन्ध्या–(बात काटकर) आजकल तो उनका खूब नाम हो रहा है। जिसे देखिये उसीके मुंहपर उनका नाम है और उनका लेख भी आपसे अच्छा ही होता है।

रजत—(डाहके भावको छिपाकर) किन्तु एक दिन हमारा ही लेख तुम्हारी दृष्टिमें सर्वोत्कृष्ट था।

सन्ध्या–(स्वामीके हृद्गत भावको न समझ कर, हंसती हुई) आपकी इस बातका उत्तर तो आपकी यह कविता ही दे देती है:—

'लक्षित अभी गगनमें जो थे चन्द्र और सब तारे।'

रजत—(क्षुण्ण होकर) दूसरे जो चाहें कहें, पर सन्ध्या तुम्हें यह कहना उचित नहीं था। तुम भी मुझे शिशिरसे हीन समझती हो ! मैं तुम्हारा स्वामी हूं। शिशिर तुम्हारा कौन है ?

सन्ध्या पतिदेवके कातर शब्दोंको सुनकर स्तब्ध हो गई। उसने कहा—आपको स्मरण होगा कि जिस दिन आप शिशिरको पहले पहल इस घरमें लाये थे आपने कहा था—सन्ध्या, यह शिशिर तुम्हारे हैं। आज ही मैंने उन्हें लाल रङ्गका कुर्ता बनाकर दिया है। उसे देखकर वे कहने लगे—कुर्ता भाभीके प्रेमके रङ्गमें रङ्गा है ! आप मेरे पति हैं, वे मेरे देवर हैं। दोनों आदमी अपने हैं। फिर मुझे कहना ही पड़ता है।

रजत चुपचाप कपड़ा उतारने लगा।

सन्ध्या रजतके मुख-गांभीर्य और अन्धकारको लक्ष्य न कर सकी। वह पत्र निकालनेकी खुशीमें अतिशय आनन्दित होकर कहने लगी—यदि यह पत्र एक मास पहले ही निकला होता तो देवरजीका एक भी लेख दूसरोंके हाथ न लगने पाता। उनके लेखोंसे यह पत्र एक दम चमक उठता।

रजतने क्रोधसे कहा—शिशिरके उपासकोंको मैं दिखा दूंगा कि उसके लेखोंके बिना ही पत्र चमक उठता है। बस, बङ्गालमें एकमात्र शिशिर ही तो लिखना जानता है? मैं दिखला दूंगा कि शिशिर कितने पानीमें है।

रजतको क्रोध करते देख सन्ध्या घबरा गई। इस समय तक तो वह मित्रके सामने मित्रकी प्रशंसा कर प्रसन्न होती रही। पर यह देखकर कि शिशिरकी प्रशंसा रजतको सह्य नहीं है और उसे सुनकर रजतको क्रोध हो उठता है, उसके दुःख और क्षोभका अन्त नहीं रहा। उसे अब स्पष्ट हो गया कि शिशिरकी बढ़ती रजतकी आंखोंमें खटकती है। उसकी बातोंसे रजतको क्रोध आ गया था, इसका उसे उतना दुःख नहीं था जितना उसे इस बातका दुःख था कि शिशिरकी प्रशंसा कर उसने रजतकी विद्वेषाग्नि और भी भड़का दी। उसने मन ही मन प्रतिज्ञा की कि मैं भूलकर भी इनके सामने शिशिरका नाम न लूंगी।

आगे वह कुछ बोलनेका साहस न कर सकी। चुपचाप खड़ी रही। रजत भी कुछ न बोला। करवट घुमाकर सो रहा।

(बाईस)

विष कि अमृत
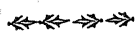
पत्नीके मुखसे शिशिरकी प्रशंसा रजतको सर्वथा असह्य थी। उसने उसी रातको संकल्प कर लिया कि जिस तरह हो उसके धवल यशको कलुषित करके ही छोड़ेंगे।

दूसरे दिन चटपट भोजन करके रजत अपने मित्र खगेनके साथ बाहर जानेकी तैयारी करने लगा। इसी समय सुनयनीने कहा—पहले जाकर शिशिरको बुला ला, तब अपने पत्रकी व्यवस्था करने जाना।

रजत—(गम्भीर होकर) यदि फुरसत मिल गई तो जाऊंगा। इतना कहकर रजत कपड़ा पहननेके लिये कमरेमें गया। सन्ध्याने पूछा—मा शिशिर बाबूको चिट्ठी लिखनेको कह रही हैं, लिख दूं?

रजतने सन्ध्याकी तरफ दृष्टिपात भी न किया। उसी तरह कपड़ा पहनते पहनते बोला—जो तुम्हारी इच्छा हो करो। आजके पहले तो ऐसा प्रश्न कभी नहीं किया था।

सन्ध्या—उस समय आपकी उनपर कृपादृष्टि थी।

रजत—(अप्रतिभ होकर) इसीको कहते हैं स्त्रीबुद्धि। यदि कोई वस्तु किसीको पसन्द न आवे तो उससे उसे नाराज

किस तरह समझ लिया जाय। जैसे शिशिर हैं वैसे ही तुम लोग भी हो।

इतनी बातसे ही सन्ध्याका सारा सन्देह जाता रहा। वह प्रसन्न हो उठी और शिशिरको खत लिखने लगी। उसने लिखा :—

देवरजी,

आप भ्रममें पड़ गये हैं। वह सब बात गलत है। मा आपको बहुत बुला रही हैं, मेरा भी अनुरोध है। स्वयं वे (रजत) आपको बुलाने जा रहे हैं आप अवश्य आइये। आप नहीं आवेंगे तो मा रोवेंगी और मैं खफा हो जाऊंगी। किं बहुना

आपकी स्नेहमयी—

भाभी

पत्रको संध्याने रजतके हाथपर रख दिया। रजत पत्र लेकर चला गया।

रजत सीधे शिशिरके पास पहुंचा और उसे संध्याका पत्र दिया। शिशिरकी सारी आशंका दूर हो गई। उसका चित्त प्रफुल्लित हो गया। तृषित नेत्रोंसे उसने रजतकी ओर देखा।

रजतने कहा—हमलोग एक तमाशा कर रहे हैं।

शिशिर–(परम उत्सुकतासे) क्या?

रजत—हमलोग एक पत्र प्रकाशित कर रहे हैं। इसी माससे प्रकाशित होगा। नाम रखा है "नारद"। झगड़ा करना ही उसका काम होगा। जिसकी जहांसे त्रुटि देखेगा

उसी जगह उसपर प्रहार करेगा। तुम भी उसकी मारसे बचे न रहोगे।

शिशिर—(हंसकर) इससे उत्तम बात क्या होगी। चटपट मेरा नाम हो जायगा।

रजत—(गम्भीर होकर) हमारे यहां समालोचनाका स्टैण्डर्ड ऊंचा होगा।

शिशिर—(हंसकर) यही होना भी चाहिये।

रजत—पर उस समय क्रोध मत करना। मैं पहलेसे ही बतलाये देता हूं। इस समय मुझे "नारद"की फिकर पड़ी है, चलता हूं।

शिशिर रजतको दरवाजे तक पहुंचा आया। उसके चले जानेके बाद वह सुनयनी और संध्याके पास चला। घरमें प्रवेश करते ही संध्या सामने आकर बोली—बख्शिश!

शिशिर—(साश्चर्य हंसकर) किस लिये?

संध्या—(हंसकर) सबसे प्रिय वस्तुके प्रदानके उपलक्षमें।

शिशिरने संध्याके कमरेमें दृष्टिपात किया।

संध्या खिलखिलाकर हंस पड़ी। बोली—आपकी आंखें विद्युतको खोजने लगीं न? इसीलिये तो मैंने उसे पहलेहीसे बुला रखा है। इसीकी बख्शिश चाहती हूं।

शिशिर—(अतिशय कृतज्ञतासे) जो सुख प्रतिदिनके सहवाससे मिलता है उसका यदि प्रतिकार देना हो तो हरिश्चन्द्रके समान बिककर भी मैं उसको नहीं चुका सकता। फिर आपके हाथ तो मैं पहलेसे ही बिक चुका हूं।

संध्या—(प्रसन्नचित्त होकर) तब तो आपपर मेरा पूर्ण अधिकार है। मैं जो चाहूं आपसे करा सकती हूं।

इतना कहकर संध्या शिशिरका हाथ पकड़कर विद्युतके पास खींच लाई और उसके हाथमें शिशिरका हाथ धर बोली—विद्युत, यह थाती मैं तुझे सौंपती हूं। इसकी सतर्क रक्षा करना। ऐसी अपूर्व वस्तु तुझे नहीं मिलनेकी।

इस आनन्दके बाद गाना बजाना आरम्भ हुआ। आनन्दकी जो अविरल धारा बही उसमें सबका दुःख दैन्य लुप्त हो गया।

इस तरह आमोद प्रमोदमें समय बिताकर शिशिरने संध्यासे बिदा मांगी और घर जानेको प्रस्थान किया। इतनेमें सुनयनीने बुलाकर पूछा—क्यों शिशिर! जब तू पढ़ लिखकर नौकरी करेगा तो वेतन लेगा कि बेगार काम करेगा?

सुनयनीके प्रश्नका मर्म समझकर शिशिर केवल हंस दिया।

सुनयनी—यदि तनखाह लेगा तो क्या लोग तेरी निन्दा करेंगे?

शिशिर सुनयनीकी प्रीतिभरी बातें सुनकर मुग्ध हो गया, बोला—मा, मुझे किसी वस्तुका अभाव तो नहीं है। पुरस्कार काफी मिलता है। लेखादिसे जो कुछ मिल जाता है वह जमा हो रहा है और बनमालीदासका भार भी सिरपर न रहा।

सुनयनी—(कुछ सन्तुष्ट होकर) एक बनमालीदास होते तब तो। कालिदास कहता था कि तुझे दिन रात गरीब और

विधवाओंकी ही चिन्ता पड़ी रहती है। किसीको किताब, किसीको वस्त्र, किसीको अन्न तू दिलाया ही करता है।

शिशिर—(हंसकर) मा, दरिद्रकी दृष्टि सदा दरिद्रतापर रहती है।

सुनयनी—यही कहनेको तुझे बुलाया है कि यदि तेरा काम नहीं चलता तो अपनी मासे रुपया लेले।

शिशिर—(प्रसन्नतासे) अन्नपूर्णाका प्रसाद पानेके लिये अपने समान अनेकों कंगाल मैं इकट्ठे कर दूंगा मा!

इतनी बातचीतके बाद शिशिरने बिदा ली। विद्युत भी चली गई। उनके जानेके थोड़ीही देर बाद रजतने घरमें प्रवेश किया।

इसके पूर्व रजत बाहरसे आकर सीधे माता और पत्नीके पास जाता था। उनसे दो चार बातें कर तब बाहर आता था। पर इधर कई दिनोंसे वह बात नहीं रह गई थी। वह आकर बाहर ही बैठकमें बैठता और केवल भोजन या शयनके लिये भीतर जाता, सो भी कई बारके बुलानेपर। आज वह स्वयं शिशिरको बुलाने गया था इससे संध्याको आशा थी कि घरमें आते ही वह एक बार शिशिरकी खोज खबर अवश्य लेंगे। संध्या परम उत्सुकताके साथ इसी बातकी प्रतीक्षा कर रही थी पर रजत भीतर न आया। सन्ध्याने देखा कि बाहर बैठकमें रोशनी हो रही है और रजत बैठा है। बड़ी देरतक वह प्रतीक्षा करती रही। अन्तमें स्वयं बाहर बैठकको तरफ चली।

रजत अकेला कमरेमें बैठा था। जैसे अन्धेरी रातमें कोई

भूत प्रेत देखकर डर जाता है उसी प्रकार म्लानमुखी संध्याको सहसा कमरेमें प्रविष्ट देखकर रजत घबरा उठा और पूछा—तुम यहां क्यों आई ?

संध्या—(धीमे स्वरमें) आपकी ही कृपासे। यहां न आनेसे तो आपका दर्शन मिलना ही दुर्लभ है।

रजत—(क्रुद्ध होकर) इस तरहकी व्यर्थकी बातोंसे माथापिच्ची करनेका समय अब नहीं रहा। इस समय पत्रकी चिन्ता पड़ी है।

संध्या—(पीड़ित होकर) पर आप इस समय क्या कर रहे हैं ? क्या इस समय भी आप दो मिनिटके लिये घरमें नहीं रह सकते ?

रजत—इसीसे तो लोग स्त्रियोंको निर्बुद्धि कहते हैं। विना चिन्ता किये कोई काम हो सकता है ? कामकी फिकर ही तो उसका मूलमन्त्र है।

इतनेमें संध्याकी दृष्टि एक पत्रपर पड़ी जो टेबुलपर पड़ा था। उस पत्रपर शिशिरका नाम था। इससे संध्या उसको पढ़नेके लिये और भी व्यस्त हो उठी।

उसमें लिखा था :—

"शिशिर बाबूके लेखकी एक मात्र निन्दा "संग्रह"में छापनेमें असमर्थ होनेके कारण मैंने आपके ईर्ष्यापूर्ण लेखके स्थानपर स्वयं समालोचना लिखकर प्रकाशित की। इसके लिये आप कार्यालयमें आकर असभ्योंकी भांति मुझसे झगड़ा करनेपर उतारू थे।"—

इन शब्दोंने उसको और भी कौतूहली बना दिया। सम्पूर्ण पत्र पढ़नेकी प्रबल कामना उसके हृदयमें जागृत हो उठी। उसने पत्र लेनेके लिये हाथ बढ़ाया। संध्याको अन्यमनस्क देखकर रजत भी उसकी दृष्टिका अनुसरण कर रहा था। ज्योंही उसने हाथ बढ़ाया रजतने पत्र अपने हाथमें ले लिया और बोला—यह सब देखनेवाली तुम कौन?

संध्या—(अत्यन्त दुःखी होकर) आजके पहले मुझे स्वप्नमें भी अनुमान न था कि मुझसे भी छिपानेकी कोई बात है।

रजत चुप रह गया। संध्या अपने दोनों हाथ टेबुलपर रखकर नीचा सिर किये चुप खड़ी रही। असह्य वेदनाके कारण उसकी अन्तरात्मा बाहर निकल रही थी।

थोड़ी देरके बाद रजतने कहा—भीतर जाओ, शायद कोई आ जाय।

संध्याने एक बार रजतकी ओर देखा। लम्बी सांस लेकर वह कमरेसे बाहर होगई। रजतका यह निष्ठुर व्यवहार उसे असह्य था। जिस दिनसे उसका विवाह हुआ था इस तरहका व्यवहार कभी नहीं देखा था। गृहस्थीके कामकाजके लिये भी रजत उसे आपने पाससे कठिनाईसे जाने देता था। पर आज उसको अलग करनेमें ही उसे परम सुख था। वह अपने मनमें सोचने लगी—इसका क्या कारण है। अब उसे पुरानी सब बातें एक एक करके स्मरण आने लगीं। उनपर विचार कर वह सबका अभिप्राय समझ गई कि "संग्रह"में शिशिरके लेखकी

प्रशंसा पढ़कर रजतका मुख क्यों सूख गया, वे तुरत आकर बाहर क्यों गये, भूधर बाबूने आना जाना क्यों छोड़ा, संगत क्यों टूट गई, नये पत्रकी योजना क्यों हो रही है, इत्यादि बातोंका एकमात्र कारण निर्दोष शिशिरके प्रति रजतको हिंसा वृत्ति ही उसकी समझ-म आई। अब उसकी समझमें यह बात भी आगयी कि रजतने यह सर्वथा झूठ कहा था कि "काण्डारी"में प्रकाशित शिशिरके लेखको रजतने ही लिख दिया था। संध्याने उस प्रसङ्गको लेकर शिशि-रको लजाया भी था पर शुद्धहृदय शिशिरने उस अपमानको भी पूर्ण प्रसन्नताके साथ बरदाश्त किया था। यह सब सोच सोचकर संध्याके हृदयमें अपने और पतिदेवके ऊपर जितनी ग्लानि उत्पन्न होती थी शिशिरके प्रति उतनी ही श्रद्धा और भक्ति उसके हृदयमें बढ़ती गई। उसने तुलना करके देखा तो शिशिरको रजतसे कई गुना बढ़कर पाया। इससे उसके हृदयमें एक प्रकारका संकोच और लज्जा होउठी।

× × ×

इधर सन्ध्या और सुनयनीसे विदा होकर शिशिर घर जा रहा था कि मार्गमें भूधर बाबू मिले। शिष्टाचारके बाद भूधर बाबूने कहा—आपने तो अपने बन्धुको बेतरह नीचा दिखाया।

शिशिर—कैसे ?

भूधर—"काण्डारी"में आपका लेख निकला। उसकी प्रशंसा सुनकर वे जल मरे। निदान उन्होंने उसकी निन्दा करके "संग्रह" में प्रकाशनार्थ भेजी। मैंने उसे न छापकर अपनी निजी राय

छापी। इससे वे और भी जल भुन गये और मुझसे लड़ पड़े। अब सुना है कि आपको गाली देनेके लिये नई योजना कर रहे हैं अर्थात् अपना निजका पत्र निकाल रहे हैं।

भूधर बाबूकी बातोंसे शिशिरको मार्मिक वेदना हुई। पर आन्तरिक भावको छिपाकर वह बोला—"भिन्नरुचिर्हि लोकः। इतना कहकर वह घर चलने लगा, बोला—आज मुझे आवश्यक काम है, क्षमा कीजियेगा।

भूधर बाबूसे पीछा छुड़ाकर भी शिशिरको शान्ति न मिली। रजतके व्यवहारपर उसे एक प्रकारकी लज्जा आरही थी। रजतकी निन्दा सुनकर उसे बड़ी व्यथा होती थी। वह अपने मनसे पूछने लगा—इस सबका क्या कारण है? रजत ऐसा क्यों कर रहा है?

(तेईस)

चोट

••०◇०••

प्रायः १५ दिन पहलेसे ही नगरमें नोटिस, प्लेकार्ड और पोस्टर बटने लगे। शहरकी दीवालें "नारद"की सूचनासे रङ्ग गईं। जिधर जाइये, "नारद"के आविर्भावको दोहाई सुननेमें आने लगीं। गली कूचोंमें, खेल तमाशोंमें, सिनमा-गृहोंमें सभी जगह "नारद" के निकलनेकी घोषणा नित नये ढङ्गसे निकलने लगीं। देखते देखते बड़ी धूमधामके साथ एक दिन "नारद" भगवानने संसारका प्रकाश भी देख लिया।

"नारद" खूब सज धजकर निकला। बढ़िया कागज, उत्तम छपाई,चित्र विचित्र तरहकी अनेक तस्वीरें "नारद"को अन्य पत्रोंसे उत्कृष्ट बना रही थीं। लेखोंमें गल्प, उपन्यास, कुछ चुने चुटकले और लम्बी चौड़ी तथा कड़ी समालोचना थी। "नारद"की मांग चारों ओरसे होने लगी। बालक बालिका तथा अर्द्ध-शिक्षित चित्रोंपर मोहित हो उसे खरीदते, स्त्रीजन गल्पों तथा उपन्यासोंके लिये उसे खरीदतीं। गाली गलौजके भक्त उसकी कड़वी समा-लोचनाके लिये उसका आदर करते। एक बात और थी। उस समय सनातन धर्मका पोषक एकमात्र "नारद" पत्र था। इस कारण प्राचीन धर्मानुयायी भी इसको बड़े चावसे लेते थे। लिखनेका तात्पर्य यह कि घर घरमें "नारद"की प्रतिष्ठा होने लगी,

सब जगह इसकी पूछ थी। समाचारपत्रोंकी चर्चा होते समय इसका नाम सबसे पहले लिया जाता था। लोगोंका यही विश्वास था कि न ऐसा पत्र निकला है और न निकलेगा।

संध्या सबसे अधिक आनन्दित थी। पर उस आनन्दको वह प्रगट नहीं कर सकती थी। "नारद"के प्रथम अङ्कमें ही शिशिरके लेखोंकी जो चुटकी ली गई थी वह उसके हृदयको बेध रही थी। जिस समय "नारद"का अङ्क लिये हुए शिशिर संध्याके पास आया और हंसकर बोला—भाभी, आपने भाई रजतकी कीर्ति? देखी उस समय संध्याका मुंह मारे शर्मके पीला पड़ गया। उसने समझा कि रजतने शिशिरको समालोचनाकी ओटमें जो गाली दी है उसीको ये कीर्तिका व्यङ्ग दे रहे हैं और मुझे लजवा रहे हैं।

रजत बाबू साहित्यकी मार्मिकताका आडम्बर बांधकर, उसके आकार प्रकारके विस्तारका वर्णन कर, अपनेको उसका एकमात्र ज्ञाता बताकर उसके मानदण्डपर चढ़े जारहे थे पर संध्या भी निरी मूर्खा न थी। वह भी साहित्यके मर्मको कुछ न कुछ समझती थी। उसने विचारकर देखा तो उसे प्रत्यक्ष मालूम हुआ कि "नारद"की समालोचना निरी साहित्यिक समालोचना नहीं है बल्कि उसकी ओटमें शिशिरको हर तरहसे नीचा दिखाने और लोगोंकी दृष्टिमें उसको गिरानेका प्रयत्न किया गया है। शिशिरके लेखोंपर जितना ही अधिक वह दृष्टिपात करती रजतके लेखोंसे उन्हें वह उतना ही उत्कृष्ट पाती। पतिदेवकी इस कुत्सित वृत्तिसे उसके हृदयमें घृणा उत्पन्न होने लगी।

इधर "नारद"ने अपनी उत्कट समालोचनासे शिशिरका जितना अपकार करना सोचा था उसका उतना ही उपकार हुआ ! "नारद" जितनी उत्कट भाषामें उसे गालियां देता अन्य पत्र उतनी ही सौजन्यतासे उसकी प्रशंसा करते । जो पत्र शिशिरका लेख प्रकाशित करनेमें थोड़ी बहुत सुस्ती भी करते रहे वे अब धड़ा-धड़ लगातार उसके लेखोंको छापने लगे। परिणाम यह हुआ कि शिशिरकी ख्याति और "नारद"की बिक्री साथही बढ़ने लगी। एक तरफ तो अनेक पत्र पत्रिकाओंमें शिशिरके लेख साथ ही निकलते देख लोगोंने उसे असाधारण प्रतिभाका लेखक समझकर उसके लेखोंको और चावसे पढ़ना शुरू किया, दूसरी ओर "नारद"की गालियां और बौछारको देखनेके लिये उसे भी खरी-दना शुरू किया ।

"नारद"की इस द्रुतगामी सफलतापर रजत बाबूको बड़ा गर्व हुआ, वे फूले न समाये । पर शिशिरके साथ साक्षात्कार उनका सब गर्व चूर्ण कर देता । शिशिरको सामने देखकर वह चोरोंकी तरह मुंह छिपाता, उसकी आंखें ऊपर न उठतीं, सामने मुंह करके वह शिशिरसे बातें न कर सकता । उसके मनमें यही भाव उठते कि "मैं महा पापी हूं, घोर अपराधी हूं।" जिस समय "नारद"के अङ्कोंको पढ़ पढ़कर शिशिर प्रशंसा करता, रजत मानों गड़ा जाता । वह समझता कि शिशिर मेरी हंसी उड़ा रहा है, मेरे ऊपर बोली बोल रहा है ।

गिलौरी चबाते चबाते खगेन पूछ बैठता—शिशिर बाबू, समा-

लोचना कैसी लगती है ? शिशिर सदा हंसकर उत्तर देता—साधारणतः अच्छी है जैसे झालदार तरकारी। उस समय रजत जमीनमें गड़ जाता।

सगेन—"काण्डारी"की समालोचना बनमालीने की थी, "मुद्रिका"की मैंने और "संग्रह"की रजत बाबूने।

शिशिरने रजतकी ओर देखा और हंसकर कहा—"संग्रह"की समालोचना पढ़कर ही मैंने समझ लिया था कि यह रजतका ही हाथ है। बिना चतुर रसोइयाके इतना तीखा झाल कौन दे सकता है। मालूम होता है बनमाली भी मुझे गाली देकर ही लिखनेका अभ्यास कर रहा है।

बनमालीने मारे शर्मके सिर नीचा कर लिया। उसकी मुखश्री काली पड़ गई। शिशिर वहांसे उठकर चला गया।

अपनी सफलतापर गर्वित रजत घरमें गया तो संध्याने सामने आकर भयभीत होकर कहा—देवरजीको इस तरह गाली देना और उन्हें नीचा दिखानेकी चेष्टा करना आपको शोभा नहीं देता।

रजतने घूरकर संध्याकी तरफ देखा और विना कुछ कहे ही वहांसे चला गया।

फिरते ही सुनयनी सामने पड़ गयीं। उन्होंने कहा—रजत! यह क्या कर रहा है? तूने शिशिरको इस तरह गालियां क्यों दी है?

रजत विना कुछ उत्तर दिये वहांसे भी चल दिया।

इस तरह "नारद"का प्रत्येक अङ्क शिशिरके लिये गालियोंसे भरा रहता था। रजतकी यह प्रवृत्ति दिनों दिन बढ़ती ही गई। यदि कभी रजतने अनिच्छा भी प्रगट की तो खगेन और बनमाली उसे दूना उत्साहित करते। वे कहते—इसीमें तो "नारद"की प्रतिष्ठा और पूछ है। अभी तो हम लोग अपना अभीष्ट साधन भी नहीं कर सके। शिशिरकी प्रतिष्ठा ज्योंकी त्यों गगनचुम्बी हो रही है। पर प्रतिमास "नारद"में जितनी गालियां दी जातीं शिशिरका हंसता चेहरा भी रजतके लिये उतना ही असह्य होता जाता। शिशिरके सामने जाते उसे लज्जा लगती। सुनयनी अब उसे कुछ न कहतीं पर उनकी मुखाकृति देखकर ही उसके प्राण सूख जाते। संध्या भी अब कुछ न कहती पर पहलेकी भांति वह रजतके लेखोंको जबर्दस्ती छीनकर पढ़नेकी चेष्टा न करती। उन्हें देखकर ही उसे भय लगता। न जाने कौनसा अप्रीतिकर समाचार उनके भीतर छिपा पड़ा है जिसे पढ़ना उसकी अन्तरात्मा स्वीकार न करती। उन लेखोंकी तरफ ताकने तकका उसे साहस न होता और न अब वह रजतके साथ उत्साहके साथ साहित्यिक चर्चा व समालोचना करती। वह सदा उदास रहती। उसका हृदय सदा यही कहता—रजत इसमें अपराधी है। अन्य पत्रोंमें प्रकाशित शिशिरके लेखोंको वह चुपके चुपके पढ़ती।

रजतने देखा कि "नारद" प्रकाशित कर हम अन्य लोगोंकी दृष्टिमें यदि कुछ बढ़ गये हैं तो अपने घरके लिये एकदम बेगाने होगये

हैं। उसके इस व्यवहारसे उसके घरवाले भी उससे उदासीन हो गये थे और यह उदासीनता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही थी। यदि इस तरहकी उदासीनता उसकी तरफ शिशिर भी दिखाता और उससे सम्पर्क छोड़ देता तो सम्भव था कि उसका झुकाव आत्मीयोंकी तरफ अत्यधिक होता। पर शिशिरका हंसता मुंह देखकर वह किसी प्रकार शान्त न रह सकता था। उसके हृदयमें तरह तरहके भाव उत्पन्न होते। कभी वह सोचता, शिशिर हमारी असफलताकी हंसी उड़ा रहा है। यह सोचते ही उसकी प्रतिहिंसाकी वृत्ति और भी प्रबल हो उठती और वह दृढ़ संकल्प करने लगता कि जिस तरह हो इसका मूलोच्छेदन करके ही छोड़ना चाहिये। कभी वह सोचता, शिशिर मेरे सारे अपराधों-को क्षमा कर संपूर्ण अपमानको हंसीमें उड़ा देता है। उस समय शिशिरके उच्च आदर्श चरित्रकी छाया उसके सामने आजाती, जिससे उसका सारा गर्व नष्ट हो जाता और उसकी आत्मा आन्तरिक वेदना अनुभूत करने लगती।

रजत किसीकी भी श्रीवृद्धि नहीं देख सकता था। अपनेसे श्रेष्ठ किसीको देखना उसके लिये सह्य न था। आज वही रजत अपनी माता और स्त्रीके लिये भी पराया होगया है; इसका कारण वह शिशिरको समझता था। शिशिरके प्रति उनलोगोंका स्नेह और अनुराग दिन प्रति दिन बढ़ता जा रहा था, इससे भी रजतके चित्तमें एक प्रकारकी ईर्षा और द्वेष उठ रहा था। इन सब कारणोंसे शिशिर उसकी आंखोंकी किरकिरी हो रहा था।

वह उसको विषवत् प्रतीत होता था, सुनयनीको देखकर वह डर जाता था, संध्याको देखकर उसकी आंखें नीची हो जाती थीं। संगत बन्द होगयी, गाना बजाना बन्द होगया, सारा घर उसे खाने दौड़ता था, शिशिर, विद्युत, सुनयनी, संध्या किसीके सामने जानेका उसे साहस नहीं होता था। उसे देखते ही शिशिर हंस पड़ता था, विद्युत गम्भीर होजाती थी, सुनयनीका क्रोध उभड़ आता था और संध्या अन्यमनस्क हो जाती थी। सुनयनी और संध्या उससे हर विषयकी बातें करतीं पर लिखने पढ़नेकी बात वे लोग भूलकर भी मुखपर न लातीं। न तो कभी "नारद"के विषयमें कुछ पूछतीं और न कभी उसकी समालोचना-की चर्चा करतीं। यदि कभी शिशिर उस प्रसङ्गको छेड़ भी देता तो रजतको तुरन्त इस बातका खटका होता कि कदाचित् शिशिर किसी अशुभेच्छासे प्रेरित होकर मुझे यह करनेके लिये उत्साहित कर रहा है। पर शिशिरके उस प्रसङ्गके मुंहपर लाते ही विद्युत गम्भीर होजाती, संध्या किसी बहानेसे वहांसे उठ जाती और सुनयनी कोई दूसरी बात छेड़कर शिशिरका मुंह बन्द कर देतीं। यह सब देखकर रजत मनही मन जलभुन उठता। ऐसी अवस्थामें उनके साथ उठना बैठना भी उसके लिये असह्य था। इसलिये वह सदा इन लोगोंकी परछाईं बचाता फिरता और अलग रहता। छापाखाना, कार्यालय, लेखक और लेख आदिमें ही वह अपना दिन काटता। जब कोई ठांव न मिलता तब वह अपनी मण्डली लेकर थेटरमें पहुंच जाता। कभी कभी वारांगनाओंका कोठा

भी पवित्र कर देता। कालेज छोड़कर रजत इस समय इन्हीं सब कामोंमें दत्तचित्त था।

शिशिर ऊपरसे तो सदा प्रसन्न दिखाई देता था पर रजतके इस अधःपतनसे वह सदा चिन्तित रहा करता था। इस सबका दोषारोपण वह सदा अपने ऊपर करता। उसके कारण जो ईर्ष्या द्वेष रजतके हृदयमें उत्पन्न हुआ है वही उसका सर्वनाश कर रहा है। पर ढूंढनेपर भी उसके निवारणका उपाय उसे नहीं सूझता था। वह भलीभांति समझता था कि मेरा सामना बचानेके लिये ही रजत इधर उधर मारा मारा फिरता है। मेरेही कारण सुनयनी और संध्या भी रजतसे असन्तुष्ट हैं और इसीलिये रजत उनका सामना करनेका भी साहस नहीं करता। उसने (शिशिरने) यह भी प्रत्यक्ष देख लिया था कि यहां आना जाना एकदम रोक देनेसे सुनयनी और संध्या दोनोंको अधिकाधिक कष्ट होता है। दूसरे, वह इन लोगोंके चित्तमें इस बातकी धारणा नहीं उत्पन्न कराना चाहता था कि रजतके व्यवहारसे वह (शिशिर) क्षुण्ण होगया है। इससे अपना आना जाना एकदम बन्द कर देनेके लिये वह सहसा असमर्थ था। पर परीक्षा निकट है, इस बहानेसे उसने प्रतिदिनका आना जाना बन्द किया। "नारद" प्रकाशित होतेही शिशिर प्रसन्नमुख आ उपस्थित होता। जो शिशिर इस कलहका कारण था, जिसके लिये "नारद"के कालमके कालम तीखे वाग्‌-बाण-प्रहारोंसे भरे रहते थे, उसीको "नारद" के प्रत्येक शब्द महर्षि नारदकी तन्त्रीसे निकले मधुर निनादकी

भांति लगता था। संध्या हंस हंसकर शिशिरसे बातें करती, पर उस हंसीमें म्लानताकी कालिमामयी रेखा भी प्रत्यक्ष थी, वह पूर्वकासा उच्छ्वास नहीं था। इन कतिपय दिनोंमें ही पूर्ण गांभीर्यने अपना पूरा प्रभाव संध्याके ऊपर डाल दिया था। आनन्दमयी सुनयनी पुत्रवियोगमें इस प्रकार गली जारही थीं कि हंसना भी उनके लिये कष्टकर था। इस निरानन्द गृहमें हंसी न आनेपर भी शिशिर जबर्दस्ती हंसनेकी चेष्टा करता, तरह तरहकी बातें करता, गाना बजाना करता, घंटे दो घण्टे तक लोगोंका चित्त बहलाकर बासाको जाता। पर घरके बाहर होतेही उसका हृदय अन्धकारसे घिर जाता।

अबतक "नारद"में शिशिरकी पुस्तकोंकी ही समालोचना होती रही। पर धीरे धीरे यह साहित्यिक समालोचना व्यक्तिगतसमालोचनामें परिणत होने लगी। शिशिरको गालियां दी जाने लगीं। हर तरहसे उसे नीचा प्रमाणित किया जाने लगा। रजतकी तुलनामें उसकी किसी प्रकारकी गणना नहीं है, यही इस समालोनाका अभिप्राय होता था।

इस समालोचनाको पढ़कर शिशिर रजतके पास गया और बोला—रजत ! "नारद"में यह नयी लीला कैसी ! क्या साहित्यकी समालोचनाके साथ लेखककी भी समालोचना होगी ? क्या उसके गुणदोष-निरूपणका भी प्रयास होगा ? यह तो अच्छा नहीं हो रहा है।

रजत—जबतक किसी प्रकारकी मानहानिकी चेष्टा नहीं की

जाती तबतक तो कोई हानि देखनेमें नहीं आती। यदि किसीको मानहानिका ख्याल हो तो अदालत खुली है। वह पत्रपर अभियोग चला सकता है।

शिशिर—(हंसकर) मुझे लाचार होकर यही करना पड़ेगा। पर मेरे जज होगे तुम और मा तथा भाभी होंगी जुरी।

रजत—(खीझकर) तुमसे दूसरा होगा क्या? जाकर स्त्रियोंमें आंसू गारोगे। पुरुषकी तरह पराक्रम तो दिखा नहीं सकते। यही करते करते तो मा और संध्याको मेरी ओरसे विरक्त कर दिया।

शिशिर—(हंसकर) यह आक्षेप उचित नहीं है। विजयी होना तो मेरे भाग्यमें लिखाही नहीं है। मैं तो सदासे हारता आया हूं। ईश्वर सदा मेरे प्रतिकूल रहा है। ऐसा दीन मनुष्य भला नालिश किसके पास करने जाय।

शिशिरकी बातें सुनकर रजत चुप हो गया। शिशिर और अधिक वहां नहीं ठहरा। वहांसे उठकर चला आया। रजतके इस आक्षेपसे उसे जितना दुःख हुआ उतना हो सुख हुआ। उसने सोचा—मा सुनयनी और संध्याका अनुराग सत्यपर कितना अधिक है। उनका विचार कितना पक्षपातहीन है। मेरे ऊपर उनकी कितनी अधिक ममता है कि प्रियपुत्र तथा पतिके इस साधारण अपराधको भी क्षमा नहीं कर सकतीं। पर उसने यह स्थिर किया कि इनके पास आने जानेमें और भी कमी करनी चाहिये।

"नारद"के प्रति अंकमें व्यक्तिगत समालोचनाके अधिकाधिक छींटे उड़ने लगे। शिशिरको अधिकाधिक गालियां दी जाने लगीं।

संध्या "नारद"की एक प्रति लेकर उदास मुख रजतके सामने जा उपस्थित हुई। रजत लिख रहा था। उसने एक बार ऊपर सिर उठाया और बोला—क्या तिरस्कार करने आई हो ?

संध्या—(क्षीण स्वरसे) क्या मैं आपके पास इसीलिये आती हूं ?

रजत—(साभिमान) आजकल तो यही देख रहा हूं। और किसी तरहका संबंध तो हमलोगोंके बीच दिखाई नहीं देता।

संध्या—(क्षीण स्वरसे) आपके भाव भी तो अब पूर्ववत् नहीं रहे।

इसपर रजत कुछ कहने जा रहा था पर संध्याने उसे बीचमें ही रोककर कहा—न तो मैं बहस करने आयी हूं और न तिरस्कार, मैं केवल प्रार्थीके रूपमें यहां उपस्थित हुई हूं। मेरी प्रार्थना है कि "नारद" बन्द कर दीजिये। यह सब ईर्ष्या और द्वेषके भाव हृदयसे दूर कर दीजिये। इससे वह पूर्वका मंगलमय जीवन पुनः स्थापित हो जायगा। शिशिर बाबूने आपका कोई अपकार नहीं किया है कि आप इस तरह हाथ धोकर उनके पीछे पड़ गये हैं।

रजतको क्रोध चढ़ आया। उसने लिखना बन्द कर दिया। कलम टेबुलपर रखकर चिल्लाकर बोल उठा—ठीक है! मेरा

कुछ अपकार नहीं किया है। जननी और पत्नीको मुझसे विरक्त कर दिया, मेरा यश छीन लिया। अब और क्या चाहिये। "जो मेरा रुपया चुराता है वह मुझे किसी तरहकी क्षति नहीं पहुंचाता, पर जो मेरे यशका ग्राहक है वह मुझे लूटकर निर्धन और दरिद्र बना देता है।"

रजतकी चिल्लाहट सुनकर सुनयनी घरसे बाहर बैठकमें चली आई, बोलीं—वह संकट तो तू आप ही खरीद रहा है

माताको आते देखकर रजत दूसरे द्वारसे निकलकर बैठकसे बाहर हो गया। पतिके दूषित विचारोंसे लज्जिता संध्या भी मारे शर्मके सासके समक्ष खड़ी न रह सकी। सिर नीचा किये वहांसे चली गई। अपने कमरेमें जाकर उसने शिशिरको पत्र लिखा—

देवरजी !

जो लोग आपकी धवल कीर्तिमें काला धब्बा लगानेकी चेष्टा कर रहे हैं वे आपका कुछ नहीं बिगाड़ सकते, वरन् स्वयं उपहासके पात्र होंगे। आपकी कीर्ति सूर्यकी भांति तेजपूर्ण और प्रकाशमय है। भला धूलसे उस तेजको ढांकनेकी चेष्टा करना कितनी भारी बिडम्बना है! आप हंस हंसकर उनके सकल अपराधोंको क्षमा कर देते हैं, यही उनके लिये कम लज्जाकी बात नहीं है।

व्यथितहृदया—

आपकी—

"भाभी"

सुनयनीने भी शिशिरको पत्र लिखा।

बेटा,

जिस पुत्रको मैंने नव मास गर्भमें रखा उसके अपकर्मसे मैं नितान्त खिन्न हूं। पर अपने प्रेम-जात पुत्रके महत्वशाली हृदयकी उदारतासे ही अबतक अपना मस्तक ऊंचा रख सकी हूं।

—तुम्हारी स्नेहमयी माता

रजतकी अकर्मण्यताके कारण शिशिरके हृदयमें जो क्षोभ उत्पन्न हुआ था उसको इन दोनों पक्षपातरहित और स्नेह-स्निग्ध पत्रोंने धोकर बहा दिया। शिशिर तुरत सुनयनीके पास जा पहुंचा और हंस हंसकर बातें करने लगा तथा उनके सन्तप्त हृदयको शान्ति प्रदान करनेकी चेष्टा करने लगा। उसके व्यवहारसे यह झलकता तक न था कि कोई घटना हुई है। पत्रका तो उसने जिक्र तक न किया।

शिशिरके इस व्यवहारसे सुनयनीका हृदय गद्गद् हो गया। उसने अपने मनमें कहा—क्या इसका जन्म इसीलिये हुआ है कि आप विषका पान करके वह दूसरोंके हेतु अमृतकी वर्षा करे।

इतना अपमान होनेपर भी शिशिर पूर्ववत् रजतके घर आता और हंसी खुशीमें समय बिताकर चला जाता। यह देखकर रजतने कहा—ऐसा बेहया तो आजतक देखा नहीं।

बनमाली—ठीक ही है। 'तुख्म तासीर सोहबते असर', वंशका प्रभाव भी तो कुछ पड़ना चाहिये।

बनमालीका यह कटाक्ष रजतको भी अनुचित प्रतीत हुआ। वह इसके बाद और कुछ न कहकर चुप हो रहा।

इसी समय कालिदास आ उपस्थित हुआ। उसे देखकर रजतने कहा—अब तो भाई आपके दर्शन ही दुर्लभ होगये।

कालिदास—(उदासीन भावसे) भले मनुष्यके लिये तो अब तुम्हारा घर रहा नहीं। अब तुम्हारा घर तो चापलूसों और खुशामदियोंका अड्डा बन गया है। तुम समझते होगे कि मैं बड़ी बहादुरी कमा रहा हूं। पर बाहर तुम्हारी किस प्रकार निन्दा हो रही है इसको देखनेके लिये न तुम्हें दृष्टि रह गई है और न सुननेके लिये कान।

रजत—(हंसकर) शिशिर बाबूका पक्ष ग्रहण कर गाली देनेके निमित्त आये हो, तो भी अच्छी बात है। अबतक मैं यही समझता था कि मेरा वाक्‌वाण-प्रहार सर्वथा विफल जा रहा है पर आज मालूम हुआ कि लक्ष्यपर कुछ न कुछ चोट अवश्य कर रहा है। इतना ही क्या कम है?

कालिदास—(क्रुद्ध होकर) असफल किस तरह होगे। अपने पतनका गड्ढा पूर्णःरूपसे तैयार कर रहे हो। तुम्हारी इस निरीह अवस्थापर दुःख होता है।

रजत—(हंसकर) मैं आपका अतिशय कृतज्ञ हूं। आपने मेरी निरीह दशापर जो सान्त्वना प्रगट की है उसके लिये मैं जन्मभर आभारी रहूंगा।

रजतके इस व्यवहारपर कालिदासको बड़ा विस्मय हुआ। वह चुपचाप उठा और घरसे बाहर होगया।

कालिदासकी तीव्र आवाज सुनकर शिशिर भी बाहर निकल

आया, देखा कि कालिदास डग मारता चला जा रहा है। उसने पीछेसे चिल्लाना आरम्भ किया—कालिदास, जरा सुनते जाओ। क्या हुआ ? क्यों खफा हो रहे हो ?

पर कालिदास चुपचाप चला ही जा रहा था। शिशिरने दौड़कर उसे पकड़ लिया। हंसकर पूछा—क्रोध किस कारण ?

कालिदास—(हृदयकी बातें छिपाकर) कुछ नहीं। कुछ हम लोगोंकी आपसकी बातें थीं।

इसी समय खगेन वहां आ उपस्थित हुआ और खिसियाकर कहने लगा—कालिदास बाबू, आपने हमलोगोंको मनमानी गालियां दीं। शिशिर बाबू भी हमलोगोंके मित्र हैं, रजत बाबू भी। रजत बाबू लिखनेके लिये दबाते हैं तो लाचार होकर लिखना ही पड़ता है। एक तो लेखक बननेका सुअवसर और दूसरे दक्षिणा रूपमें मोटी रकम मिलती है। बिना पैसा कौड़ी खर्च किये उत्तम पदार्थ भोजनके लिये और खासी विलायती मदिरा पीनेके लिये मिलती है। शिशिर बाबू यदि इसकी व्यवस्था कर दें तो देखिये कलसे हमारी लेखनी उनकी प्रशंसा ही उगलने लगती है।

खगेनकी बात सुनकर कालिदासके हृदयमें घृणा उत्पन्न हो उठी। वह वहां और न ठहर सका। एक बार घृणाभरी दृष्टि उसके ऊपर डाली और वहांसे चला गया। कालिदासके चले जानेपर शिशिरने खगेनके कन्धेपर हाथ रखकर हंसते हंसते कहा— खगेन बाबू, यह सब बड़े लोगोंको ही शोभा देता

है। मैं तो गरीब आदमी ठहरा, भला मेरे पास इतना साधन कहां ?

खगेन विचारा सीधा आदमी था। पहेलियोंको समझनेकी उसमें क्षमता नहीं थी। उसने कहा—आप हमलोगोंपर दोषारोपण करते थे, इसीसे कहता हूं।

शिशिरने चलते चलते हंसकर कहा—मैं किसीको भी दोषी नहीं समझता।

(चौबीस)

स्वर्गमें नरक

आज बृहस्पतिवार था। विद्युतके घर आनेका दिन नहीं था। पर किसी एक उत्सव विशेषके कारण कालेज बन्द हो गया। विद्युत किरायेकी गाड़ीपर घर आयी। गाड़ीमेंसे ही उसने किसी अपरिचित दरवानको द्वारपर बैठे देखा। विद्युतको गाड़ीसे उतरते देखकर ही वह उठकर खड़ा होगया था। गाड़ीसे उतरकर ज्योंहीं वह घरमें प्रवेश करने लगी त्योंहीं उस दरवानने रोककर कहा—घरमें कोई नहीं है।

विद्युत वहीं रुक गई, बोली—माजी कहां गई हैं?

दरवान—बाईजी सोनागाछीवाले मकानमें गई हैं।

"बाईजी" शब्दने विद्युतपर वज्रपात किया। वह दरवानका मुंह देखने लगी। दरवान बोलता गया—बाईजी इस मकानमें तो रहती नहीं। उनकी एक पुत्री है, उससे छिपाकर वे उस (सोनागाछीवाले) मकानमें रहती हैं। प्रति शनिवारको उनकी पुत्री इस मकानमें आती है, इसलिये बाईजी शनिवारके सवेरे ही आजाती हैं और सोमवारको पुत्रीके चले जानेपर उसी मकानमें फिर चली जाती हैं। आज तो बाईजीका मोजरा है, किसी भारी अमीरने बीड़ा दिया है।

उसकी बातें सुनकर विद्युतकी जो अवस्था हुई वह वर्णनातीत है। काटो तो बदनमें खून नहीं। उसका हृदय सन्न हो गया।

उसने साहस कर दरवानसे पूछा—ओरी कहां है ? यही घरके नौकरका नाम था।

दरवान— हमें पहरेपर रखकर वह भी वहीं गया है। आप भी तो वहीं जायंगी। आपको भी तो बीड़ा होगा ?

विद्युतने हृदयका भाव छिपाकर कहा—क्या तुम उस मकानका पता जानते हो ?

दरवान—हां, ओरी बतलाता गया है। तीन नम्बर थानेदारकी गली।

विद्युतको आंखोंसे अग्निवर्षा हो रही थी। उसे अपने जन्मका स्मरण हो आया। मारे लज्जाके उसका शरीर पानी पानी हो गया। मेरी मा बाजारकी सधारण नर्तकी है, मैं वेश्याकी पुत्री हूं, यह विश्वास सहसा उसके हृदयमें स्थान नहीं करता था। मैं बीस वर्षकी हुई और मेरी मा इतने दिनोंतक मुझसे छिपाकर वेश्याकर्म करती रही। क्या इसीलिये उसने बाल्यावस्थासे मुझे घरसे दूर कर रखा है ? जब मैं छुट्टियोंमें घर आती हूं तो अपना पापमय कर्म मुझसे छिपानेके लिये आप भी आकर मेरे साथ रहने लगती है और मेरे चले जानेके बाद चली जाती है।

इस ख्यालके आतेही विद्युतके हृदयमें घृणा और श्रद्धा दोनोंका अविभार्याव एक साथ हुआ। मेरी मा इतनी पतित होनेपर भी मेरे जीवनको उसी कलुषित पथपर ले जाकर नष्ट करना नहीं चाहती, इस भावके उदय होतेही विद्युतका हृदय माके प्रति कृतज्ञतासे भर आता। पर तत्काल जब उसे यह ख्याल आता कि

मेरी मा वेश्या है तो उसका हृदय घृणा और क्षोभसे भर जाता।

आज उसकी सारी आशालताओंपर पाला पड़ गया। इतने दिनोंकी बांधी बांध आज चोर बलूइया साबित हुई और धारा-प्रवाहको न रोक सकी। जिन्दगीभरकी सारी उमीदोंपर पानी फिर गया। उसने सोचा था—एक दिन मुझे शिशिरकी सहधर्मिणी होनेका सौभाग्य प्राप्त होगा, पर आज उसपर ऐसा वज्रपात हुआ! काली घटाने उसे घेर लिया। अब यह कलंकित जीवन किस काममें लगेगा? अब समाजके सामने मैं कौन मुंह लेकर जाऊंगी? संसारको क्या मुंह दिखाऊंगी?

इसी तरह सोचती विचारती विद्युत गाड़ीपर बैठी सोना-गाछी पहुंची। महल्लेमें प्रवेश करतेही वहांकी कलुषित हवा उसके मस्तिष्कको भारी करने लगी। फिर भी वह लौटना नहीं चाहती थी। अपनी माकी वास्तविक दशाका ज्ञान एक बार प्राप्त किये बिना कहीं जाना या कोई काम करना उसके लिये कठिन था और वह जाती भी कहां! संसारमें उसे दूसरा आश्रय न था, उसका और कोई अपना न था।

विद्युतको देखकर लोग अनेक तरहकी बोली बोलने लगे।

एकने कहा—औरत क्या है साक्षात् परी है। न जाने किस कोठेपर रहती है।

एकने गाड़ीके पायदानपर खड़े होकर विद्युतसे पूछा—आप किस कोठेपर रहती हैं, बाईजी?

शर्म और भयके मारे विद्युतका मुंह लाल हो गया। फिर भी उसने स्थिरतासे उत्तर दिया— मैं यहांकी रहनेवाली नहीं हूं।

पहलेने—यह तो मैं भी समझता हूं। इस महल्लेमें तो कोई घर नहीं बचा है, कोई नहीं है जिसे मैं न पहचानता हूं। एकमात्र क्षणप्रभाबाई इस महल्लेमें सुन्दर हैं। पर क्या तुमसे उनका मुकाबला हो सकता है?

इस बातसे विद्युतका हृदय खण्डशः विदीर्ण होगया। वह सहसा अपनी जगहसे उठी और उस आदमीको पावदानसे नीचे ढकेलकर बोली— कोचवान, तेजीसे हांको।

वह बिचारा सड़कमें औंधा गिर पड़ा। सारा शरीर गर्दसे ढंक गया। चारों ओरसे भीड़ने उसे घेर लिया। लोग कहने लगे कि मालूम होता है नशेमें लड़खड़ाकर गिर गया है।

थानेदारकी गलीमें ३ नम्बर मकानके सामने जाकर गाड़ी रुकी। कोचवानने गाड़ीका दरवाजा खोल दिया। विद्युत गाड़ीसे उतर पड़ी। गीतकी मधुर ध्वनि और अलापकी लचक बाहरसे ही सुनाई पड़ती थी। जिस स्वरको वह बालापनसे ही सुनती चली आरही थी उसे समझनेमें उसे देर न लगी। उसके पांव भारी होगये। उसके लिये आगे बढ़ना कठिन होगया। जो गाना उसकी मा उस समय गा रही थी उसे सुनकर लज्जा और घृणासे उसका सिर नीचा हो गया। पुरुषोंका मनोरंजन करनेके लिये, रुपयेके लिये, उसकी मा पुरुषके सामने इतना गन्दा गाना

गा रही है, इस बातका स्मरण कर विद्युत मृत्युसे भी कठिन यन्त्रणा अनुभव करने लगी।

मार्गमें एक अतिरूपवती युवतीको किंकर्तव्य विमूढ़ खड़ी देखकर उस बाजारके भ्रमण करनेवाले युवकोंका ध्यान उसकी तरफ खिंचने लगा। विद्युत मारे भयके घरके भीतर घुस गई। मकानके भीतर जिस तरफ उसने दृष्टि दौड़ाई बारनारियों-को ही देखा। कोई ज़ुरा संवार रही थी, कोई शृंगार कर रही थी और कोई कपड़े पहन रही थी। विद्युत अस्तव्यस्त होकर ऊपर जानेके लिये सीढी ढूंढने लगी। हयाके मारे वह किसीसे कुछ पूछ न सकी, घृणासे उसका मुंह बन्द हो गया था। इतनेमें एक पुरुष एक कमरेसे बाहर निकला। उसके हाथमें हुक्का था, वह नशेमें चूर था और उसके मुंहसे शराबकी बदबू आ रही थी। सामना होते ही उसने विद्युतसे पूछा—"प्यारी, तुम किसे खोज रही हो। आओ, इधर आओ, मेरे गलेसे लग जाओ।"

इतना कहकर उसने विद्युतको पकड़नेके लिये हाथ बढ़ाया। विद्युत घबरा गई। अपनेको सम्भालकर उसने धीरेसे पूछा—ऊपर जानेकी सीढ़ी कहां है?

उसने कहा—चलिये, मैं आपको ऊपर लिये चलता हूं, रानी! तुम्हारा हुक्म कौन टाल सकता है?

विद्युत डरती, कांपती उस मनुष्यके साथ चली। सीढ़ीके पास पहुंचते ही वह डाककर ऊपर चढ़ गई।

ऊपर बरामदेमें खड़ी होकर विद्युतने देखा—एक आलिशान

सजे सजाये कमरेमें उसकी मा गहने कपड़ेसे सजधजकर परम रूपवती उर्वशीको मात करती, अपनी कोकिला कण्ठकी मधुर ध्वनिसे रंभा और मेनकाको मात करती तथा श्रोतागणोंका मन मोहती क्षणप्रभा (बिजली)की तरह चमक रही है। सामने मोटे मोटे मसनदके सहारे रजत तथा उसके उपासक मण्डल—खगेन, पूर्ण, हेम और बनमाली—बैठे हैं। फर्शपर पानकी गिलोरी, सिगरेटका डब्बा, शराबकी बोतल और शीशेका गिलास रखा है। रह रहकर जामपर जाम जमता है और वाह वाहका चीत्कार उनके मुंहसे निकलता है। विद्युत मृतवत् खड़ी यह सब तमाशा देख रही थी। इतनेमें रजत शराबसे लबालब भरा गिलास लेकर उठा और क्षणप्रभाके गलेमें हाथ डालकर शराबके गिलासको उसके अधरके पास लेगया। यह दृश्य विद्युतके लिये असह्य होगया। लज्जा और घृणाके मारे उसके प्राण निकलने लगे। उसके हृदयके टुकड़े टुकड़े होने लगे। वह अब अपनेको किसी तरह सम्भाल न सकी, विकृत स्वरसे चिल्ला उठी—मा!

इस शब्दको क्षणप्रभाने सुना। पहचाना स्वर था। उसने झट रजतको ढकेलकर दूर किया और जिधरसे ध्वनि आई थी उसी तरफ देखती हुई बोली—विद्युत!

विद्युत जो कुदृश्य देखनेके लिये यहांतक आई थी उससे भी भयानक और घृणास्पद दृश्य उसने देखा। उसे माके सामने भी मुंह दिखानेमें लज्जा होने लगी। जिस तरह वह ऊपर गई

थी उसी तरह जल्दी जल्दी नीचे उतर, घरसे बाहर हो वह गाड़ीमें बैठी और कोचवानसे बोली—तेजीसे हांक ले चलो।

विद्युतको जाते देखकर क्षणप्रभाने पुकारकर कहा—विद्युत, मुझे भी लेती चल।

जिस समय क्षणप्रभा नीचे उतरी विद्युतकी गाड़ी एक मोड़से दूसरी मोड़पर पहुंच चुकी थी। उसने विद्युतको कहते सुना—कोचवान, तेजीसे हांको।

क्षणप्रभा क्षीणप्रभा होकर पागलकी भांति वहीं खड़ी रह गई।

इतनेमें पासके घरसे एक बाराङ्गना निकली, उसने पूछा—क्षणप्रभा! क्या यह तुम्हारी पुत्री थी? क्या वह किसी बड़े आदमीके पास है? किस महल्लेमें रहती है? इसे यहां तो कभी नहीं लायी?

क्षणप्रभा पागलोंकी भांति आंखें फाड़कर उसकी ओर देखकर बोली—चली जा मेरे सामनेसे, नहीं तो अभी झोंटा पकड़कर नोंच लूंगी।

इतना कहकर क्षणप्रभाने अपने दोनों हाथ उसकी ओर बढ़ाये। उसकी यह चेष्टा देखकर वह स्त्री डरी और चिल्लाती घरमें भागकर भीतरसे दरवाजा बन्द कर लिया।

इसके बाद क्षणप्रभा ऊपर अपने कमरेमें गई। उसे देखकर रजत बोला—आह! यदि इसके पहले जान पाता कि विद्युत तुम्हारी पुत्री है! तुम उसे पकड़ न सकी!

क्षणप्रभाने हठात शराबकी बोतल उठाकर रजतपर आक्रमण किया।

रजत हटकर बाल बाल बच गया पर बोतल जाकर पड़ी खगेनके ऊपर और टूटती हुई उसने बनमालीको भी आहत किया। मदिरा और खूनसे वे दोनों रङ्ग गये। यह देखकर क्षणप्रभाने मदिरा भरी दो और बोतल उठा ली और तानकर बोली—भलाई है कि यहांसे अभी भाग जाओ, नहीं तो यही दशा सबकी कर डालूंगी। ओरी! ओरी!! निकाल सबोंको कमरेसे बाहर।

क्षणप्रभाकी यह उग्र मूर्ति देखकर रजत आदि मारे डरके वहांसे भागे। जल्दीमें चादर और जूता भी लेना भूल गये।

सबोंके भाग जानेपर क्षणप्रभाने बोतल जमीनपर फेंक दी और पछाड़ खाकर गिर पड़ी।

उसी समय मकानकी दासीने आकर कहा—तुम्हें क्या हुआ है? क्या बुढ़ौतीमें फौजदारी करोगी?

कोई उत्तर न पाकर उसने क्षणप्रभाके शरीरपर हाथ फेरा तो घबराकर चिल्ला उठी—दौड़ो! दौड़ो!! यह तो बेहोश हो गई है।

कोठेके सब लोग जानते थे कि क्षणप्रभाको मृगीका रोग है। इससे तुरन्त डाक्टर बुलाये गये।

कठिन उपचारके बाद प्रायः ४ बजे सवेरे उसकी मूर्च्छा टूटी। उसी समय पालकी मंगाकर क्षणप्रभा अपने श्यामबाजार-

वाले घरमें चली आयी। उसे पूर्ण आशा थी कि विद्युत घरपर अवश्य होगी। पर विद्युत घर न लौटी। क्षणप्रभाने ओरीको बोर्डिङ्ग-हाउस भेजा। वह लौटकर आया और बोला—विद्युत वहां भी नहीं है। कालेजमें बसन्तकी छुट्टी है। बसन्त मनानेके लिये वह घर आयी। तबसे फिर लौटकर न गई।

क्षणप्रभा जानती थी कि विद्युत रजतके घर भी नहीं जा सकती। फिर भी उसने वहां पता लगाया। पर वहां भी उसका पता न चला। अब क्षणप्रभाकी चिन्ता बढ़ गयी। इतने भारी नगरमें उसकी विद्युत न जाने कहां अदृश्य हो गई। वह उसे कहां खोजे, किस तरह पता लगावे, वह कुछ स्थिर न कर सकी। उस समय शिशिरकी याद आ गई। उसी अवस्थामें उसने शिशिरको पत्र लिखा—

कल्याणनिलय,

पत्र पाते ही चले आओ। मैं घोर सङ्कटमें पड़ी हूं।

शुभाकांक्षिणी—

"क्षणप्रभा"

(पचीस)

पतनकी चरम सीमा

सोनागाछीसे रवाना होकर विद्युत सीधी शिशिरके बासामें पहुंची। इतनी रातको गाड़ीपर सवार होकर उसे अकेली आई देखकर शिशिरको विस्मय हुआ कि यह इस अवस्थामें यहां कैसे आई! गाड़ीके पास पहुंचकर उसने देखा कि विद्युतकी विचित्र अवस्था है। चेहरा मलिन और उदास है, गम्भीरता छा रही है, मन मारे वह एक कोनेमें दबको बैठी है। उसकी वह उदासीन आकृति देखकर शिशिरने पूछा—कहिये, क्या मामला है? आप असबाब लेकर कहां जा रही हैं?

विद्युत शिशिरके प्रश्नोंका कुछ भी उत्तर न दे सकी। उसने रुंधे हुए कण्ठसे कहा—मेरा एक उपकार आपको करना होगा इस संसारमें इस समय आपके अतिरिक्त मेरा अन्य कोई नहीं है जिससे मैं किसी तरहके उपकारकी आशा कर सकूं।

यह कहते कहते विद्युतका गला भर आया। अश्रुओंकी अविरल धारा कपोल युगलोंको सींचने लगी। इससे अधिक वह न बोल सकी।

शिशिरने व्यथित होकर पूछा—कहिये, क्या आज्ञा है?

विद्युतके प्राण पुनः लौट आये। उसने अपने शरीरके आभू-

षणोंको उतारते उतारते कहा—इन्हें बेचकर या गिरवी रखकर कुछ रुपयेका बन्दोबस्त कर दीजिये, बड़ी आवश्यकता है।

शिशिरने विद्युतको रोककर कहा—गहने मत उतारो। उन्हें जहांका तहां रहने दो। मैं रुपयेका बन्दोबस्त कर देता हूं। तुम घर चलो। मैं रुपया लेकर आता हूं।

विद्युन रो पड़ी, बोली—मेरा घरबार कहां ?

मार्गमें इस तरह एक युवतीके साथ वार्तालाप करते देखकर लोगोंकी भीड़ जम गई थी। बासाके छात्रगण भी बरामदे तथा खिड़कियोंसे बोली आवाज छोड़ते थे। यह सब देखकर शिशिर गाड़ीमें बैठ गया और कोचवानको हांकनेके लिये बोला।

गाड़ी चली। शिशिर परेशान था। एक तो विद्युतको असबाब लेकर इस दशामें आई देखकर वह योंही घबरा गया था, दूसरे विद्युतके इस कथनने कि 'मेरा घरबार कहां ?' उसे और भी व्यस्त कर दिया। शिशिरने सोचा—शायद यह अपनी मासे लड़कर आई है। इससे वह परम स्नेहयुक्त अपने हाथोंमें विद्युतके दोनों हाथ लेकर पूछने लगा—विद्युत क्या बात है, मुझे सब सच सच बतला दो।

विद्युन अपने मुंहको अपने हाथोंमें छिपाकर बोली—नहीं, नहीं, वह बात मैं नहीं बतला सकती। मैं नितान्त अभागिनी हूं। उस बातको सुनकर आप भी मुझसे घृणा करने लगेंगे।

शिशिर ज्यों ज्यों इस समस्याको सुलझानेकी चेष्टा करता

था वह त्यों त्यों और अधिक अरुभ्कता चला जाता था। शिशिरने देखा, विद्युत रो रही है और अविरल अश्रुधारा उसकी आंखोंसे जारी है। दो मिनिट चुप रहकर शिशिरने कहा—घर नहीं तो सन्ध्या भाभीके यहां चलो।

विद्युत सन्ध्याका नाम सुनते ही और घबरा गई, बोली—नहीं, मैं कहीं न जाऊंगी। मैं किसीके सामने मुंह दिखाने लायक नहीं रही।

शिशिर—(व्याकुल होकर) मैं भी तो निराश्रय हूं, फिर तुम कहां रहोगी?

विद्युत—(डबडबाई हुई आंखोंसे) मैं कालेजमें मेम साहबके पास जाऊंगी, पर मुझे कुछ रुपया चाहिये।

शिशिर—मेरा रुपया रजतके यहां जमा है। चलो वहींसे लेकर तुम्हें दे दूंगा।

रजतका नाम सुनते ही विद्युतके हृदयमें तीव्र घृणाका उदय हुआ। शिशिरने उस भावको देखा और शीघ्रतासे बोल उठा—तुम भीतर मत जाना। गाड़ीपर ही रहना। मैं जाकर रुपया ले आऊंगा।

विद्युत चुप हो रही। गाड़ी रजतके घरकी तरफ बढ़ी। गाड़ी फाटकपर रुक गई। विद्युतको गाड़ीमें छोड़कर शिशिर रुपया लेनेके लिये भीतर गया। फाटकके भीतर पैर रखते ही उसे रजतकी मित्रमण्डलीका कलरव सुनाई दिया। शिशिर उन लोगोंकी बातें स्पष्ट सुन सकता था। उसने सुना—बीचमें

कूदकर विद्युतने सारा मजा मिट्टीमें मिला दिया। यदि पहले जानता कि विद्युत क्षणप्रभा बाईकी लड़की है।...पर भागकर जायगी कहां ?

शिशिरने बाहरसे ही पुकारकर कहा—रजत, ज़रा इधर आओ।

रजतने ठट्ठा मारकर एक बार अपने मित्रोंकी ओर देखा और फिर बाहर चला आया।

शिशिरने मन्द स्वरसे कहा—मुझे पांच सौ रुपयेकी जरूरत है।

अभिमानी शिशिर आज उसके सामने याचक होकर खड़ा है, यह देखकर रजत विजय-गर्वसे फूल उठा, बोला—अच्छा, ऊपर चलो।

ऊपर कमरेमें जाकर रजतने लोहेकी आलमारी खोली और ५००) रु० बाहर निकाला। रुपया सम्हालकर शिशिरने कहा—कागज कलम दो, हैण्डनोट लिख दूं।

रजत बीचमें ही रोककर बोल उठा—हैण्डनोटकी क्या आवश्यकता है? घरकी बात है, जब होगा तब दे देना।

इस तरहकी स्नेहभरी बात रजतके मुंहसे आज बहुत दिनके बाद शिशिरको सुननेका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। उसने हंसकर कहा—यह तो ठीक है, पर याददास्तके लिये कुछ होना आवश्यक है।

रजत हंसने लगा, कागज़ कलम आगे बढ़ाकर बोला—तुम भी विचित्र जीव हो।

शिशिरने हैण्डनोट लिख दिया और रुपया लेकर जल्दीसे बाहर हो गया।

शिशिरका शब्द सुनकर सुनयनी बाहर बैठकमें आ गईं। पर उस समयतक शिशिर चला गया था, रजत आलमारी बन्द कर रहा था। सुनयनीने पूछा—रजत शिशिर आया था क्या?

रजत—हां, आया था और पांच सौ रुपया ले गया।

सुनयनी—क्यों?

रजत—कुछ कहा नहीं।

सुनयनी चिन्तित होकर लौट गईं। उन्हें अनेक तरहकी चिन्ताओंने आ घेरा। इतनी रातको शिशिरको रुपयेकी क्या जरूरत पड़ी? इतने दिनके बाद आया भी तो बिना मिले चला क्यों गया? उसे इतनी जल्दी क्या थी?

शिशिर रुपया विद्युतके हाथमें रखकर बोला—५००) रु० है। यदि और चाहे तो बोलो।

विद्युतने कृतज्ञतापूर्ण नेत्रोंसे शिशिरकी ओर देखा। शिशिर-ने दोनों हाथोंको गाड़ीमें बढ़ाया। विद्युतने दोनों हाथोंको पकड़कर जोरसे दबाया और हृदयका वेदनाभरा प्रेम व्यक्त प्रगट किया।

इस तरह उस घोर सूचीभेद्य निविड़ अन्धकारमें शिशिर विद्युतको बिदा कर बासाको लौटा। रातभर नींद न आई। अनेक तरहकी चिन्ताभरी भावनायें उसके हृदयमें उठती रहीं।

सवेरे सोकर उठते ही उसे क्षणप्रभाकी चिट्ठी मिली। चिट्ठी

क्या थी तार था। उसे पढ़कर शिशिर एक दम व्याकुल हो उठा। पर उसे आशा हुई कि वहां जाकर उसे रातकी घटनाका असली पता अवश्य लगेगा। वह जल्दी जल्दी नहा धोकर रवाना हो गया।

घर पहुंचकर उसने देखा कि क्षणप्रभाकी विचित्र दशा है। मुखकी आकृति विवर्ण और रक्तहीन हो रही है और वह प्रायः मरणासन्न है। शिशिरने पूछा—आपकी क्या दशा है?

क्षणप्रभाने व्यथित होकर कहा—विद्युत मुझे छोड़कर न जाने कहां चली गई। मैं अब घण्टोंकी मिहमान हूं। यह पत्र अपने पास रखो। तुम पढ़कर उसे दे देना।

इतना कहकर क्षणप्रभाने शिशिरके हाथमें एक मोटा और लम्बा लिफाफा रख दिया। उसके भीतर अनेक कागज मालूम होते थे। ऊपरसे सील किया था। लिफाफेपर मोटे मोटे अक्षरोंमें शिशिर व विद्युतका नाम लिखा था और यह भी लिखा था कि शनिवारके पूर्व उसे मत खोलना।

शिशिरने क्षणप्रभाको सान्त्वना देते हुए कहा—माता पुत्रीका यह झगड़ा है। इसके कारण आपको इस कदर अधीर न होना चाहिये। कल रातको विद्युत मेरे घर गई थी। वह कालेजकी मेम साहबके घरपर है। क्या मैं जाकर उसे लिवा लाऊं?

क्षणप्रभा—(मन्द स्वरसे) वह नहीं आवेगी। उसको बुलानेकी भी जरूरत नहीं। मेरा ही दोष है, मैं उसकी अपराधिनी हूं। उसके सामने मुंह दिखाने योग्य नहीं। मैं उसे तुम्हारे हाथों

सौंपती हूं। उसकी देखरेख और रक्षाका भार तुम्हारे ऊपर है। वह बड़ी सीधीसाधी लड़की है। संसारकी कुटिल चालोंको कुछ भी नहीं जानती।

शिशिरने समझा, बीमारीकी दशामें मानसिक वेदनाके कारण क्षणप्रभा इस तरह अनर्गल प्रलाप कर रही है। उसने कहा—आप निश्चिन्त रहें। विद्युतके लिये आप किसी तरहकी चिन्ता न करें।

क्षणप्रभा चुप होगई। टकटकी बांधकर शिशिरकी ओर देखने लगी। रह रहकर दीर्घ निःस्वास लेती थी। शिशिर उठ खड़ा हुआ और बोला—मुझे जानेकी आज्ञा दीजिये।

क्षणप्रभा कुछ उत्तर न दे सकी।

(छब्बीस)

क्षणप्रभाकी आत्मकथा

उस बड़े लिफाफेमें क्षणप्रभाने क्या बन्द करके शिशिरको दिया था, इसको जाननेकी उतकण्ठा शिशिरके हृदयमें प्रतिक्षण बढ़ने लगी। दूसरे दिन सवेरा होते ही शिशिर विद्युतके पास लिफाफा लिये उपस्थित हुआ। शिशिरसे सारी बातें सुनकर विद्युत मारे भयके कांप उठी। लडखड़ाती आवाजसे बोली—आपही लिफाफा खोलिये।

शिशिर—नहीं तुम्हीं खोलो। मैं नहीं देखना चाहता। किसीके गृहस्थीकी गुप्त बातोंको जानना उचित नहीं, यही ख्याल कर शिशिरने अपने हृदयके भावको छिपाया।

निदान विद्युतने लिफाफा हाथमें लिया। उसका हाथ कांपने लगा। उसने लिफाफा खोला। भीतर एक रजिष्टरी किया वसीयतनामा था और एक लम्बा पत्र। पत्रके ऊपर लिखा था, जिस समय यह पत्र तुम्हारे हाथमें पड़ेगा मैं इस संसारसे बिदा हो गई रहूंगी। इससे मेरी घृणित आत्मकथाके लिये मुझे लज्जित न होना पड़ेगा। अतएव मैं आत्मकथा तथा उसके रहस्यका उद्घाटन स्वयं कर देती हूं।

इतना पढ़तेही विद्युत फूट फूटकर रोने लगी। कल

रात्रिकी लज्जा और कष्ट आज दिनके प्रकाशमें द्विगुणित हो गया और जननीकी मृत्युकी आशंकाने उसकी वेदनाको और भी तीव्रतर बना दिया। सौ अवगुणोंके रहते हुए भी माताकी ममता अप्रमेय है। कहा भी है "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" इस स्नेहमयी जननोके ही कारण जन्म-भूमिको इतनी अधिक प्रतिष्ठा मिल सकी है। विशेषतया, विद्युतके लिये तो एकमात्र जननीही सब कुछ रही है। जनकको तो वह जानती ही नहीं। जिस जननीने नितान्त कलंकमय और हीनताकी वृत्ति स्वीकार करके भी अपनी प्रियतमा पुत्रीको उस दग्धानलमें प्रविष्ट नहीं कराया, अपनी प्रियतमा पुत्रीको सन्मार्गपर चलानेके लिये जिसने बीस वर्षतक अपनी घृणित वृत्तिको छिपाया और अपना रूप बदला, क्या वही मा आज उससे बिदा होगई ! इस ख्यालसे उसके हृदयका वेग उमड़ आया। माके प्रति ममताका श्रोत उसके हृदयमें बहने लगा और श्रद्धा तथा कृतज्ञतासे उसका जी भर आया।

शिशिर कुछ समझ न सका। अवाक् वह विद्युतका मुंह ताकता रहा। ऐसी दशामें वह यह भी स्थिर न कर सका कि क्या कहकर सान्त्वना दी जाय।

उसी समय बगलके कमरेमें कालेजकी मेम साहिबाके पैरोंका शब्द सुनाई दिया। विद्युत तुरन्त आंखोंके आंसू पोंछकर माका पत्र पढ़ने लगी। पत्रमें लिखा था :—

यह पत्र जिस समय तुम लोगोंके हाथमें पड़ेगा मैं इस

संसारसे बिदा हो रहूंगी। इससे तुम लोगोंके सामने लज्जित होनेका मुझे दुःखमय अवसर न मिलेगा। अतएव अपनी कलंक कहानीका उद्घाटन मैं अपने हाथों कर देती हूं। मैंने सोच रखा था कि किसी दिन विष पान कर इस पापमय कलंकित जीवनका शेष कर अपनी घृणित कहानीको अपने साथही लेती जाऊंगी और तुमको यह बात सदा अविदित रहेगी कि तुम्हारी जननी कितनी नीच और पतित थी। बीस वर्ष तक जिस अनर्थको बचानेके लिये चेष्टा करती आई, एक दिनकी असावधानीसे उसका परदा फट गया। जननीकी दुश्चरित्रताका दृश्य पुत्रीकी आंखोंके सामने नाच गया। जिस दिन मेरी कोखसे विद्युतका जन्म हुआ था उसी दिनसे अपनी हेय वृत्तिकी मुझे चिन्ता होने लगी। उसी दिन इस बातकी आशंका मनमें बैठने लगी कि इस घृणित चरित्रको इस कन्यासे कैसे छिपा सकूंगी। उसी दिन मुझे पहले पहल विदित हुआ कि मैं कितनी पतित हूं, हीन हूं। उसी दिन मैंने यह दृढ़ संकल्प किया कि इस नीच,घृणित और लज्जास्पद कार्यसे अपनी प्रियतमा पुत्रीको सर्वथा दूर रखूंगी। मैंने यह भी संकल्प किया कि आजसे मैं भी किसी एककी होकर रहूंगी, जिसपर मेरा स्नेह और ममता होगी उसीकी मैं एकान्तसंगिनी होकर रहूंगी। विद्युतकी उमर ज्यों ज्यों बढ़ने लगी मेरी चिन्ता भी प्रबल होने लगी और मेरा संकल्प भी उतना ही दृढ़ होने लगा। सात वर्षकी अवस्थातक तो किसी तरह लुक छिपकर यह व्यापार चलता रहा पर मेरे चित्तको शान्ति न मिली। अब मैंने स्थिर

किया कि विद्युतको स्कूलके बोर्डिङ्गमें भेजकर अपना गला छुड़ाऊं। बंगाली-बालिका-विद्यालयके बोर्डिङ्गमें तो मेरी पुत्री रह नहीं सकती थी। मैंने चेष्टा की तो मेरे साध्वीपनका प्रमाण मांगा गया। उस समय अनेक गण्यमान्य रईस मेरे कृपा-कटाक्षके प्रार्थी थे इससे वे प्रमाण देनेको तैयार थे। पर संसारकी आंखोंमें इस तरह धूल झोंकना मैंने नितान्त अनुचित समझा। केवल जन्मके कारण उसे अपराधी समझनेमें मेरा मन गवाही नहीं देता था। हमारे समाजकी यही स्थिति है। यदि कोई पतित आदमी ऊपर उठनेकी चेष्टा करना चाहे तो समाज उसे सहारा देनेको तैयार नहीं है, उलटे वह उसकी सहायताको रोकनेकी चेष्टा करेगी और उसे आजन्म घोर नरककी यन्त्रणामें ही रखनेकी चेष्टा करेगी। स्त्रियोंके लिये यह सामाजिक असमानता क्यों? लड़कोंके स्कूलोंमें चरित्रवान और दुश्चरित्र सभी पढ़ते हैं, वहां तो इस तरहका खोद विनोद नहीं होता। फिर बिचारी स्त्रियोंने क्या पाप कर रखा है? क्या स्त्री होनेसे ही वे इस असमानताकी भागी हो जाती हैं? क्या यदि स्त्रियोंके संसर्गसे स्त्रियां खराब हो सकती हैं तो पुरुषोंके संसर्गसे पुरुष खराब नहीं हो सकते? क्या समाजमें जिस तरह कुलटा स्त्रियोंका कोई स्थान नहीं है उसी तरह परस्त्रीगामी पुरुषोंके बहिष्कारकी व्यवस्था न होनी चाहिये? अस्तु, कोई चारा न देखकर मैंने विद्युतको मेमके स्कूलमें भेज दिया। वहां इस तरहकी छानबीन नहीं होती, वे केवल दो हाथ और दो पैर देखती हैं। जात पांत, जन्म और कुल मर्यादाकी खोद विनोदमें वे अपना समय नष्ट नहीं करतीं।

इस तरह विद्युतको अपने पाससे तो दूर किया पर स्वयं उस घृणित पथसे न हट सकी। क्यों? दिलमें यही प्रलोभन उठने लगा कि इतनी सम्पत्ति एकत्रित कर दूं कि विद्युतका जीवन-काल आनन्दसे बीते। क्योंकि उसके आगे पीछे तो दूसरा कोई नहीं था। इस बातका भी भय था कि यदि किसी दिन उसकी उत्पत्तिका पता लग जायगा तो समाजमें उसकी कोई पूछ तक करनेवाला नहीं रह जायगा। उस समय केवल रुपयेके बलसे ही वह जीवनयात्रा चला सकती है। इसके न रहनेपर वह भी कुपथगामिनी हो सकती है। मुझे अपने अधः पतनका पूर्णरूपसे स्मरण था।

मैं यथेष्ट सुन्दरी थी पर भाग्यमें सुख नहीं लिखा था। मेरे पिता अति निर्धन थे। मेरे पति भी कुबेरसे लड़कर इस पृथ्वीपर आये थे। यमराज भी उनसे विशेष प्रेम रखते थे। इससे शादीके थोड़े ही दिन बाद उनकी मृत्यु हो गई। अब तो चारों ओरसे लोग मेरे रूपके निहारनेवाले हो गये। उपहार और तोहफोंका बाजार गर्म होने लगा। ग्रामके जमींदारके लड़केने हजारों रुपयेका आभूषण और उत्तम उत्तम साड़ियोंका एक जोड़ा मेरे पास भेज दिया। मैं उसीके हाथ बिक गई। गांव छोड़कर हम दोनों कलकत्ता चले आये। यहांपर मेरे लिये उस्ताद और मास्टर रखे गये और मैंने गाना, बजाना, नाचना, पढ़ना और लिखना सीखा। तीन वर्ष तो इस तरह अमन चैनसे कटे। तीन वर्षके बाद वह मुझे असहाय छोड़कर चला गया।

मैंने देखा कि प्रेम प्रणयकी वह लम्बी चौड़ी बातें केवल चाटुकारिता थीं, मेरा धर्म नष्ट करनेके लिये मायाजाल था।

लाचार मैं कोठेपर बैठने लगी और मेरा रोजगार मज़ेमें चला। इसी समय विद्युतका जन्म हुआ। मेरा हृदय शीतल हुआ। मुझे प्रतीत होने लगा कि मुझे अमूल्य रत्न मिला, जो जीवनका सहारा, आशालताका पुष्प, ऊसरमें हराभरा स्थान, भीषण अकालके बाद जलबिन्दु था। इसके पालन पोषणके लिये, इसकी रक्षाके लिये मुझे अपना व्यापार कम करना पड़ा और मुझे सावधान होना पड़ा। शनिवार, रविवार छुट्टीके दिन हैं। इन दिनों व्यापार मजेका चलता है, आमदनी खूब होती है पर विद्युत-को इस घृणित कामसे दूर रखनेके लिये, उसको इसका पता न देनेके लिये मुझे इन दोनों दिन घरपर रहना पड़ता था। एक मकानमें रहनेसे कहीं कोई ग्राहक इस (विद्युत) के सामने ही न आ पड़े इसलिये मुझे दो मकान लेने पड़े।

इसी तरह चोरी चोरी मैंने बीस वर्ष बिताये। मैंने सोचा था कि विद्युतको शिशिरके हाथ सौंपकर अपने इस अधम जीवन-का अन्त कर दूंगी। पर वह न हो सका। अन्तमें मेरी चोरी खुल गई और उसका भीषण परिणाम मेरी जीवन-यव-निका का पतन है।

विद्युत जननीका अपराध क्षमा कर सकती है। जो उदार शिक्षा उसे दी गई है, उसका ख्याल कर मुझे पूर्ण विश्वास है कि वह मुझे क्षमा कर देगी। इसीसे मैं शान्तिपूर्वक मर रही हूं।

शिशिरसे भी मैं क्षमाप्रार्थी हूं, मेरी प्रार्थना है कि विद्युत निर्दोष है। जननीके अपराधके नाते उसे किसी तरहका दण्ड न देना।

मेरे दोनों किता मकान, रुपया पैसा, स्थावर और जंगम जो कुछ सम्पत्ति है सबकी उत्तराधिकारिणी विद्युत है। यही मेरी आजन्म कमाई है। इसीके लिये मैंने इतना अधम काम उठाया था।

बस, अब मैं चलती हूं, भगवानके सामने अपने शुभाशुभ कर्मोंका फल भोगनेके लिये उपस्थित होती हूं। क्षमा! क्षमा!! क्षमा!!!

"क्षणप्रभा"

पत्र पढ़कर विद्युतने उसे शिशिरको दे दिया। शिशिरने पत्र लेनेके लिये हाथ बढ़ाया। सहसा उसकी दृष्टि विद्युतके मुखपर पड़ी। उसने देखा कि आंसुओंकी अविरल धारा बह रही है। शिशिर पत्र पढ़ता जाता था और स्तम्भित होता जाता था। अब उसे विद्युतके मुंहपर दृष्टिपात करते भी लज्जा लगती थी। अपनी शर्मसे ही वह अनुमान कर लेता था कि विद्युतका हृदय कितना क्षुब्ध होगा।

कुछ देर तक चुप रहकर शिशिरने नीचा सिर किये कहा—एक बार वहां जाना चाहिये।

विद्युत—(खिन्न स्वरसे) मैं कलही नाता तोड़कर आई हूं।

तब भी...इतना कहकर शिशिर चुप हो रहा। वह कहना

चाहता था कि तब भी तो मा है, पर यह ख्याल कर कि इससे विद्युतके हृदयको आघात पहुंचेगा वह चुप हो रहा। पर फिर बोला—तब भी एक बार जाकर पता तो लगा लेना चाहिये। यदि तुम राजी नहीं होती तो मैं अकेला जाकर पता लगा लाऊं?

विद्युत कुछ न बोली। शिशिर बिना कुछ कहेही उठा और घरसे बाहर होगया।

(सत्ताईस)

जहरका प्याला

उसी दिन क्षणप्रभाने आत्महत्या कर ली। उसकी सारी सम्पत्तिकी एकमात्र उत्तराधिकारिणी विद्युत थी। जिस समय शिशिरने सम्पत्तिपर अधिकार करनेका अनुरोध विद्युतसे किया तो उसने घृणासे कहा—मैं उसमेंसे फूटी कौडी भी लेना पाप समझती हूं। मेम साहिबाने एक नौकरी लगा दी है। मैं कल ही शीलाङ्ग जा रही हूं।

शिशिरने व्यथित हृदयसे कहा—क्या पढ़ना छोड़ दोगी?

विद्युतने दुःखके वेगको कुछ कम करके कहा—क्या करूंगी!

शिशिर—यदि इस सम्पत्तिको तुम न लोगी तोभी किसीके हाथ पड़कर इसका दुरुपयोग ही होगा।

विद्युत—जो वस्तु मेरी नहीं है, उसमें मेरी ममता नहीं और न उसके नष्ट होनेमें मुझे किसी प्रकारका दुःख व शोक होगा।

शिशिर—(कुछ सोचकर) उसपर अधिकार कर उसे किसी सार्वजनिक उपयोगके काममें क्यों न दान कर दिया जाय।

विद्युतने शिशिरकी तरफ देखा, बोली—ठीक है। इस सम्पत्तिको गरीब विधवाओंके भरण पोषणके लिये दान कर दिया जाय। पर यह सब बखेड़ा तुम्हारे सिरपर रहा। इसकी सारी व्यवस्था तुम्हें करनी होगी।

× × × × ×

प्रसिद्ध नर्तकी क्षणप्रभाकी आत्महत्याका वृत्तान्त चारों ओर फैल गया। "नारद"में तो यहांतक संवाद प्रकाशित किया गया कि प्रसिद्ध लेखक शिशिर चक्रवर्तीका आना जाना भी क्षणप्रभाके घर था।

इसी समय बङ्गदेशके समस्त समाचारपत्रोंमें विद्युतके आत्मत्यागकी प्रशंसा बड़े जोरसे निकली कि इस महिलाने एक लाखसे अधिककी सम्पत्ति मय अपने वस्त्राभूषणके विधवा-सहायक-सभाको दान कर दी है। पर "नारद"ने प्रकाशित किया—"यह विद्युत शिशिर चक्रवर्तीकी प्रणयिनी है। शिशिर अति निर्धन है। पर विद्युतकी सम्पत्तिसे आनन्द उठानेका उसने पूरा योग कर लिया है। विद्युतके लिये शिशिरने पांच सौ रुपया कर्ज लिया है इसका भी हमारे पास पूरा प्रमाण है।

यह साधारण नियम है कि जो सुविख्यात रहता है उसके नामपर कलङ्क भी जोरोंसे बढ़ने लगता है। निदान शिशिरकी यह निन्दा भी प्रबल वेगसे वह चली।

सन्ध्याने उदासमुख रजतसे कहा—शिशिर बाबूके ऊपर इस तरहका मिथ्या कलंक क्यों रोपा जा रहा है?

रजत—(गम्भीर होकर) शिशिरके साथ मेरा सम्बन्धही कपटाचारसे आरम्भ हुआ था। बात बातमें मुझे झूठ बोलना पड़ता था। तुम सब जानती थीं पर किसीने मुझे मना नहीं किया बल्कि उत्साहित ही किया। पर आज यह धर्मभाव अचानक कहांसे जाग उठा? पर मैं मिथ्या क्या लिख रहा हूं?

सन्ध्या—यही कि देवरजीने तुमसे रुपया उधार लेकर विद्युतको दिया है।

रजतने विना कुछ कहे टेबुलके दराजसे शिशिरका लिखा हैण्डनोट निकालकर सन्ध्याके सामने फेंक दिया।

सन्ध्याने हैण्डनोट देखकर कहा—पर इसका क्या प्रमाण है कि उन्होंने रुपया विद्युतके लिये ही लिया ?

जिस रातको विद्युतको अपनी माका परिचय मिला और वह उसे छोड़कर चली गई उसी रातको शिशिर यहां रुपया लेने आया था। उस समय बनमाली घर जा रहा था। उसने देखा था कि फाटकके बाहर गाड़ीमें विद्युत बैठी शिशिरकी प्रतीक्षा कर रही थी। शिशिर रुपया ले गया, विद्युतको दिया और वह चला गई।

सन्ध्याने विस्मयके साथ पूछा—यह तुम्हें किस तरह मालूम हुआ कि विद्युतको अपनी माका परिचय उसी रात मिला ?

अब तो रजत लगा बगल झांकने। सम्हलकर बोला—उसीके ठीक दूसरे दिन विद्युतकी माने आत्महत्या की। शिशिर विद्युत-के लिये ही रुपया उधार लेने आया था। मा भी इस बातको जानती है।

सन्ध्या—इसे स्वीकार भी कर लिया जाय तो इसमें बुराई क्या है ? तुमने उनके आचरणपर दोषारोपण क्यों किया ? यह तो तुम भली भांति जानते थे कि विद्युतकी माका परिचय न पाकर ही शिशिर बाबू उसके घर जाते थे और विद्युतके साथ उनका सम्बन्ध सर्वथा दोषरहित है।

रजत—इसके बारेमें न तो निश्चयरूपसे तुम ही कुछ कह सकती हो और न मैं ही कुछ कह सकता हूं। मैंने कुछ विशेष लिखा भी नहीं है। उसके भक्त पाठकोंको मैंने केवल इतना ही जता दिया है कि आपके उपास्य लेखकका आना जाना क्षणप्रभा बाईके घर था और इस समय भी उसकी पुत्रीके साथ उनका सम्पर्क है और अपने पास कुछ न रहने पर भी उधार करके उसे आर्थिक सहायता देते हैं। इससे अधिक तो मैंने कुछ लिखा नहीं और इसमें मिथ्याका आभासतक नहीं है।

संध्या—(उत्तेजित होकर) यह सब अक्षरशः मिथ्या है। तुम पहले जो मिथ्याचरण करते थे उसका सद्भिप्राय था। इससे हमलोग गर्वित थे पर आज तुम इस सत्यकी ओटमें घोर मिथ्या और कपटाचार लेकर उठे हो। जो व्यर्थका कलङ्क तुम शिशिर बाबूके माथे मढ़ रहे हो क्या उसके लिये तुम्हारे हृदयमें लेशमात्र भी व्यथा नहीं उठती ?

रजत—(तिरस्कारकी हंसी हंसकर) केवल तुमलोगोंका शिशिरके लिये इस तरहका आग्रह अवश्य खलता है। आज मुझे अपने कियेपर पश्चात्ताप हो रहा है कि मैंने नाहक:एक अनजान व्यक्तिको अपने घरमें घुसने दिया।

सन्ध्या वहांसे लौटी जा रही थी, सहसा लौट पड़ी और उग्र स्वरसे बोली—निश्चय ही तुमने अच्छा नहीं किया। यदि इस तरह तुम उनपर अयाचित दया न दिखाये होते तो आज उन्हें इस तरह अपमानित न होना पड़ता।

इस अन्तिम बातको सुनकर रजतका हृदय क्रोध, क्षोभ और प्रतिहिंसासे भर गया। इसी समय सुनयनीने कमरेमें प्रवेश किया। सुनयनीको देखते ही रजतने सिर नीचा कर लिया। सुनयनी बोली—रजत! तुझे शर्म नहीं आ रही है कि तू क्या कर रहा है। तू समझता है कि इस तरह तू शिशिरको परास्त कर देगा। तेरी समझपर पत्थर पड़ गया है।

रजत मौन धारण किये बैठा रहा। उसे सिर उठानेका भी साहस न हुआ। सुनयनीने एक दीर्घ निःश्वास ली और घरसे बाहर हो गई। सन्ध्या अपने कमरेमें जाकर शिशिरको पत्र लिखने बैठी। उसने लिखा—

देवरजी,

लोग जो चाहें कहें पर मैं जानती हूं कि यह सब कलङ्क झूठा है। लोग जो चाहें लिखें, जितना चाहें दोषारोपण करें पर मैं निश्चय जानती हूं कि वे आपका कुछ बिगाड़ नहीं सकते।

आपकी व्यथिता—

"भाभी"

विना किसी यथेष्ट कारणके ही शिशिर रजतकी आंखोंमें खटकने लगा था। आजतक रजतने जो कुछ उसे कहा था उसकी कुछ भी परवा शिशिरने नहीं की थी और उसने सुनयनी तथा सन्ध्याके पास आना जाना भी बन्द नहीं किया था। पर आचरणपर दोषारोपण कर रजतने उसका मार्ग सर्वथा रोक

दिया, विशेषकर रुपयेवाली घटनाका जो रूप रजतने प्रगट किया और जो समाचार शिशिरको मिला उससे उसने प्रत्यक्ष देखा कि रजत कितना नीचे गिर गया है। जिस विद्युतके प्रति उसके हृदयमें इतनी श्रद्धा है, जिसके प्रति उसका अनुराग परम पवित्र और निष्कलंक है उसके चरित्रपर दोषारोपण कर रजतने अपराध किया है। यह शिशिरके लिये असह्य था। वह किसी भी तरह रजतको क्षमा नहीं यह सकता था। उसके हृदयमें रजतके प्रति जो घृणाका भाव उत्पन्न हो रहा था उसके सामने उसकी सारी कृतज्ञता लुप्त हो जा रही थी। उसका हृदय मार्मिक वेदनासे जलने लगा। रक्षाका उपाय ढूंढ़नेपर भी उसे नहीं मिलता था। इसी समय सन्ध्याका सान्त्वनायुक्त पत्र मिला। इस पत्रसे शिशिरने जो शान्ति लाभ की उसका वर्णन शक्तिसे बाहर है।

मानों डूबतेको सहारा मिल गया हो, दम घुटकर मरते हुएको सुरभियुक्त हिमालयका मलयानिल आकर थपकियां दे रहा हो। इस पत्रसे उसे बड़ी शान्ति मिली। वह सुनयनी और सन्ध्याके पास नहीं जायगा पर उनके हृदयमें उसके प्रति जो मान था वह तिलभर भी घटा नहीं यह जानकर उसे काफी हर्ष हुआ।

उसी दिन उसे विद्युतका पत्र मिला।

श्रद्धास्पदेषु,

मेरे कारण आपकी इतनी निन्दा हो रही है, यह जानकर मुझे आन्तरिक वेदना है। इससे मैं मृत्युको अधिक श्रेयस्कर

समझती हूं। क्षमा प्रार्थना करनेका भी अधिकार नहीं, क्योंकि यह घटना मेरी इच्छासे नहीं घटी है। आपका जीवन दुःख और यातनाका मूर्तिमान स्वरूप है। इससे भी आपकी श्रीवृद्धि होगी, आपका कोई बाल भी बांका न कर सकेगा।

यदि मुझे पहले मालूम होता कि आप मेरे लिये कर्ज ले रहे हैं तो मैं वह रुपया कदापि स्वीकार न करती।

चिरबाधिता—

"विद्युत"

जिस दिनसे विद्युत शीलांग गई शिशिरके पास एक भी पत्र न लिखा था। आज सहसा उसका पत्र पाकर शिशिरको बड़ी प्रसन्नता हुई। आज शिशिर प्रसन्नताकी चरम सीमापर पहुंच गया था। जो उसे बहुत प्रिय थे, जिनके प्रति उसके हृदयमें श्रद्धा भक्तिका श्रोत उमड़ रहा था, उनके आज उसे पत्र मिले थे। पर दुर्भाग्यवश वह उनके पत्रोंका उत्तर न दे सका। उसका जीवन कलङ्कित था, उसके चरित्रोंमें दोषारोपण किया गया था। जिस किसीके साथ वह सम्पर्क रखेगा उसको कलङ्कका भाजन होना पड़ेगा, उसे यह सह्य नहीं था। सन्ध्या और विद्युत उसे भूल नहीं गई हैं, उनके स्नेह पूर्ववत् बने हैं, इससे बढ़कर उसके लिये दूसरी बात न थी।

इसी समय शिशिरको रजतका रुपया चुकानेकी चिन्ता पड़ी। इधर परीक्षा सिरपर थी। इससे वह कुछ अधिक लिख भी नहीं सकता था। पहलेके जो लेखादि पड़े थे उनसे जो कुछ मिलता

था उसीसे उसका खर्च चलता था। रजतको ५००) रुपये देने थे। इतनी रकम एक मुश्त कहांसे मिले?

रजत "नारद"के लेखकोंको बड़ी उदारताके साथ पारितोषिक देता था और जो लेखक शिशिरपर आक्रमण करता उसको और भी अधिक पारिश्रमिक दिया जाता। इसीका लाभ उठाकर हेम, पूर्ण, खगेन और बनमाली पैसा कमा कमाकर मनमाना उड़ा रहे थे।

एक दिन रजत "नारद"के कर्यालयमें बैठा था। उसी समय डाकियेने उसे एक पैकेट लाकर दिया। रजतने खोलकर देखा तो उसमें शिशिरके लेखकी समालोचना थी। लेखकने शिशिरको व्यक्तिगत गालियां नहीं दी थीं। उसने लेखके विषयकी ही पूर्ण योग्यतासे समालोचना की थी। उसने पूर्ण विवेचनाके साथ अन्य भाषाके लेखकोंकी लेखनीसे तुलना करते हुए शिशिरकी भाषा, रचनाशैली और विषयका दोष दिखाया था। उपसंहारमें समालोचकने लिखा था—समालोचकका काम बड़ा कठिन है। उसे स्वीकार कर लेना पड़ता है कि वह लेखकसे कहीं बढ़कर है। वर्णन-शैलीमें जो विचार उसके हृदयमें उदय होते हैं उनको अंकित करना उसके लिये बड़ा कठिन हो जाता है। यदि लेखक अपने लेखोंकी स्वयं समालोचना करे तो कदाचित उसे अपने लेखकी त्रुटि दिखानेमें अधिक सफलता मिल सकती है। जिन दोषोंका मैंने उल्लेख किया है उन्हें सच स्वीकार करनेमें शिशिर बाबू जरा भी न हिचकेंगे। मुझे पूर्ण आशा है कि शिशिर बाबू

या उनके हिमायती पाठकगण इस समालोचनासे अन्य भाव न ग्रहण करेंगे।

लेखके अन्तमें हस्ताक्षर था—श्रीशचन्द्र शर्मा और पता था—प्रेसीडेंसी पोष्ट-मास्टरके द्वारा।

इस लेखको पाकर रजत अतिशय प्रसन्न हुए। आजतक जिसे गाली गुफ्ता देकर नीचा न दिखा सका उसका दांत खट्टा करनेके लिये काफी साधन मिल गया था। रजतने उसी समय ५०) रुपयेका मनी-आडर श्रीशचन्द्र शर्माके नाम उस प्रबन्धके लिये भेजा और पत्र लिखा कि इसी तरहके और भी अनेक प्रबन्ध भेजिये और यदि आप दर्शन देनेका कष्ट उठावें तो मैं चिरबाधित हूंगा। और यदि स्वयं न आसकें तो अपना पूरा पता लिखकर भेज दें तो मैं ही सेवामें उपस्थित होऊंगा। पर श्रीशचन्द्रसे उस पत्रका कोई उत्तर नहीं मिला।

श्रीशचन्द्रका लेख "नारद" में यथासमय निकला। पढ़ पढ़कर लोग विस्मय करने लगे। इस तरहके लेखक और समालोचक आजतक कहां प्रच्छन्न थे। बादल फाड़कर ये यकायक कहांसे निकल पड़े। जो लोग शिशिरके लेखोंपर फिदा थे उन्होंने भी कहा—समालोचकने समालोचना बुरी नहीं की है। पर लेखके उत्तम अंशको छूआ तक नहीं है। इससे मालूम होता है कि रजत बाबूकी फरमाइशसे यह समालोचना लिखी गई है।

इधर "मुद्रिका" और "संग्रह" ने उस समालोचनाकी समालोचना करनी आरम्भ की। शिशिर बाबूकी निपुणता

साबित करनेमें उन्होंने कोई बात उठा न रखी। इस द्वन्द्वको शिशिरने भी देखा। उसने अपने मनमें कहा—यदि पाठकोंको इतनी भक्ति है तो मैं भी ऐसी कड़ी समालोचना करूंगा कि वे दङ्ग हो जायंगे।

अब तो समालोचनापर समालोचना आने लगी और रजत-की ओरसे पारितोषिकके रूपमें प्रत्येक समालोचनापर ५०) रु० पुरस्कार जाने लगा और साक्षात्कारके लिये अनुनय विनय होने लगा।

प्रायः सभी मासिकपत्र इस युद्धमें अवतीर्ण हुए। किसीने शिशिरका पक्ष लिया और कोई प्रतिपक्षी हो गया, इसकी प्रबलता इतने भीषण वेगसे बढ़ी कि मासमें इनके दो दो और तीन तीन अवतरण होने लगे।

कई दिनके बाद शिशिरको संध्याका एक पत्र मिला। उसमें लिखा था—

देवरजी,

आपकी प्रतिभाकी ज्योतिसे आकृष्ट होकर कितने पत्ररूपी पतङ्ग अपने प्राणोंकी आहुति दे रहे हैं इसका कोई ठिकाना नहीं। इधर एक नया पङ्खवाला चींटा उत्पन्न हुआ है। उसका नाम है श्रीशचन्द्र शर्म्मा। उसकी समालोचनामें प्रतिभा अवश्य है पर आपकी प्रतिद्वन्द्विताामें वह नहीं ठहर सकता। अपने प्रति-पक्षियोंकी बढ़ती ही आपकी असाधारण शक्तिका प्रमाण है। आजतक तो जितने समालोचक थे उनकी समालोचना रोनेके

समान थी पर आज जो समालोचक क्षेत्रमें अवतीर्ण हुआ है वह प्रतिभाशाली प्रतीत होता है। उसके कलममें कुछ ताकत दिखाई देती है। पर उसकी लेखनशैली देखकर दुःख और आश्चर्य होता है कि वह आपके ही भण्डारसे अस्त्र चुराकर आपसे लड़ रहा है। उसके लेखोंमें आपकी ही भाषा, आपके ही भाव, आपकी ही रचनाशैली और आपकी ही विचक्षणता पाई जाती है। इतनी नकल तो विस्मयमें डाल देती है। इसे देखकर अनुमान होने लगता है मानों अर्जुन शिखण्डीको आड़से अस्त्र-प्रहार करते हों और दूसरी ओर भीष्म खड़े लड़ रहे हों पर नपुंसकपर अस्त्र-प्रहार करना पाप समझकर उन्होंने शस्त्र रख दिया हो।

आपकी—

भाभी

इस पत्रको पढ़कर शिशिर अतिशय प्रसन्न हुआ। यह रमणी मुझसे कितना स्नेह रखती है। साधारणसे साधारण अवसरपर मुझे सान्त्वना देनेके लिये प्रस्तुत रहती है। इससे शिशिरकी सारी व्यथा दूर हो गई। भीष्मार्जुनकी उपमा पढ़कर शिशिर हंस पड़ा। शिशिर अपने मनमें कहने लगा—प्रथम सहवासमें मुझे भी ऐसा ही प्रतीत हुआ था कि रजत अर्जुनकी भांति अमृत-जलमयी पाताल–गंगाका सुमधुर जल अपने वाणोंकी अमोघ शक्तिसे निकालकर मुझे तृप्त और आलपावित कर रहा है। पर जो वाण एक दिन मेरी तृष्णा-निवारणके लियेचलाया गया था वही वाण आज मेरे हृदयको छेदनेके लिये चलाया जा रहा है। इसका

क्या कारण है ? इन्हीं बातोंको सोचते सोचते शिशिरको सहसा विद्युतका स्मरण हो आया। वह श्रीशचन्द्र शर्माका लेख पढ़कर क्या सोचती होगी ? विद्युतने फिर कोई पत्र क्यों नहीं लिखा ? मैंने भी तो उसके पत्रका उत्तर नहीं दिया।

दस मासमें "नारद"में श्रीशचन्द्र शर्माके दस लेख प्रकाशित हुये। पर अभीतक रजतसे उनका साक्षात् नहीं हुआ। उनका पता भी किसीको नहीं मिला। प्रेसीडेंसी पोस्टमास्टर भी उनका पता नहीं जानते थे। कारण कि वे स्वयं बीच बीचमें जाकर चिट्ठीपत्री और रुपया उनके पाससे ले आते थे।

दस मासके बाद श्रीशचन्द्र शर्माने "नारद" में लेख भेजना बन्द कर दिया। अब तो रजत बिचारे लाचार होगये। शिशिरके विरुद्ध प्रयोग करनेके लिये उनके पास शस्त्र नहीं रह गये। ग्यारहवें मासके "नारद"में रजतने शिशिरको अनेक तरहकी गालियां देकर लिखा कि यदि इस मासके भीतर ही भीतर शिशिर मेरा रुपया अदा नहीं कर देंगे तो मैं उनपर नालिश कर उन्हें जेलमें भेज दूंगा। इस अंकको पढ़कर शिशिर जोरोंमें हंस पड़ा। उसने "नारद"का वह अंक कालिदासको देकर कहा—वकील द्वारा मुझे नोटिस भी मिल चुकी है।

कालिदासका मुंह सूख गया। दो मिनिट तक वह चुपचाप शिशिरका मुंह देखता रहा। बाद वहांसे उठा और कपड़ा पहनकर बाहर हो गया।

उसी दिन शामको रजतको एक पत्र मिला। उसमें लिखा था—

"नारद"—सम्पादक,
श्रीयुत रजतचन्द्र राय,
महोदयकी सेवामें,

महोदय,

आपके अनेक पत्र मिले पर उत्तर देनेमें असमर्थ रहा। कल तीसरे पहर आपकी सेवामें उपस्थित होनेका विचार है। उसी समय यह भी निश्चय कर लूंगा कि शिशिर बाबूके लेखोंकी और भी समालोचना करनी चाहिये कि नहीं।

भवदीय—
श्रीशचन्द्र शर्मा।

इस पत्रसे रजतको बड़ी प्रसन्नता हुई। उसने खगेन, पूर्ण, हेम और बनमालीको भी यथासमय उपस्थित रहनेके लिये कहला भेजा।

कालिदास बासासे उठकर सीधा रजतके घर पहुंचा। कमरेमें प्रवेश करते ही उसने कहा—रजत, मैं नहीं समझता था कि तुम इतने नीच और संकीर्ण हृदयके हो। तुमने शिशिरको नोटिस दिया है। तुम उसको जेल भेजनेकी स्पर्धा रखते हो! क्या उसका संसारमें कोई नहीं है? मैं हैण्डनोट लिख देता हूं। तुम शिशिरका हैण्डनोट लौटा दो।

रतजका मिजाज ठंढा था। उसने हंसकर सिर हिलाते हुए कहा—मैं इस तरहकी जालसाजी नहीं कर सकता। तुमने तो मुझसे एक कौड़ी भी कर्ज नहीं ली है फिर तुमसे हैण्डनोट कैसे लिखाऊं?

रजतकी नीचतासे विरक्त होकर कालिदासने कहा—ठीक है। हम लोग आज ही किसी न किसी तरह पांच सौ रुपयेका प्रबन्ध करके तुम्हारा कर्ज चुका देंगे।

रजतने हंसकर कहा—इससे बढ़कर कौन बात होगी? जैसे हो उसे मेरा रुपया अदा करना होगा। अच्छा, एक बात सुनो। कल श्रीशचन्द्रशर्मा तीसरे पहर यहां आ रहे हैं। तुम भी आना। परिचय करा देंगे।

कालिदासने विरक्त होकर कहा—अन्यायका इससे बढ़कर उदाहरण क्या हो सकता है? बङ्गसाहित्यके सौभाग्य-सिन्दूरको उज्ज्वल करनेके हेतु शिशिरका अवतरण हुआ। पर तुम लोग अहिरावणकी भांति द्वेषाग्निसे प्रज्ज्वलित होकर उसे ग्रसना चाहते हो। पर मैं बतलाये देता हूं कि इसमें तुम्हारी सफलता नहीं हो सकती। तुम्हारे भाग्यसे यह श्रीशचन्द्र शर्मा योग्य व्यक्ति मिल गया है पर इसको अपने साथ रखनेमें तुम्हारी अभीष्ट सिद्धि कभी न होगी। व्यजिजबावने भगवानसे द्रोह किया और उसे स्वर्ग छोड़ना पड़ा। फल क्या हुआ। नर्कमें आकर उसे आजन्मके लिये शैतानकी दासता स्वीकार करनी पड़ी। शिशिरकी बढ़तीसे जलकर तुमलोग उससे दुश्मनी कर रहे हो और अपनी नीच वृत्तिको सफल करनेके लिये श्रीशचन्द्रका सहारा लेना चाहते हो। पर जो पराजय तुम्हें मिली है उसका निवारण इससे न होगा।

कालिदासकी युक्तिपूर्ण बातें सुनकर रजत क्षणकालके लिये

सन्न हो गया। जिस बातका उसने स्वप्नमें भी अनुमान नहीं किया था, कालिदासने उसी बातका आभास उसे दिया। रजतने देखा कि बात भी ठीक है। इन दस महीनोंमें श्रीशचन्द्रशर्माके लेख बराबर "नारद"में निकलते रहे हैं। इनसे श्रीशचन्द्रकी ही प्रशंसा हुई है। उसीका यश-गान लोगोंने किया है। रजतका तो नाम भी किसीने नहीं लिया है। जैसे देवताकी पूजामें पुरोहितका स्थान रहता है वही मेरा था। प्रतिमाकी प्राण-प्रतिष्ठा मेरे द्वारा अवश्य हुई पर उसकी प्रतिष्ठा तो मुझसे कहीं अधिक है। इससे उन (श्रीशचन्द्र शर्मा)के प्रति भी उसके हृदयमें घृणा उत्पन्न हो गई और अभ्यर्थनाका भाव सहसा दब गया।

रजतको विषण्ण और चुप देखकर कालिदास प्रसन्नचित्त वहांसे उठकर चलता बना। कालिदास घरके बाहर भी न होने पाया था कि पीछेसे नौकरने रोककर कहा—आपको मा भीतर बुला रही हैं।

कालिदास लौटकर सुनयनीके पास गया।

कालिदासके बाहर होते ही रजतको उत्साहित करनेके निमित्त खगेनने चिल्लाकर कहा—शिशिरको हमलोगोंने अनेक तरहसे परास्त किया, यह हमलोगोंके विजयका उत्कट उदाहरण है। हमलोगोंने उसका नशा पूरी तरहसे उतार दिया और श्रीशचन्द्र शर्माने तो उसकी लेखनी ही बन्द कर दी। उसकी प्रेयसी वि-द्युतने अपनी आंखों देखा कि रजतराय शराबका ग्लास हाथमें लिये उसकी माका कमर पकड़कर झूम रहे हैं।

यह सुनकर रजत मारे खुशीके बोल उठा--अफसोस ! इतना ही रहा कि विद्युत हाथसे निकल गई। उसकी माने बोतलोंका प्रहार इस तरह आरम्भ किया कि हमलोगोंको लाचार होकर चादर छड़ी छोड़कर भागना पड़ा, नहीं तो यदि हमलोग विद्युतको भी पकड़ पाते तो शिशिरको और भी झेपना पड़ता।

कालिदासका क्रोधपूर्ण शब्द सुनकर संध्या बैठकके बगल-वाले कमरेमें आगई थी। रजतकी बातोंको उसने भली प्रकार सुना। सुनकर स्तम्भित हो गई। केवल पांच सौ रुपयेके लिये उसने शिशिरको नोटिस दिया है कि समयपर रुपया न चुकानेसे तुम्हें जेल जाना होगा! शिशिरके समान योग्य मित्रका त्याग कर उसने खगेन, पूर्ण, हेम और बनमाली सदृश नीच और साधारण व्यक्तियोंको अपना मित्र बनाया है। इनकी सोहबतमें उसका कितना अधः पतन हो गया। धीरे धीरे वह नशा पीने लगा, रण्डियोंके कोठेपर जाने लगा। यही कारण है कि आज कल मुझसे कम मुलाकात होती है। आजकल अधिक रात बीते ही उन्हें घर आनेकी फुरसत मिलती है। पूछनेपर अनेक तरहकी बहानेबाजी कर देते हैं। धिक्कारयुक्त घृणासे संध्याका सारा शरीर जलने लगा। वह वहां और न ठहर सकी। सीधी अपने कमरेमें चली आयी और पछाड़ खाकर बिछौनेपर गिर पड़ी और तकियेमें मुंह छिपाकर बिलख बिलखकर रोने लगी। सहसा किसीके कोमल हाथोंके स्पर्शसे चौंक पड़ी। आंख

उठाकर देखा तो सुनयनी देवी खड़ी उसके मस्तकपर हाथ फेर रही हैं और उनकी आंखोंसे अविरल अश्रुधारा बह रही है।

सुनयनीकी यह दशा देखकर संध्याके दुःखका वेग और भी उमड़ आया। वह फूट फूटकर रोने लगी।

सुनयनीने अपने आंसुओंको पोंछकर कहा—बेटी, तुम कुछ दिनके लिये अपने पिताके घर चली जाओ। वहां तबीयत बहलेगी।

संध्याने रोते रोते कहा—मा, मुझे आज ही पहुंचवा दीजिये।

(अठाईस)

विजय

•••

सूर्योदय हुआ। धीरे धीरे दिन चढ़ने लगा। साथ ही साथ रजतके हृदयमें श्रीशचन्द्र शर्मासे मिलनेकी उत्कण्ठा प्रबल वेगसे बढ़ने लगी।

इसी समय उसके मुंहमें कालिमा पोतनेके निमित्त हंसते हंसते शिशिरने कमरेमें प्रवेश किया। शिशिरको सहसा उपस्थित देखकर सब अवाक् हो गये। आखिर यह शख्स इस घरमें फिर क्यों आया! इसका सामना करनेमें जितनी लज्जा आती है क्या यह उतना ही अधिक यहां आया करेगा? देखते हैं कि इस बेहयाको तनिक भी लाज नहीं!

सबको स्तब्ध और मौन देखकर शिशिरने हंसते हंसते बगलसे नोटका पुलिन्दा निकालकर रजतके हाथमें रख दिया। इस प्रकार सहजमें ही रुपया अदा कर शिशिरने रजतको हताश कर दिया। उसने आजतक यही अनुमान कर रखा था कि शिशिर रुपया दे नहीं सकेगा और मैं उसे अवश्य जेल भेज दूंगा। रुपया सहेजकर रजतने कैश-बक्समेंसे हैण्डनोट निकाल-कर शिशिरके हवाले किया।

हैण्डनोटको जेबमें रखकर शिशिरने जेबमेंसे कई एक पत्र

और मनीआर्डर कूपन निकाले और हंसकर बोला—तुम श्रीशचन्द्र शर्माके साथ मुलाकात करनेके लिये बड़े व्याकुल थे। श्रीशचन्द्र शर्मा इस समय तुम्हारे सामने मौजूद हैं। इस बातका प्रणाम तुम्हारी ये सब चिट्ठियां और मनीआर्डरके कूपन हैं। कल्पित नामसे अपने ही लेखोंकी सामलोचना कर मैंने उन्हींसे उपार्जन कर सहजमें ही तुम्हारा ऋण चुका दिया।

दैवयोगसे धूम्रलोचनकी भांति मुझे अपने ही हाथों अपनी समालोचना करनी पड़ी।

इतना कहते कहते शिशिर खिलखिलाकर हंस पड़ा।

सबका मुंह बन्द हो गया। शिशिरने इन लोगोंको बार बार हराया। रजतसे ही पुरस्कार लेकर उसने उसके ऋणको चुकाया। ठीक है "मियांकी जूती मियांका सर!"

सबको मौन देखकर शिशिर हंसते हंसते वहांसे चला गया।

शिशिरके चले जानेपर खगेनने कहा—ओह! कितना भारी धूर्त है।

रजतके मुंहसे एक शब्द भी न निकला।

××　　　　××　　　　××

शिशिर सीधा बासा गया। वहांपर कालिदास और शिरीष उसकी प्रतीक्षामें बैठे थे। पहुंचतेही शिरीष और कालिदास दोनोंने ही उसके हाथमें एक एक मोटा लिफाफा दिया। कालिदासका लिफाफा सुनयनीका भेजा हुआ था और शिरीषका लिफाफा संध्याका भेजा हुआ था। शिशिरके समझमें न आया

कि संध्याका पत्र शिरीषको कैसे मिला। इससे उसने चौंकित होकर पूछा— आपको यह पत्र कहांसे मिला ?

शिरीष—(हंसकर) संध्या रिश्तेमें मेरी बहिन होती है। मुझे लेख लिखनेका शौक देखकर रजत मुझसे जलने लगा और मुझसे लड़ पड़ा। उसी समयसे मुझसे कोई सम्बन्ध नहीं रखता। मैं "मुद्रिका"का सहकारी सम्पादक हूं इससे वह "मुद्रिका" से भी जलता है। इसीलिये उसने मेरे क्लबसे सम्बन्ध त्यागकर अपनी सङ्गत कायम की। आप रजतके मित्र थे। इसी कारण मैंने आजतक अपना परिचय नहीं दिया और संध्याने भी इस बातको छिपा रखा। संध्या कल मेरे घर गई थी और यह चिट्ठी आपको देनेके लिये प्रार्थना कर गई। आजकल तो उसके पतिकी दृष्टिमें हमलोग सब कोई शत्रुवत् होरहे हैं।

इतना कहकर शिरीष हंसने लगा। शिशिर गम्भीर होकर पत्र खोलने लगा। लिफाफेमें अनेक नोट थे और एक पत्र था। पत्रमें लिखा था—

बेटा शिशिर,

भाई भाईमें शत्रुता हो जाती है पर माकी दृष्टिमें दोनों सदा बराबर रहते हैं। बल्कि जिस पुत्रमें सहनशीलता अधिक रहती है उसपर माताकी ममता भी अधिक होती है। स्वार्थके लोभमें पड़कर भाई भाईपर अनेक तरहका अत्याचार करता है पर उसकी चोट माके हृदयपर अधिक लगती है।

जब तुम्हें रुपयेकी आवश्यकता थी तो तुमने मुझसे क्यों

नहीं कहा ? तुमने मेरे साथ बड़ा अन्याय किया। इस पत्रके साथ ५००) रु० भेजती हूं। तुम इसको स्वीकार नहीं करोगे तो मुझे बड़ा दुःख होगा। इससे तुम अपना ऋण चुकाना। यही मेरे लिये परम प्रसन्नताकी बात होगी।

तुम्हारी—

"मा"

इसे पढ़नेके बाद शिशिरने संध्याका पत्र खोला। उसमें भी पांच सौ रुपयेका नोट था। संध्याने पत्रमें लिखा था—

देवरजी,

पतिने जो अपराध किया है उसकी भागी मैं भी हूं। आपके सामने आते शर्म लगती है। क्षमा मांगनेका भी अवसर आप नहीं रख छोड़ते। भीषणसे भीषण दोषको तुरत सहज उदारता-से क्षमा कर देते हैं। पर मेरे हृदयपर वेदना और लज्जाकी जो तह जमती जा रही है वह कदाचित् प्रायश्चित्तसे भी साफ नहीं होगी। आपका ऋण संशोधन करनेके लिये रुपया भेजती हूं। यह रुपया मेरा स्वकीय है। पिताके पाससे समय समयपर मुझे जो मिलता गया उसीको मैंने जमा कर रखा था। दूसरोंका रुपया देकर आपको अपमानित करनेकी धृष्टता नहीं कर सकती।

आपकी—

"भाभी"

संध्याके पत्रमें "दूसरोंका" शब्दका प्रयोग किसके लिये किया

गया था इसके समझनेमें शिशिरको देर न लगी। पत्र पढ़कर उसने दीर्घ निःश्वास ली और सूखी हंसी हंसकर बोला—मैं अभी रजतका रुपया अदा करके चला आ रहा हूं।

इतना कहकर उसने हैण्डनोट उन दोनोंके सामने रख दिया। उसने फिर कहा—यह पांच सौ रुपया भी मैंने रजतकी ही जेबसे निकाला है। श्रीशचन्द्र शर्माके नामसे जो लेख "नारद"में प्रकाशित होते रहे, उनका लेखक मैं ही था।

कालिदास मारे खुशीके उछल पड़ा, बोला—मैं भी चक्करमें पड़ा था कि ऐसा सिद्धहस्त लेखक कहांसे पैदा होगया।

शिरीष—(हंसकर) आपने तो रजतको खूब धोखा दिया। "मियांकी जूती मियांका सर" वाली कहावत तो आपने पूरी तरहसे चरितार्थ की।

सुनयनी और संध्यांके भेजे हुए नोट लौटाते हुए शिशिरने कहा—आप लोग मा और भाभीसे कहेंगे कि आप लोगोंकी कृपाके लिये मैं अतिशय कृतज्ञ हूं। इस समय मुझे रुपयेकी आवश्यकता नहीं है। मेरी नियुक्ति भी होगई है। बांकीपुरसे प्रकाशित "पैट्रियट"का सहकारी सम्पादक होकर जा रहा हूं।

इसी समय शिशिरके नाम एक मनीआर्डर लेकर डाकिया उपस्थित हुआ।

शिशिरको आश्चर्य हुआ कि मेरे पास किसने मनीआर्डर भेजा। फार्मपर हस्ताक्षर करते करते शिशिरने प्रसन्नता और

लज्जासे कहा—"कालिदास, विद्युतने रुपया भेजा है।" कूपनमें लिखा था—

श्रद्धास्पदेषु,

जिस दिनसे नौकरी की उसी दिनसे रुपया बटोर रही थी कि किस दिन आपको ऋणमुक्त कर सकूंगी। "नारद" पढ़कर सहम गई। रुपया भेजती हूं। तुच्छ रुपयेको अदा कर सकी हूं पर आपके ऋणोंका शोध तो इस जन्ममें नहीं हो सकता।

"विद्युत"

यह सब काम समाप्त हो जानेपर कालिदास और शिरीषने उठकर कहा—हम लोग जाकर यह सुसंवाद सबको सुना दें।

शिशिरने कहा—एक सुसंवाद और सुनाइयेगा। मैं विद्युत-को पत्नीरूपेण ग्रहण करता हूं। कल ही मैं बांकीपुर जाऊंगा। मकान ठीक कर मैं विद्युतको लेनेके लिये आगामी मासकी पहली तारीखको शीलाङ्ग पहुंच जाऊंगा।

कालिदास और शिरीष हंसते हंसते यह सुसंवाद सुनयनी और सन्ध्याको सुनाने चले गये और शिशिर विद्युतको पत्र लिखने बैठा।

प्राणाधिके,

तुम्हारे श्रद्धास्पदको रुपये मिले। पर यह तो केवल सूद-मात्र हैं। असल पावना तो अभी बाकी है। इसीको वसूल करनेके लिये स्वयं श्रद्धास्पद आगामी मासकी पहली तारीखको शीलांग आयंगे। इस बार श्रद्धास्पदको 'प्रियतम' का तमस्सुक

लिखकर तुम्हें प्रणय कर्ज लेना पड़ेगा। उस तमस्सुककी रजि-स्टरी होगी परिणव कार्यालयमें। शेष रकमके लिये निर्वासनका दण्ड मिलेगा। बांकीपुर निर्वासन होगा। वहां तुम्हारे सुख स्वच्छन्दकी देखरेखके लिये मैं पहरेदार रहूंगा, मैं बिहार-पेट्रियट-का सहकारी सम्पादक। कोई आपत्ति नहीं सुनी जायगी। नौकरीसे इस्तीफा देकर तैयार रहना। मैं एक मिनिटके लिये भी नहीं ठहर सकूंगा।

तुम्हारा पाणिप्रार्थी—

"महाजन शिशिर"

पत्र यथासमय विद्युतको मिल गया। पर उसे अपनी बुद्धि और आंखोंपर विश्वास नहीं होता था। क्या सचमुच पत्रमें यही लिखा है? यह तो दुराशा है! इस तरहकी दुराशा एक दिन संध्याने मनमें जगा दी थी। पर जिस दिनसे मुझे अपने जन्मका परिचय मिला उस दिनसे उसको सर्वथा दुराशा समझ लिया था। फिर यह सहसा उपस्थित होगयी। विद्युत पागलकी भांति चारों ओर देखने लगी, मानों चारों ओरसे सुखकी विचित्र घटा उमड़ी आ रही है। उसका हृदय ऊषाकी भांति विकसित हो उठा। सब दुःख कहीं अन्तरालमें जाकर छिप गये। आनन्दमें वह इतनी मतवाली होगई कि उसका पैर भी सीधा नहीं पड़ता था।

(उनतीस)

सुमिलन

आज पहली तारीख है। आजही शिशिर शीलांग पहुंचेगा। विद्युत आज प्रातःकालसे ही एक विचित्र आनन्दकी तरंगोंमें डूबती और उतराती है। उसका मुख लालवर्ण हो रहा है और स्त्रीजनित लज्जा उसके नेत्रोंको रह रहकर पटान्तरित कर देती है।

देखते देखते शाम होगई। पूर्णिमाका दिन था। पूर्णिमाका चान्द अपनी शुभ्र चादर बिछाकर नभस्तलकी शोभा बढ़ाने लगा। उसकी शुभ्र ज्योत्स्नामें जड़ जगत प्रकृतिके क्रीडास्थलमें द्विगुणित शोभा प्राप्त कर रहा था। विद्युतकी कोठीके चारों ओर अनेक प्रकारके सुगन्धित पुष्प प्रस्फुटित होकर अपनी सुरभि चारों ओर फैला रहे थे और मनको मोहित कर रहे थे। उनके ऊपर पड़नेवाली चन्द्रकिरणें उनकी शोभाको और भी बढ़ा रही थीं। बागकी एक तरफसे हुस्नहिना अपनी मस्तानी खुशबू लालाकर विद्युतको और भी बेहाल कर रही थी।

रात जितनी बीतती जाती थी विद्युतका उद्वेग उतना ही अधिक बढ़ता जाता था। शिशिरका आगमन प्रतिक्षण उसे दिखाई देता था। जरासे खटकेपर वह चौंक उठती थी और इधर

उधर ताकने लगती थी। बंगलेकी तरफ कोई भी घोड़ागाड़ी या पैदल मनुष्यको आते देखती तो दूरसे ही अनुमान करने लगती कि हो न हो यह शिशिर ही हैं। धीरे धीरे आठ बज गये। चन्द्रकी शीतल रश्मियां खिड़कियोंसे होकर मधुर अमृतकी वर्षा कमरेमें करने लगीं। चन्द्रमाकी चांदनीमें मस्त पपीहा किसी पेड़की डालीसे बोल उठा—पीऊ कहां! पीऊ कहां! विद्युत उस शब्दसे व्याकुल हो उठी। उसने आरामकुर्सीको बरामदेमें खींच लिया और उसपर जा बैठी। चन्द्रमाकी चांदनीमें उसका सौन्दर्य द्विगुणित होकर फूट पड़ा। विद्युत कुर्सीके ऊपर बैठी बैठी सुखकी कल्पना करने लगी—शिशिर आकर क्या कहेंगे। मैं क्या उत्तर दूंगी। इसके बादही उसके हृदयमें आशंका उठने लगी। कदाचित् शिशिर न भी आवें! पत्र लिखनेके बाद उनके विचारमें परिवर्तन हो गया हो। हठात् किसीके पैरकी शब्द-ध्वनिसे विद्युत चौंक पड़ी। आंखें खोलकर देखा—शिशिर सामने खड़ा हंस रहा है। विद्युत जल्दीसे कुर्सी छोड़कर अलग खड़ी होगई।

बरामदेमें पैर रखतेही शिशिरने विद्युतकी ओर अपने दोनों हाथ बढ़ाये। विद्युतको सशरीर अपने बाहुपाशमें बांध लेनेके लिये ही शिशिरने यह प्रयास किया था पर विद्युतने निवारण कर कहा—आइये! बैठिये!

शिशिर—(हंसकर) अभी बैठनेकी फुरसत नहीं है। लज्जा, विनय, हयाकी इस समय आवश्यकता नहीं। मैं इतनी

दूरसे अपना ऋण वसूल करने आया हूं और बिना इसके मैं कोई दूसरा काम नहीं कर सकता।

विद्युत—(नीचा सिर करके) मेरे संसर्गसे आपके शुद्ध चरित्रपर भारी दोषारोपण हुआ है। देश भरमें आपकी निन्दा हो रही है। आप मेरा त्याग कीजिये। मैं नीच हूं, अपवित्र हूं।

शिशिरने बाहुपाशसे विद्युतको सशरीर बांध लिया और हृदयसे लगाकर बोला—तुम कमलिनी हो, तुम चन्द्रमाकी शुभ्र ज्योत्सना हो, तुम लक्ष्मीके समान परम पवित्र हो। मैं भी संसारसे परित्यक्त हूं और तुम भी मुझसी हो। हमलोग एक दूसरेके हृदयको भली भांति समझ सकते हैं। इसलिये हमारा तुम्हारा संयोग अद्वितीय होगा। मैं इस तरहकी आपत्ति सुनने नहीं आया हूं। सड़कपर गाड़ी तैयार खड़ी है।

विद्युतने सोच रखा था—मैं अनेक तरहकी आपत्ति करूंगी, शिशिरको अनेक तरहसे समझाकर उसका मत परिवर्तन कर दूंगी। पर उसकी एक भी न चली। उसका मुंह बन्द होगया। आनन्दका श्रोत उमड़ उमड़कर बहने लगा। उसने प्रेमभरी दृष्टिसे शिशिरकी ओर देखकर कहा—भोजन तैयार है। भोजन कर लीजिये न!

शिशरने विद्युतका अधरपान कर कहा—इस अमृतरसके सामने भोजनके समान तुच्छ सामग्रीको कौन पूछता है।

विद्युतने मारे शर्मके शिशिरकी छातीके बीचमें अपना मुंह छिपा लिया।

इसी समय बेहया चन्द्रमा वृक्षकी आड़को छोड़कर सामने आगया और पपीहा "पीऊ कहां", "पीऊ कहां"की रट लगाता उड़ पड़ा।

इसी समय बाहरसे किसीने आवाज दी—क्या यहांपर शिशिर बाबू हैं?

विद्युत जल्दी जल्दी अलग जाकर खड़ी हो गई। शिशिरने चकित होकर कहा—यह तो कालिदासकी आवाज मालूम होती है।

फिर आवाज हुई—क्या शिशिर बाबूका मुंह इस समय किसी दूसरे व्यापारमें लगा है कि उत्तर तक नहीं दे सकता?

शिशिर अपने स्थानसे उठा, आगे बढ़कर हंसते हंसते बोला—कौन, कालिदास, यहां कैसे आ गये भाई? आओ, भीतर आओ।

कालिदास—(हंसकर) मैं तुम लोगोंपर सम्मन जारी करनेके लिये कलसेही यहां डेरा डाले बैठा हूं। पहले चलो, अपनी सहधर्मिणीके साथ परिचय तो करा दो।

शिशिर कालिदासको लिये बरामदेमें पहुंचा और विद्युतको लक्ष्य कर बोला—यही मेरे परम प्रिय बन्धु कालिदास हैं। कालिदास, यही मेरी प्रियतमा पत्नी और सहधर्मिणी विद्युत है।

आनन्द और लज्जासे अवनतमुखी विद्युतने दोनों हाथ जोड़कर कालिदासको प्रणाम किया, मानों मालतीकी शाखायें पुष्पोंके भारसे नत्र गई हों।

कालिदासने अपनी बगलसे छोटे बड़े तीन सन्दूक निकाले।

और उन्हें विद्युतके सामने रखकर बोला—इस आनन्दोत्सवके उपलक्षमें मैं यही उपहार लेकर यहां आया हूं।

विद्युतने परम प्रसन्नताके साथ कालिदासके हाथसे तीनों बक्स ले लिये और रोशनीमें लेजाकर देखने लगी कि मेरे लिये किसने क्या भेजा है। शिशिरने कालिदासको अन्दर बुलाया। कालिदासको अच्छी तरह बैठाकर शिशिर उपहारकी वस्तुओंको देखनेके लिये परम उत्सुकताके साथ विद्युतके कन्धेपर हाथ रखकर खड़ा होगया। सबसे ऊपर चन्दनकी एक सन्दूक थी। जिसके ऊपर सुनयनी देवीका नाम लिखा था। उसके नीचे चमड़ेका एक सूट केस था जिसके ऊपर संध्याका नाम लिखा था। सबसे नीचे मखमलका एक सन्दूक था जिसपर कालिदासका नाम लिखा था। विद्युत प्रसन्नचित्त बाक्सोंको खोलने लगी।

शिशिरने हंसकर कहा—तुमने तो शादी करना स्वीकार ही नहीं किया था, फिर क्यों खोलती हो। लौटा दो।

विद्युत चुपचाप आनन्दसे विह्वल होकर सन्दूक खोलने लगी। सबसे पहले उसने सुनयनी देवोका बाक्स खोला—उन्होंने भेजी थी, ढाकाकी नकासीदार चांदीकी सिन्दूर चुपड़ी, सोनेका एक आभूषण, थोड़ासा महावर और आशीर्वाद-सूचक दो शब्द—

कल्याणी,

यह पाणिग्रहणोत्सवका उपहार तुम्हारे सौभाग्य सिन्दूरको

उत्तरोत्तर ज्योतिपूर्ण करे और तुम्हें स्वामीकी प्रियतमा बनावे । यह आनन्द तुम दोनोंको सदा अक्षय रहे ।

तुम दोनोंकी शुभाकांक्षिणी माता—

"सुनयनी"

संध्याने भेजी थी, बढ़िया बनारसी साड़ी, जरीका काम किया एक जोड़ा जाकेट, हीरेके दो जोड़े ब्रेस्लेट, मोतीका एक जोड़ा हार, हीरेकी एक जोड़ी ईयरिङ्ग, और मीना करी एक जोड़ा ब्रूच, और एक पत्र ।

सखी विद्युत,

तुम्हारे सामने आते मुझे लज्जा लगती है, नहीं तो हृदयमें प्रबल कामना थी कि तुम्हारा अपने हाथों शृंगार करती । इस असीम आनन्दके समय तुम सहज उदारतासे मेरे सम्पूर्ण अपराध क्षमा कर दोगी, इसी आशासे यह तुच्छ प्रीति-उपहार तुम्हारे पास भेजती हूं । देवरजीसे कहना कि मेरी ओरसे तुम्हारा शृंगार कर देंगे ।

तुम लोगोंके आनन्दमें आनन्दिता—

"संध्या"

कालिदासके बक्समें शिशिरकी लिखी पुस्तकोंका एक सैट था जिनमें मोरक्को चमड़ेकी और मखमली जिल्द बंधी थी और उसके ऊपर सोनहले अक्षरोंमें विद्युतका नाम लिखा था ।

शिशिरने आनन्दित होकर कहा—मा, भाभी और कालिदास-की शुभ कामना छायाकी भांति हमलोगोंके चारों ओर घूमा

करती है। इन्हींकी कृपासे हमलोग संसार-यात्रामें परम सफलतापूर्वक चल सकेंगे।

विद्युत उठकर खड़ी हुई और शिशिर तथा कालिदासकी ओर देखने लगी। उस समय उसकी आंखोंसे आनन्द और प्रसन्नताके मोती अश्रुविन्दुके रूपमें झर रहे थे।

निर्मल आकाशसे चन्द्रमा अपनी शुभ्र ज्योत्स्नाकी वर्षा करके इन्हें आशीर्वाद दे रहा था।

हिन्दी-पुस्तक-मालाका पहला पुष्प

स्वाधीनताके सिद्धान्त

लेखक—आयर्लैंडके सत्याग्रही वीर

टेरेन्स मैक्स्विनी।

इसमें लेखकने स्वाधीनताके सच्चे सिद्धान्तोंका वर्णन किया है। स्वाधीनताका मूल क्या है, इङ्गलेण्डसे सम्बन्ध-विच्छेद होनेसे दोनों देशोंको क्या क्या लाभ हैं, सच्चा नैतिक बल क्या है, शत्रु कौन है और मित्र कौन है, शक्तिका असली रहस्य क्या है, आचार-व्यवहारमें सिद्धान्त किस प्रकार माने जाते हैं, दृढ़ भक्ति किसे कहते हैं, वीर नारियोंका धर्म क्या है, सम्राज्यवादमें कितनी बुराइयां भरी हुई हैं, सशस्त्र-प्रतिरोध उचित है या अनुचित, कानूनका सच्चा अर्थ क्या है, सशस्त्र प्रतिरोध किस समय करना चाहिये, आदि आदि विषयोंका वर्णन इस ग्रन्थमें बड़ी ओजस्विनी भाषामें किया गया है। हिन्दीके सभी समाचारपत्रोंने इस ग्रन्थकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है। पुस्तकके आरम्भमें ग्रन्थकारका सचित्र चरित्र भी दिया गया है। स्वतन्त्रता-प्रेमियोंको अवश्य इसे मंगाकर पढ़ना चाहिये ऐसे अमुल्य ग्रन्थका मूल्य भी सर्वसाधारणके सुभीतेके लिये केवल १) रखा गया है।

कर्म्मयोग

लेखक— बंगालके सच्चे कर्मयोगी

श्रीअश्विनीकुमार दत्त

लेखकने इस पुस्तकमें कर्मयोगके कठिन विषयको उदाहरणों द्वारा बड़ी ही सरलतासे समझाया है। निष्काम कर्मकी महिमा बतलाते हुए आपने सच्चे कर्मयोगीके लक्षणोंकी विशद रूपमें व्याख्या की है। आपका यह ग्रन्थ कैसा है इसके सम्बन्धमें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनकी मुखपत्रिका लिखती है :—

"श्री अश्विनीकुमार दत्तकी लेखनीका चमत्कार किसी सहृदय साहितज्ञसे छिपा नहीं है। दत्त महोदयने भक्तियोग, प्रेम और कर्मयोग जैसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ लिखकर संसार-संतप्त जीवोंको आध्यात्मिक सुशीतल छाया दान करके भारतवर्षको चिरवाधित किया है। इस पुस्तकमें आपने आदर्श कर्मभूमि, मोक्षसेतु, कर्मकेन्द्र, निष्काम कर्म, लोकसंग्रह, कर्मयोगीके लक्षण प्रभृति गहन विषयोंको बड़ी ही सरलता, सरसता, मनोरंजकता और विवेचना द्वारा अंकित किया है। पढ़ते पढ़ते चित्तको एक अपूर्व विश्रांतिका आनन्द मिलता है। किंकर्तव्यविमूढ़ भारतीय जनताको यह "कर्मयोग" नामक पुस्तक संजीवनी शक्तिका काम देगी, इसमें सन्देह नहीं। अनुवादक महोदयका प्रयास सफल और स्तुत्य है।" करीब १५० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य केवल ।॥)

हिन्दी-पुस्तक-मालाका तीसरा पुष्प

सरल गीता

लेखक-"भारतमित्र" सम्पादक

श्रीमान् पं० लक्ष्मणनारायण गर्दे

यह ग्रन्थरत्न श्रीमद्भगवद्गीतापर सरल व्याख्या है जिसे पढ़कर सर्वसाधारण भी लाभ उठा सकते हैं। इस पुस्तककी हिन्दीके सभी पत्रोंने प्रशंसा की है। इसके सम्बन्धमें *सम्मेलन-पत्रिका* लिखती है—

"श्रीयुत गर्देजीने "सरल गीता" लिखकर हिन्दी संसारका बड़ा उपकार किया है। यदि इसे आधुनिक टीकाओंमें, ज्ञानेश्वरी और गीता-रहस्यको छोड़कर, सर्वश्रेष्ठ कहें तो अत्युक्ति न होगी। मूल श्लोकोंका भावार्थ गर्देजीने निष्पक्षपात दृष्टिसे लिखा है। आपने ५० पृष्ठका जो मुखबन्ध लिखा है वह मनन करने योग्य है। इसमें गीताके अंगोपांगोंका बड़ा ही सजीव चित्र खींचा गया है। अंतका विस्तृत परिशिष्ट भी दार्शनिक युक्तियों, सामाजिक प्रश्नों और कर्मयोग शास्त्रके जटिल रहस्योंसे खाली नहीं है।

श्रीकृष्ण और अर्जुनका एक सुन्दर और रंगीन चित्र भी दिया गया है। पुस्तक सर्वप्रकारेण उपयोगी है और उपादेय है। प्रचार दृष्टिसे इस पुस्तकका मूल्य भी कम है।"

ऐसे अमूल्य ग्रन्थका मूल्य केवल १॥) सजिल्द १॥।=) पृष्ठ संख्या ४०० से अधिक।

हिन्दी-पुस्तक-मालाका चौथा पुष्प

मधुर मिलन

लेखक—द्वादश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके सभापति—

श्रीमान् पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी।

यह एक सामाजिक नाटक है। इसमें नाटककारने सभी सामाजिक कुरीतियोंका दिग्दर्शन करा दिया है। यह नाटक एकादश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलनके अवसरपर खेला भी गया था और स्वयं नाटककारने रोअक्कड़की भूमिका ली थी। इसपर "सम्मेलन-पत्रिका"ने निम्न लिखित टिप्पणी की है:—

"चतुर्वेदीजीसे हिन्दी संसार भलीभांति परिचित है। आप सरसहास्यके अवतार, सूझके उस्ताद और विशुद्ध हिन्दीके भक्त हैं। आपने यह सामाजिक नाटक लिखकर अपने लेखन-कौशलका अच्छा परिचय दिया है।...इसकी भाषा बोलचालकी ओर सरस है।.. मनोरञ्जनकी इसमें पर्याप्त सामग्री है।"

इस नाटकके सम्बन्धमें "माधुरी" लिखती है:—

'रचनाकी दृष्टिसे नाटक उत्तम है। अभिनयके समय दर्शकोंका मनोरञ्जन भी कर सकता है। इसमें हिन्दी-भाषा-भाषियोंके आदर्शकी रक्षा हुई है और कुछ हिन्दी नाट्यकारोंकी भांति बंगलाके जूठे टुकड़ोंकी ओर हाथ नहीं बढाया गया है। यह बड़ी अच्छी बात है।"

करीब १०० पृष्ठकी पुस्तकका मूल्य केवल ॥=)

कृष्णचरित्र

लें०—बङ्गभाषाके साहित्य-सम्राट् स्वर्गीय

बाबू बङ्किमचन्द्र चट्टोपाध्याय

भाषान्तरकार—प्रसिद्ध हास्यरसवेत्ता

पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

इस पुस्तकके आरम्भमें श्रीकृष्ण भगवानके चरित्रपर किये गये विदेशी विद्वानोंके आक्षेपोंका मुंहतोड़ उत्तर दिया गया है। इसके बाद ग्रन्थकारने अपनी विनोदपूर्ण भाषामें श्रीकृष्ण भगवानके चरित्रकी एक निष्पक्ष आलोचककी दृष्टिसे मीमांसा की है। इसमें लेखक कहांतक सफलप्रयत्न हुआ है यह पाठक स्वयं निश्चय कर सकते हैं किन्तु यह कहना अनुचित न होगा कि लेखकने इस पुस्तकके लिखनेमें बड़ा परिश्रम किया है। यद्यपि लेखक श्रीकृष्ण भगवानको ईश्वरका अवतार मानता है तथापि उसने उन्हें एक आदर्श पुरुष मानकर उनके चरित्रकी आलोचना की है। जैसे लेखकने इस ग्रन्थमें विनोदपूर्ण भाषाका प्रयोग किया है वैसे ही इसके भाषान्तरकार भी "हास्यरसावतार" ही मिल गये हैं। अतः ग्रन्थकी शोभा द्विगुणित हो गयी है। मूल्य भी सर्व साधारणके सुबीतेके लिये ५००से अधिक पृष्ठकी सजिल्द पुस्तकका केवल २॥) रखा गया है।

बाजोरिया-सस्ती-पुस्तकमाला

सरल-विज्ञान-सीरीज सं० १

सरल शरीर विज्ञान

कुछ वर्ष हुए कलकत्तेकी साहित्य-संवर्द्धिनी-समितिने सर्व साधारणको सुलभ मूल्यमें उपयोगी पुस्तकें प्राप्त करनेका सुअवसर प्रदान किया था। उसकी ओरसे चार पांच अच्छी अच्छी पुस्तकें लागतमात्र मूल्यमें निकल भी चुकी थीं और उनसे सर्वसाधारणको लाभ भी पहुंचा था। किन्तु किसी कारणवश उस समितिका कार्य शिथिल पड़ गया था। अब फिर उसके सुयोग्य मन्त्री श्रीयुत बाबू नारायणदासजी बाजोरिया महोदयने उसके कार्यको पुनर्जीवित करनेका शुभ संकल्प किया है और आरम्भमें उस समितिकी ओरसे सरल-विज्ञान-सीरीज नामकी पुस्तकमाला निकाली जायगी। वर्तमान पुस्तक उस सीरीजकी पहली संख्या है। इसमें शरीर विज्ञानके विषयको बड़ी ही सरल भाषामें समझाया गया है। बालक और वृद्ध सभी इससे लाभ उठा सकते हैं। पुस्तक प्रायः छपकर तैयार है। १५०से अधिक पृष्ठकी बहुतसे सुन्दर चित्रोंसे सुशोभित सजिल्द पुस्तकका मूल्य करीब ॥)रहेगा। इस सीरीजकी अन्य पुस्तकें भी शीघ्र ही प्रकाशित होंगी।

हिन्दी-पुस्तक-मालाका आठवां पुष्प
आत्मोपदेश
मनुष्यके कर्तव्याकर्त्तव्यको बतलानेवाली,
एक प्रसिद्ध दार्शनिककी लिखी हुई,
आत्माको सच्चे उपदेश देनेवाली पुस्तक
बढ़िया कागजपर छप रही है।
मूल्य केवल ॥=)